पाओलो फ्रेरे

और

भारतीय शिक्षा व्यवस्था

भाग दो – शिक्षाविदों से बातचीत

डॉ. अमृत पाल सिंह

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Dr. Amrit Pal Singh 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-6744-862-0

Cover Design: Aafiya Saifi
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: November 2026

पुण्यस्मृत पिताजी
‘सरदार धर्म सिंह’ जी
को समर्पित

प्रस्तावना

पाओलो फ्रेरे को शैक्षिक प्रयोगों के माध्यम से सामाजिक बदलाव लाने वाले समाज-दार्शनिक शैक्षिक चिंतक के रूप में जाना जाता है। उनके द्वारा रचित शास्त्रीय पुस्तक – 'उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र' शिक्षा जगत में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। आज भी इस पुस्तक में वर्णित अवधारणाएँ – 'मानुषीकरण', 'शिक्षा की बैंकिंग अवधारणा', 'विवेकीकरण', 'पालतूकरण', 'आलोचनात्मक चेतना', 'संवादात्मक शिक्षा', 'खामोशी की संस्कृति', इत्यादि शिक्षा चिंतकों को शिक्षा में नवाचारों हेतु अभिप्रेरित करती हैं। इन्हीं से अभिप्रेरित होकर लेखक – डॉ. अमृत पाल सिंह ने इस 'बोलती पुस्तक' की रचना का महती कार्य किया है। वे अपनी पहली पुस्तक – 'पाओलो फ्रेरे और भारतीय शिक्षा (भाग – एक) – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन' – की रचना के पश्चात् इस पुस्तक की रचना कर, पाओलो फ्रेरे के शैक्षिक विचारों से उपजी समझ के आलोक में, समकालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था की समस्याओं को शिक्षाविदों से बातचीत कर, सभी के सामने रखने में सफल हुए हैं। यह पुस्तक इस अर्थ में मानस पटल पर अपनी छाप छोड़ने में कामयाब होती है कि संवाद भरे माहौल में बातचीत के माध्यम से भी पाओलो फ्रेरे द्वारा वर्णित समाज-दार्शनिक गूढ़ अवधारणाओं को समझा जा सकता है; और भारतीय शिक्षा व्यवस्था से जुड़े जटिल मुद्दों को मिलकर सुलझाने का प्रयास किया जा सकता है।

इस पुस्तक में लेखक द्वारा साक्षात्कार प्रश्नों की रचना बहुत सोच-समझकर की गई है। साक्षात्कारदाताओं से बातचीत के क्रम में लेखक ने अग्रलिखित प्रश्नों का तथ्यपरक विवेचन प्राप्त करने का श्रम किया है –

- पाओलो फ्रेरे के शैक्षिक विचारों के बनने के पीछे उनकी तत्कालीन परिस्थितियाँ किस हद तक ज़िम्मेदार थीं?,

- समकालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन्हें कैसे प्राप्त किया जा सकता है?,
- पूँजीवादी सोच का शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?,
- क्या भारतीय शिक्षा व्यवस्था उत्पीड़न की संरचना को बढ़ावा दे रही है? या बच्चों की जिज्ञासा को बाँध रही है? या समाज में साकारात्मक बदलाव ला रही है?,
- क्या शिक्षा के ज़रिए विवेक जागृत किया जा सकता है?,
- क्या भारत में शिक्षा में वित्त का आबंटन ठीक प्रकार से हो रहा है?,
- भारत में शिक्षा वर्गीकरण को बढ़ावा दे रही है या समानता को?,
- भारत में शिक्षा और राजनीति का क्या सम्बन्ध है?,
- क्या भारत में सभी तक शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित करने में विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रम सफल हो रहे हैं?,
- गरीबी और शिक्षा हेतु अवसरों के बीच क्या सम्बन्ध है?, इत्यादि।

इस पुस्तक को पढ़कर एक ऐसे सफ़र का अहसास होता है, जिसमें लेखक सह-यात्रियों के साथ बातचीत करते हुए और अनुभवों को साझा करते हुए अनसुलझे मुद्दों पर चर्चा कर रहा हो; जिसमें सभी को अपनी तार्किक बात कहने का पूरा अधिकार हो। पुस्तक में वर्णित गूढ़ समस्याओं के चिंतन से स्पष्ट होता है कि लेखक और साक्षात्कारदाता, सभी आपसी समझ का निर्माण कर भारतीय शिक्षा से संबंधित समस्याओं का समाधान निकालने हेतु सतत-सहभागी प्रयास कर रहे हैं: और विशेष बात यह है कि इस समस्या समाधान में - न कोई छोटा है और न कोई बड़ा।

कुछ विशेष कारणों से इन दिनों, अनुसंधानों में; विशेषकर शिक्षा में किए जा रहे अनुसंधानों में 'गुणात्मक उपकरणों' की बजाय 'सांख्यिकीय उपकरणों' के प्रयोग की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इस पुस्तक को पढ़कर मुझे यह विश्वास हो गया है कि शैक्षिक अनुसंधानों में 'गुणात्मक उपकरणों' का महत्त्व सदैव बना रहेगा। वस्तुत:, इस पुस्तक से 'गुणात्मक अनुसंधानों' में

'साक्षात्कार' को एक उपकरण के रूप में प्रयोग करने की प्रवृत्ति को बल मिलेगा।

इस बोलती पुस्तक को पढ़कर ऐसा विश्वास जगता है कि यह पुस्तक नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों, शिक्षकों, शोधार्थियों, इत्यादि को यह सोचने को बाध्य करेगी कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था में गुणात्मक सुधार किस प्रकार लाया जा सकता है?, ताकि शिक्षा से ऐसे जागरुक ज्ञानवान समाज का निर्माण करना संभव हो सके, जिसमें व्यक्तिगत विभिन्नता का पर्याप्त स्थान हो।

डॉ. नगेन्द्र सिंह
आचार्य (सेवानिवृत्त)
व पूर्व अधिष्ठाता (शोध), क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
(राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्)
अजमेर, राजस्थान
व पूर्व अधिष्ठाता (शिक्षाशास्त्र)
महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय
अजमेर, राजस्थान

आमुख

पाओलो फ्रेरे जीवनभर शिक्षा व्यवस्था से जुड़े जटिल प्रश्नों के सम्यक उत्तर खोजते रहे, ताकि समाज में कहीं गहरे घर कर गई उत्पीड़न की संरचना को बदला जा सके। कभी वे संवाद-प्रक्रिया के माध्यम से 'खामोशी की संस्कृति' को बदलने की बात कहते हैं, तो कभी वे सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक जटिलताओं के अंतर्गत शिक्षा को विद्यार्थियों तक पहुँचाने के रास्ते तलाश करते हैं। उनकी पुस्तक 'उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र' को इसी संदर्भ में समझा जा सकता है। पाओलो फ्रेरे की दृष्टि में 'व्यक्तिपरक चिंतन' के बजाय 'वस्तुपरक चिंतन' को अपनाकर ही आलोचनात्मक रूप से चेतन हुआ जा सकता है; और शिक्षा के सम्यक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। इसी से ही जटिल सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक परिस्थितियों को बदला जा सकना संभव हो सकता है। पाओलो फ्रेरे का अपना जीवन भी शोषणकारी परिस्थितियों से अछूता नहीं रहा। उन्होंने बचपन में ही सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक शोषण के विभिन्न रूपों को महसूस किया था। इससे मुक्ति को उन्होंने 'संवादात्मक शिक्षा' या 'समस्या-उठाऊ शिक्षा' के रूप में देखा।

भारत के संदर्भ में भी देखा जा सकता है कि शिक्षा संरचना में शोषण के विभिन्न रूपों ने जगह बना ली है। कहीं बच्चे गरीबी और अपनी घरेलू समस्याओं के कारण से बीच में ही विद्यालय छोड़ने को बाध्य हो रहे हैं, तो कहीं संवैधानिक व कानूनी प्रावधानों से बचने के रास्ते तलाश कर लिए गए हैं। शिक्षा में वित्त का कम आबंटन, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, और शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों का सामाजिक लक्ष्यों के अनुरूप न होना चिंता का विषय बनता जा रहा है। लाभ कमाने की पूँजीवादी सोच ने वर्तमान भारतीय शैक्षिक परिस्थितियों को और अधिक जटिल बना दिया है। इन्हीं भारतीय शिक्षा व्यवस्था सम्बन्धी जटिल परिस्थितियों की बेहतर समझ प्राप्त करने हेतु

शोधार्थी-लेखक ने अपने पीएच.डी. (शिक्षाशास्त्र) शोध कार्य के दौरान शोध उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु 19 संरचित साक्षात्कार प्रश्नों के माध्यम से स्नातक व परास्नातक शिक्षा से जुड़े 15 शिक्षाविदों से बातचीत की। इन बातचीतों अथवा साक्षात्कारों में शोधार्थी-लेखक ने यह महसूस किया कि सभी शिक्षाविद, वर्तमान भारतीय शैक्षिक परिस्थितियों के प्रति किसी-न-किसी रूप में चिंतित हैं; व बदलाव के प्रति आशान्वित भी हैं। शिक्षाविदों ने साक्षात्कारों में अपनी अग्रवर्णित चिंताएँ अभिव्यक्त कीं – भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों का सम्यक न होना, शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने की प्रचलित पद्धतियों में नवाचारों का अभाव होना, गरीब बच्चों की शिक्षा हेतु सांस्कृतिक प्रयासों में कमी होना, शिक्षा में वित्त के आबंटन का पर्याप्त रूप से उत्तरोत्तर न बढ़ पाना, शिक्षा के मार्ग में भाषा को एक चुनौती बना देना, शिक्षकों व शिक्षाविदों का भी प्रबन्धकों द्वारा उत्पीड़न होना, बदलाव के प्रति विद्यार्थियों और शिक्षकों में डर का होना, शिक्षा की जगह साक्षरता और प्रमाणपत्र प्राप्ति पर ज़ोर होना, शिक्षा का राजनीति द्वारा प्रभावित होना, शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों का सम्यक न होना, 'प्रश्न करने की संस्कृति' की बजाय 'खामोशी की संस्कृति' का बढ़ते जाना, इत्यादि।

उपर्युक्त बिन्दुओं के संदर्भ में शोधार्थी-लेखक ने शिक्षाविदों से गहन बातचीत की, जो इस शैक्षणिक-साक्षात्कार पुस्तक के रूप में प्रस्तुत है। इन बातचीतों अथवा साक्षात्कारों में वर्णित विभिन्न बिन्दुओं व तथ्यों के माध्यम से भारतीय शिक्षा से जुड़े नीति-निर्माता, शिक्षक, शिक्षाविद, विद्यार्थी, शोधक, इत्यादि पाओलो फ्रेरे के शैक्षिक चिंतन के अंतर्गत भारतीय शिक्षा व्यवस्था की सम्यक समझ प्राप्त कर बदलाव के रास्ते तलाश कर सकते हैं।

डॉ. अमृत पाल सिंह
लेखक

आभार

सर्वप्रथम, मैं श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी का स्मरण कर, वाहेगुरु जी को नमन करता हूँ। मैं हृदय से प्रो. (डॉ.) चाँद किरण सलूजा जी और सह-आचार्या, डॉ. पूजा गुप्ता जी का आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे साक्षात्कार प्रक्रिया की जटिलताओं को समझने में, अपना समय व अनुभव प्रदान किया। यही कारण है कि मैं अपने पीएच.डी. (शिक्षाशास्त्र) शोध कार्य पर आधारित इस शैक्षणिक-साक्षात्कार पुस्तक की रचना करने में समर्थ हो सका हूँ।

मैं विभिन्न विश्वविद्यालयों के उन सभी शिक्षाविदों का भी विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे साक्षात्कारों को पूरा करने हेतु अप्रत्यक्ष मनोबल प्रदान किया। मैं विभिन्न विश्वविद्यालयों के उन सभी आचार्यों व पुस्तकालयाध्यक्षों का भी ऋणी रहूँगा, जिन्होंने मुझे साक्षात्कार प्रक्रिया को पूरा करने हेतु समय-समय पर मार्गदर्शन प्रदान किया। मैं उन सभी शिक्षकों-शिक्षाविदों के प्रति भी नतमस्तक हूँ, जिन्होंने साक्षात्कार प्रक्रिया के दौरान व बाद में समय न रहते हुए भी मेरे लिए समय निकाला; और मेरे द्वारा पूर्वनियोजित और जिज्ञासावश पूछे जा रहे सभी प्रश्नों को सहज भाव से लेकर, मुझे यह मौका दिया कि मैं उनके ज्ञान से अपनी समझ का विस्तार कर सकूँ। मैं आप सभी शिक्षकों-शिक्षाविदों का आभारी हूँ।

मैं अपनी पहली कक्षा की अध्यापिका सरदारनी प्रकाश कौर जी के प्रति भी कृतज्ञ हूँ, जिनके स्नेह, भरोसे, और प्रोत्साहन ने मेरी नींव मजबूत की।

मैं अपने परिवार को बधाई देता हूँ; विशेषकर अपनी माता जी को और अपनी अर्धांगिनी को। इस पुस्तक रचना में उनका अकथनीय श्रम व समय भी सन्निहित है। मेरे बड़े भाई का वरदहस्त और विश्वास भी लेखन यात्रा में निरंतर मेरे साथ रहा है।

डॉ. अमृत पाल सिंह
लेखक

संक्षेपाक्षर

%	प्रतिशत
आईआईटी	इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलोजी
आईएएस	इंडियन एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस
आईक्यू	इंटेलिजेंस कोशंट
आईपीएस	इंडियन पुलिस सर्विस
आरआईई	रीज़नल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन
आरटीई	राइट टू एजुकेशन
ईक्यू	इमोशनल इंटेलिजेंस
ईडब्ल्यूएस	एकोनोमिकल वीकर सेक्शन
एनजीओ	नॉन गवर्नमेंट ओर्गेनाज़ेशन
एनसीईआरटी	नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रीसर्च एण्ड ट्रेनिंग
एनसीएफ	नेशनल करीकुलम फ्रेमवर्क
एनसीटीई	नेशनल काउंसिल फॉर टीचर एजुकेशन
एम.ए.	मास्टर ऑफ आर्ट्स
एम.एड.	मास्टर ऑफ एजुकेशन
एम.बी.ए.	मास्टर ऑफ बिज़नस एडमिनिस्ट्रेशन
एसक्यू	सोशल इंटेलिजेंस
एसटी	शेड्यूल्ड ट्राइब
एसटीईएम	साइंस, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग, एण्ड मेडिकल
एसपी	सुप्रीटेंडेंट ऑफ पुलिस
एससी	शेड्यूल्ड कास्ट

ओबीसी	अदर बेकवार्ड क्लास
जीएसटी	गूड्स एण्ड सर्विस टेक्स
जीडीपी	ग्रोस डोमेस्टिक प्रोडक्ट
टीआरपी	टारगेट रेटिंग पॉइंट
टीईटी	टीचर एलीजीबिलिटी टेस्ट
टीजीटी	ट्रेंड ग्रेजुएट टीचर
डीटीसी	दिल्ली ट्रांसपोर्ट कोरपोरेशन
डीपीईपी	डिस्ट्रिक्ट प्राइमेरी एजुकेशन प्रोग्राम
थ्री आर्स	रीडिंग, राइटिंग, एण्ड अर्थमेटिक
पीएच.डी.	डॉक्टर ऑफ फ़िलोसोफ़ी
पीजी	पोस्ट ग्रेजुएट
पीजीटी	पोस्ट ग्रेजुएट टीचर
पीटीएम	पेरेंट्स टीचर्स एसोसिएशन
बी.ए.	बेचलर ऑफ आर्ट्स
बी.ए.बी.एड.	बेचलर ऑफ आर्ट्स एण्ड बेचलर ऑफ एजुकेशन
बी.एड.	बेचलर ऑफ एजुकेशन
यूनेस्को	यूनाइटेड नेशंस एजुकेशनल, साइंटिफ़िक एण्ड कल्चरल ओर्गेनाज़ेशन
सीआईई	सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन
सीबीएसई	सेंट्रल बोर्ड ऑफ सेकेंडेरी एजुकेशन
सीसीई	कंटिन्यूयस एण्ड कोम्प्रीहेंसिव ईवेलुएशन

विषयवस्तु सूची

1. अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची 1
2. प्रो. (डॉ.) चाँद किरण सलूजा का साक्षात्कार 5
3. प्रो. (डॉ.) नगेन्द्र सिंह का साक्षात्कार.....35
4. प्रो. (डॉ.) आयुष्मान गोस्वामी का साक्षात्कार.....51
5. प्रो. (डॉ.) उषा शर्मा का साक्षात्कार.....75
6. प्रो. (डॉ.) सत्येंद्र गुप्ता का साक्षात्कार.....101
7. सहायक आचार्य डॉ. ऋषभ कुमार मिश्र का साक्षात्कार.....113
8. सह-आचार्या डॉ. मनीषा मिनोचा का साक्षात्कार 125
9. सह-आचार्य डॉ. अखा कैहरी माओ का साक्षात्कार.....133
10. सहायक आचार्य डॉ. मोहम्मद तारिक़ का साक्षात्कार.....145
11. सहायक आचार्य डॉ. अजय समीर कुजुर का साक्षात्कार 153
12. प्राचार्य डॉ. हरिओम भारद्वाज का साक्षात्कार 163
13. सहायक आचार्य डॉ. मुकेश कुमार परिहार का साक्षात्कार.....171
14. सहायक आचार्य श्री अभिनव त्यागी का साक्षात्कार 179
15. सहायक आचार्या सुश्री कंचन खटरेजा का साक्षात्कार.....187
16. सहायक आचार्य श्री सुशील कुमार का साक्षात्कार 195

संदर्भ ग्रंथ-सूची 203

परिशिष्ट 211

अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची

'अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची'[1] के प्रश्न

अधोरचित प्रश्नावली का निर्माण स्नातक व परास्नातक शिक्षक-शिक्षा से जुड़े विभिन्न शिक्षाविदों[2] से बातचीत के ज़रिए समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य में पाओलो फ़्रेरे के शैक्षिक विचारों पर सम्यक दृष्टि प्राप्त करने हेतु किया गया था।

1. फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

2. यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

---

[1] इस 'अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची' रूपी शोध उपकरण की 'वैधता' वृद्धि हेतु उपकरण की 'सोद्देश्य अथवा उद्देश्यपरक प्रतिचयन विधि' के आधार पर चयनित 'स्नातक व परास्नातक शिक्षक-शिक्षा' से जुड़े 30 शिक्षाविदों से जाँच करवाई गई। जाँच हेतु निर्धारित प्रारूप में शिक्षाविदों को भेजी गई प्रश्नावली के लिए परिशिष्ट 1 देखिए। इस 'अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची' में 18 पूर्वनिर्धारित प्रश्नों के अतिरिक्त शोध की गुणात्मकता और समग्रता हेतु और शिक्षाविदों से बातचीत के माध्यम से प्राप्त सुझावों के फलस्वरूप एक अन्य 19वां प्रश्न बाद में जोड़ा गया।

[2] शोधार्थी-लेखक द्वारा अपने पीएच.डी. (शिक्षाशास्त्र) शोध कार्य के दौरान ही इन शिक्षाविदों से बातचीत की गई थी। इसलिए, इस पुस्तक में इन शिक्षाविदों के नाम के साथ उनका तत्कालीन पद, पद की स्थिति, कार्य, और कार्यस्थल, इत्यादि को ही लिखा गया है। वर्तमान समय में इसमें भिन्नता हो सकती है।

3. फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

4. फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

5. भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

6. भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

7. शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

8. पाओलो फ़्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

9. फ़्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

10. शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

11. कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

12. फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

13. यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

14. फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

15. आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

16. फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

17. ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

18. भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

19. यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

प्रो. (डॉ.) चाँद किरण सलूजा का साक्षात्कार

1) साक्षात्कारदाता: डॉ. चाँद किरण सलूजा
आचार्य (सेवानिवृत्त), शिक्षा विभाग (केन्द्रीय शिक्षा संस्थान), दिल्ली विश्वविद्यालय
निदेशक (शैक्षणिक) व संरक्षक, संस्कृत संवर्धन प्रतिष्ठान, दिल्ली
सदस्य, आधार पत्र विकास हेतु 'राष्ट्रीय फ़ोकस समूह 2021 (शिक्षक-शिक्षा)'

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: देखिए - यह बात बहुत साफ़ है कि शिक्षा अपने आप में एक सामाजिक संस्था है; सामाजिक विषय है। जो भी स्थितियाँ-परिस्थितियाँ होती हैं, वह शिक्षा को प्रभावित करती हैं। ब्राज़ील एक अविकसित देश के रूप में रहा था; गरीबी अधिक थी; आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी; और जो भी हम वहाँ के चित्र देखते हैं, उस समय के, जो दिखाई देते हैं, वे कोई बहुत प्रभावी दिखाई नहीं देते हैं। तो, इसका अर्थ साफ़ निकलता है कि उसका एक बहुत बड़ा पहलू - आर्थिक था; और एक बात और कि उपनिवेशी देश होने के नाते वहाँ की संस्कृति, भाषा, आदि सारे प्रभावित होंगे ही। परिणाम यह निकलता है कि ब्राज़ील जिनका भी उपनिवेश था, वे जो ब्राज़ील में अपने अनुसार कराना चाहते हैं, वे कराते ही हैं; जैसे - भारत में अँग्रेजी का प्रश्न स्वाभाविक है। ऐसे में फिर होगा यही कि बच्चे सुनते थे; और अध्यापक बोलते थे। बच्चे ग्रहता बन जाएँगे, शिक्षक ज्ञानदाता बन जाएँगे। यह संभव था। इसलिए, अध्यापक सब कुछ जानता है और बच्चे कुछ नहीं जानते, इस सोच के विपरीत सोचने का फ़्रेरे ने प्रयास किया। उपनिवेशी परिस्थितियों ने ब्राज़ील की संस्कृति, वहाँ की भाषा, बच्चों की जो बोली थी, चाहे वह जिस भी रूप में रही हो, उसे समाप्त किया होगा। फ़्रेरे ने, संभवत: इन परिस्थितियों को महसूस किया; और अपने चिंतन को एक

रूप दिया। हालाँकि, जब इसके बाद उनको अवसर मिला, तो वह इसका उपयोग बहुत अधिक कर नहीं पाए। सिद्धांत तो दे पाए, पर बारीकता नहीं ला पाए। अत:, एक उपनिवेशी राज्य के लिए आर्थिक परिस्थितियाँ ठीक नहीं थीं; सामाजिकता नहीं थी; समाज में एकता की संस्कृति नहीं थी; गरीबी अधिक हो गई थी; भुखमरी अधिक हो गई थी, तो इस सभी का प्रभाव फ्रेरे पर पड़ा। उन्हें लगा कि शिक्षा इन परिस्थितियों को बदलने के लिए एक सशक्त साधन का रूप होनी चाहिए।

2) प्रश्न: यदि, फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: देखिए - शिक्षा का हम कोई भी उद्देश्य लें, उसके प्रमुख उद्देश्य बच्चे की अभिव्यक्ति क्षमता में निखार, समाज में आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र जीवन जी सकना, किसी के आगे बच्चे को हाथ न फैलाना पड़े, समाज से भूख को मिटाने का प्रयास करना, इत्यादि होने चाहिए। यानि कि हम कितना भी आदर्शवादी रूप में कहें कि 'एजुकेशन इज़ नॉट अरनिंग ब्रेड एण्ड बटर', मैं इसे स्वीकार नहीं करता हूँ। यह ठीक है कि शिक्षा उस रूप में नहीं दी गई कि हम सारी चीज़ें इकट्ठी करने लग जाएँ; लेकिन हम केवल समन्वयात्मक रूप से ही इस बात पर चर्चा करते रहे हैं कि शिक्षा का अर्थ चहुमुखी विकास है। हमने असल में, इस बात पर कभी भी व्यवहारिक रूप से ध्यान नहीं दिया है। तो, उस दृष्टि से मुझे लगता है कि शिक्षा के साथ रोज़गार का प्रश्न काफ़ी अच्छी तरह से जुड़ा हुआ है। शिक्षा से व्यक्ति को रोटी प्राप्त होनी चाहिए। व्यक्ति, चूँकि एक मनुष्य है, तो मनुष्य होने के नाते उसके भीतर जो भावनाएँ हैं, वह उन्हें भाषा की दृष्टि से अभिव्यक्त करने के योग्य बने। उसकी जो ऊर्जा है, उस ऊर्जा को सृजनात्मक रूप में ढाला जा सके। वह अपने समाज में हस्तक्षेप करने योग्य बन सके। वह श्रोता न होकर वक्ता बन सके। अत:, व्यक्ति के भीतर की ऊर्जा को आयाम देने के लिए शिक्षा दी जानी चाहिए। तभी, शिक्षा अपने आप में संपूर्णता की ओर जा सकती है; और उसके लिए

धन को छोड़ा नहीं जा सकता। आर्थिक विकास भी व्यक्ति के लिए अनिवार्य है।

अब इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जहाँ तक पद्धति की बात है, तो स्वाभाविक है - आर्थिक विकास प्रश्न हो या न हो, कोई भी हो, किसी भी वस्तु के सीखने का आधार अनुभवों पर आश्रित होता है। इसलिए, कार्य करना आवश्यक है। कार्य करने का अर्थ मैं उस तरह से नहीं कह रहा हूँ, जिस तरह से लोग कह देते हैं - मज़दूरी करना। मैं कार्य करने को मज़दूरी नहीं समझता हूँ। गाँधी जी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को भी शिक्षा में इसलिए पीछे कर दिया गया, क्योंकि कुछ लोग कहते हैं कि ये विचार व्यक्तियों को मज़दूर बना रहे हैं। मज़दूरी क्या होती है? कार्य करते हुए उसके कई रूप हो सकते हैं। क्या बागवानी नहीं कराई जा सकती है? क्या कपड़े नहीं सिलवाएँ? यानि, क्या इस प्रकार के कौशल नहीं दिए जा सकते हैं? तो, हाथ का काम देना ज़रूरी है। इसलिए, मैंने कहा कि अंततः शिक्षा के ज़रिए व्यक्ति को रोज़गार के लिए, उसकी आजीविका के लिए तैयार करना ही शिक्षा है। शिक्षा के अर्थ में उसके दो रूप सन्निहित हैं - उसका सैद्धांतिक पक्ष और उसका व्यवहारिक पक्ष। दोनों में समन्वय होना ज़रूरी है। आज हमारे समाज की समस्या यही है - हमने बच्चों के संदर्भ में केवल सिद्धांतों का प्रश्न उठाया है; और वे सिद्धांत व्यवहार में आ सकते हैं या नहीं, हमने उसे नहीं बताया। बहुत से भाषा पढ़ाने वाले अध्यापक स्वयं इतना अद्भुत आचरण करते हैं; वाक्यों की संरचना, उनकी ठीक नहीं है; और भाषा के वह विषय विशेषज्ञ माने जाते हैं। यह कैसे स्वीकार किया जाए? इतनी भाषा तो बच्चा सीखकर ही आता है, अगर वह स्नातक या कोई भी श्रेणी कर रहा है। तो, इसका अर्थ है कि उसका जो भाषाई ज्ञान, समाज से उसने पाया है, जो उसने अपने अनुभवों से पाया है, वह उस भाषा का मानक रूप स्वयं बना सके; और भाषा सम्बन्धी जितने भी कार्य हैं, वह उनको करने के योग्य हो जाए। आज का हमारा विद्यार्थी, एक आवेदन पत्र लिखने के लिए भी तैयार नहीं हो पाता है। अँग्रेजी न पढ़कर भी, वह उसी में लिखना चाहता है; कारण - अँग्रेजी बोलने वाले कहीं-न-कहीं उसे व्यवहारिकता की ओर मोड़ देते हैं, लेकिन वह उसकी अपनी भाषा नहीं है, इसलिए वह इसमें सफ़ल नहीं हो पाता।

3) प्रश्न: फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: मैं तो बहुत स्पष्ट हूँ। मैंने भारतीय भी देख लिए, विदेशी भी देख लिए। सभी की मूल भावना समान है। हर कोई कहता है कि 'एजुकेशन' का अर्थ है - भीतर की ऊर्जा को बाहर लाना; 'एजुकेशन' में 'ई' और 'ड्यूको' यही तो कहते हैं; और भारतीय सिद्धांतों को देखें, तो उसमें सदैव कहा गया है कि व्यक्ति शक्ति का पुंज है। ईशोपनिषद् में एक बड़ा मज़ेदार कथन आता है –

"हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितम् मुखम्।
पूषन् तत् सत्यधर्माय दृष्टये त्वम् अपावृणु"

यानि कि सुनहरे पात्र से सत्य का मुख ढका हुआ है। हे! सूर्य, उसे हटाओ, ताकि मैं सत्य तत्त्व को देख सकूँ। उपनिषदों में पंचकोशी विकास की चर्चा है –

अंडमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष,
विज्ञानमय कोष, व आनंदमय कोष

कोष का अर्थ है – ढँका हुआ। अंडमय कोष का अर्थ है - पहला सोपान है - शरीर का विकास करना। दूसरा सोपान है - शरीर व्यर्थ है, यदि उसमें प्राण तत्त्व नहीं है, तो प्राणायाम योग प्राणी तत्त्व के लिए आया। यह दोनों व्यर्थ हो जाएँगे, यदि मन नहीं है, चिंतन नहीं है। इसलिए, मनोमय कोष आता है। यह तीनों व्यर्थ हो जाएँगे, यदि तर्क की शक्ति नहीं है। इसलिए, विज्ञानमय कोष आता है। उपनिषदों में, शिक्षा वर्ग में यह बातें आई हैं, जिसका अर्थ है - व्यक्तित्व का विकास; और व्यक्तित्व विकास इसलिए कहा गया है, ताकि व्यक्ति व्यक्त कर सकें; अब चाहें, कार्य के द्वारा करें या भाषा के द्वारा करें। दुनिया का कौन-सा ऐसा राष्ट्र है, जो बच्चे के व्यक्तित्व के विकास की चर्चा नहीं करता?, जो सैद्धांतिक तौर पर स्वीकार नहीं करता है कि बच्चे की क्षमताओं की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए?, जो कहता है कि बच्चे के अनुभवों पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए?, जो पढ़े-लिखे व्यक्तियों को जो

तंगियाँ हो सकती हैं, उन्हें या जो नौकरी के लिए उनकी शिक्षा को नहीं देख पाता है?, जो बड़ा होने पर व्यक्ति को समाज में जो कुछ भी गलत हो रहा हो, उसमें हस्तक्षेप करने के लिए उसे योग्य न बनाए?, जो उसे कहता है कि उसे अपनी मातृभाषा पर अधिकार नहीं है?, जो कहता है कि इंसान बनाना प्रमुख नहीं है?; और 'यूनेस्को' के बनने के बाद, तो पूरी दुनिया में शिक्षा की एक ही पद्धति का रूप सोचा जा रहा है; और वह पद्धति है - संवाद की, बातचीत की। फ़्रेरे ने तो उसे ही कहा है।

'इट्स वेरी इंटरेस्टिंग। 'बाई चांस' पाठ योजना बनाते समय पूर्व ज्ञान के बारे में गलत पढ़ा दिया जाता है। पूर्व ज्ञान किसे कहते हैं? पूर्व ज्ञान का अर्थ ले लिया जाता है कि वह क्या-क्या जानता है। वास्तव में, अगर मुझे गुणा करना सिखाना है, तो मुझे जानना चाहिए कि गुणा तब तक नहीं हो सकती, जब तक विद्यार्थी सब संख्या से परिचित नहीं हो। उसे यदि, जमा करना नहीं आता है, तो गुणा करना नहीं सीख सकता है। यानि, गुणा सिखाने के लिए संख्या का ज्ञान और जमा करना आना चाहिए; इसी प्रकार, भाग करने के लिए घटा करना। यह पूर्व ज्ञान है। इसे हम अभी तक नहीं सिखा पाए। इसके लिए बार-बार पूछना, प्रश्न करना आवश्यक है। मैं अगर यह न जानूँ, अगर आपसे पूछूँ नहीं कि आप क्या चाहते हैं?, आप किस रूप में यह प्रश्न मुझसे पूछ रहे हैं?, तो मुझे क्या पता लगेगा? आपने प्रश्न किया, तो मुझे लगा कि आप यह जानना चाहते हैं; तो मैंने आपको कहना शुरू कर दिया। हो सकता है कि कई बार बातों पर आपकी असहमति भी होती होगी। स्वाभाविक भी है। होनी भी चाहिए। असहमति का कारण यह नहीं है कि आप उसे स्वीकार नहीं कर पा रहे, बल्कि असहमति का कारण यह है कि वह अनुभव आपने अभी तक नहीं पाए। मैंने वह अनुभव प्राप्त कर लिए हैं। शिक्षा की प्रक्रिया ऐसे ही चलती है; और जैसे पता लगेगा कि आप उस स्तर पर पहुँच गए हैं, तो आप उसे स्वीकार करने के योग्य हो जाएँगे। एक नहीं, मेरे पास ऐसे हज़ारों उदाहरण हैं। आप जिस संस्था में रहे हैं, वहाँ मेरे कमरे में 'प्लाईवुड' का 'पार्टीशन' था, विभाजन था। अगर, आपने ध्यान दिया हो, तो मेरे कमरे में इधर गुसलखाना बना था, इधर 'वॉशरूम' था; और इधर कमरा था। बीच में एक-आधी दीवार इसलिए दिखती नहीं थी कि उस पर वही रंग किया हुआ

था। मैं कई बार विद्यार्थियों से पूछता था कि अनुभव करो कि इसके पीछे क्या है? कल्पना करो कि उसमें क्या-क्या होगा? अब वह कई बातें बताते थे। वह कहते थे कि यह सोने के लिए हो सकता है। कुछ सोचते थे कि शायद यह 'स्टोर रूम' होगा। पता नहीं क्या-क्या बातें कहते थे? तो, वे इस तरह की कल्पनाएँ करते थे। इसका अर्थ है - जब तक पता नहीं है, तब तक वह यह बातें कहते। जैसे ही पता लग जाएगा, उनका पूरा सोचने का ढंग ही बदल जाएगा। यह अनुभव सिखाते हैं। इसलिए, अनुभवों को महत्त्व दिया गया है। इसलिए, शिक्षा के लिए कहा गया है - अनुभवों का आदान-प्रदान और 'रिकंस्ट्रक्शन ऑफ एक्सपीरियंस'। कई बार लोग अद्भुत बातें कह देते हैं कि उस समय वह था; यह नहीं था, पर ऐसा कहते हुए यह नहीं सोचते कि अरे! भैया, उस समय यह परिस्थितियाँ ही नहीं थीं, तो कैसे होगा? अब मुख्य बात है - आज जितना हो चुका है, उसके आगे जाएँ, लेकिन आगे जाने का अर्थ उसे बढ़ाना नहीं है; वापस लाना भी हो सकता है, लेकिन उस चिंतन से आगे बढ़ना है; केवल यहीं तक ही नहीं रुक जाना।

4) प्रश्न: फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिए - मैंने शुरू में ही एक बात कही थी कि फ्रेरे जिस ब्राज़ील के हैं, उस समय वह एक उपनिवेशी राज्य था। उपनिवेशी राज्य होने के नाते वह पूरी तरह दूसरों पर निर्भर था, जिस कारण वह 'लैटिन अमेरिका' कहलाता था। फ्रेरे ने आधुनिकीकरण में आधुनिक का मतलब कारखानों का आना, उसमें पूंजीवाद का स्वरूप, इत्यादि दृष्टि से माना है, लेकिन वहाँ वे लोग मालिक भी बन गए। ऐसे में यह प्रश्न उभरा कि व्यक्तियों में जो रचनात्मक क्षमता है, उसके ज़रिए वे अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर सकें। भारत में भी इस तरह की स्थितियों को देखा जा सकता है। यह कहा जाता है कि वे निर्णय करने के योग्य नहीं है; हमारी सेवा करें; हमारे लोग, वे लोग। यानि, जो भारतीय थे, वही भारतीयों का संहार भी करते थे, क्योंकि उनको पैसा चाहिए था; वे नौकरी कर रहे थे। यह मानवता की हीन दशा थी। इसके विपरीत, जब आप निर्णय लेने के योग्य बनेंगे, तब आप अधोसंरचना में परिवर्तन भी कर

सकेंगे या आपको निर्णय लेने की क्षमता में अवसर मिलना चाहिए। फ़्रेरे के कहने का अर्थ यही था कि इन बच्चों में असीम क्षमताएँ हैं; उन्हें निर्णय लेने के साथ जोड़ा जाना चाहिए। मैं आधुनिक-वाधुनिक कुछ नहीं मानता हूँ। क्षम्यताम्, मेरी दृष्टि में हर युग आधुनिक है। मैं इसे आधुनिक नहीं मानता हूँ कि पहले वे घास खाते थे; आज रोटी खाते हैं। पहले वे जड़ी-बूटियाँ खाते थे; आज वे जड़ी-बूटियों के रस की 'टेबलेट' खाते हैं। यह आधुनिकता नहीं है; यह संसाधन हैं, लेकिन पहले भी मनुष्य रोता था; आज भी रोता है। तब भी उसे भूख लगती थी; आज भी भूख लगती है। तब भी उसे कार्य करने के लिए घूमना पड़ता था; आज भी घूमना पड़ता है। तब वह छाल पहनता था; अब कपास के वस्त्र पहनता है। क्या मैं इसे आधुनिकता कह दूँ? क्या मैं इसे स्वीकार कर लूँ? मैं कहता हूँ - मनुष्य की सनातन आवश्यकताएँ हैं। इसलिए, मनुष्य बहुत कम परिवर्तित होता है; अपनी मानसिक दृष्टि से बहुत कम। हम कहें कि आज के समाज में खुलापन है, तो शायद हम भूल जाते हैं कि यह तो पहले भी था। मैं तो ऐसे-ऐसे उदाहरण दे डालूँगा; अगर, मैं विवाहों को ही लेता हूँ, तो पहले स्वयंवर प्रथा थी; मैं कहूँगा यह आधुनिक है कि वह आधुनिक है?

एक नाटक है - संस्कृत में। उसमें द्रौपदी युधिष्ठिर को जितना सुनाती है, शायद ही किसी ने सुनाया हो। जो राजनीति की बातें आज हैं, वे उसने उस समय करके दिखाई थीं। मैं महाभारत काल में जाता हूँ, तो महाभारत काल का अर्थ कोई बहुत सारे पात्र नहीं है। वे सारे-के-सारे पात्र एक मनुष्य की भावनाएँ हैं। जब वह अपने स्वार्थ से जुड़ जाता है, तो धृतराष्ट्र बन जाता है। जब उसके मन में प्रश्न खड़े होते हैं, जब चीज़ों को समझने लगता है, जब खुद उत्तर देना शुरू करता है, तो संजय बन जाता है। जब उस में उत्साह जगता है, तो भीम का रूप ले लेता है। जब स्वार्थ जगता है, तो दुर्योधन बन जाता है। मनुष्य की जितनी भावनाएँ हैं, लालसाएँ हैं, वे मनोवैज्ञानिक हैं। मेरी दृष्टि में वे सारे-के-सारे पात्र उन चीज़ों को देख, दर्शित करते हुए चलते हैं। लालसा तब भी थी, लालसा अभी भी है; लोभ तब भी था, लोभ आज भी है। इसलिए स्थितियाँ-परिस्थितियाँ, पर्यावरण के कारण बदलती हैं। उसमें आप कहिए कि हम गर्मियों में गर्म वस्त्र नहीं पहनते हैं; सर्दियों में हम कम

वस्त्र नहीं पहनते हैं। वस्त्र तो हैं, पर कुछ वातावरण के अनुकूल परिवर्तित हो जाते हैं। मनुष्य की जो बुनियादी मौलिक आवश्यकताएँ तब थीं, आज भी वही हैं। अब, यदि इसे शिक्षा से जोड़कर देखें, तो मैं यह प्रश्न करूँगा कि प्राचीन समय इस सबसे कैसे भिन्न था?, तो उत्तर क्या होगा? भूख तब भी लगती थी, आज भी लगती है। आज भी लोग हिंसक हैं, तब भी थे; माँसाहारी भी थे; एक-समान कभी नहीं रहते हैं; आप किसी भी युग को उठा लीजिए। इसका अर्थ है कि शिक्षा उसमें, जिसे हम कहते हैं – 'एडेप्टेशन' या अनुकूलन का भाव भर दे, ताकि वह अपने समय की अनुकूलता को पहचान सके। उसे अपने युग की उन स्थितियों-परिस्थितियों के साथ जो भौगोलिक परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं, जो सामाजिक परिवर्तन या जिसे फिर हम कहें कि मान लीजिए - लोग झगड़ रहे हैं; वह उसे पहचान सके। झगड़ना तब भी ठीक नहीं था, आज भी नहीं है; महाभारत उसी पर ही बनी कि मैं नहीं लड़ूँगा।

अब, अगर शिक्षकों की बात करें कि वे ऐसा कर पाएँगे या नहीं, तो यह प्रश्न इसलिए उठता है, क्योंकि हम नहीं करवा पा रहे हैं। इसलिए, हम सोचते हैं कि यह नहीं हो सकता। यही तो परिवर्तन चाहिए; उसमें व्यवहारिकता चाहिए, क्योंकि पाओलो फ्रेरे कहते रहे, करवा नहीं पाए, इसलिए जब उनको अवसर मिला तो असफ़ल हो गए। नहीं किया जा सकता, ऐसा नहीं है, लेकिन हमें करवाने के लिए उन स्थितियों-परिस्थितियों में भी रहना पड़ेगा, जहाँ द्वंद्व है। मान लिया जाए - आप इतिहास में किसी आदिवासी पाठ को पढ़ा रहे हैं। मेरा प्रश्न है कि आप कितना समय आदिवासी जनों के बीच में रहे हैं?, रहे क्या? एक पुरानी बात है, जो मैं बता रहा हूँ। दूरदर्शन पर एक कार्यक्रम आया था। वह यौन शिक्षा के संदर्भ में था। मुद्दा यह था कि यौन शिक्षा दी जानी चाहिए या नहीं। दी जानी चाहिए या नहीं, मुझे भी पता नहीं है। मैंने पूछा - आप जन यह कह रहे हैं, तो आपको क्या लगता है कि यह शिक्षा पहले नहीं दी जाती थी?; क्या पहले दी जाती थी या नहीं?, लेकिन क्या हर चीज़ बाज़ार में सिखाई जाती थी? कौन देगा इस शिक्षा को? अगर आप कहते हैं कि वे लोग देंगे, जिनके विवाह नहीं हुए हैं, तो वे दे ही नहीं सकते; उन्हें पता नहीं है; और जिनके विवाह हो गए हैं, उनकी आयु देखनी

पड़ेगी। अगर, वे बीच की आयु के हैं, वे नहीं दे सकेंगे; और जो बड़े हैं, जो बड़े हो गए हैं, वह इसलिए नहीं देंगे कि बच्चे को क्यों बताएँ। तो, मैंने कहा कि इसका एक तरीका हुआ करता था – माता और पिता; वे यौन शिक्षा का उपाय दिया करते थे। अब प्रश्न यह है कि एक परंपरा, अगर उसमें आपने नहीं जिया है, तो आप कैसे बताओगे? मैं इसलिए, प्रायः अगर आपको ध्यान होगा, तो मैं एक बात कहा करता था - मैं पीएच.डी. के पक्ष में नहीं हूँ। मैं लोगों को कहता हूँ कि पीएच.डी. के बिना नौकरियाँ दो। जब व्यक्ति को 15 साल का अनुभव हो जाए, तब इनके पीएच.डी. के 'एडमिशन' हों। जो कोई भी उन्होंने समस्याएँ अनुभव की हैं, अब वे उनके समाधान निकालें। इसलिए, मैंने कहा कि मैं अपने व्यक्तिगत जीवन में यही करूँगा। मैंने इसलिए, पीएच.डी. 'ज्वाइन' नहीं की। हाँ जब, मुझे लगा कि अब मेरी आयु 55 के आसपास हो गई है, अब मैंने अनुभव लगभग प्राप्त कर लिया है, तब मैंने 'रजिस्ट्रेशन' भी कराया; और पीएच.डी. जमा कर दी; डिग्री ले ली। क्योंकि, मैं नौकरी के लिए पीएच.डी. करूँ, इसे मैं स्वीकार नहीं करूँगा। अब जो कुछ किया जा रहा है, वह शिक्षा उपाधि के दृष्टिकोण से ठीक है; नौकरी के लिए भी ठीक है, लेकिन फिर शिक्षा को जीवन से किस प्रकार से जोड़ा जाए, यह अधिक अनिवार्य है; इसे व्यवहारिकता में लाना पड़ेगा। अभी व्यवहार और सिद्धांतों में अंतर है; और हम केवल शब्दों से खेलते हैं।

कई बार लोग कहते हैं - गाँधी जी का शिक्षा-दर्शन या फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन। मैं स्वीकार नहीं करता हूँ - गाँधी जी का; फ्रेरे का मैं स्वीकार कर लूँगा। इसलिए नहीं करूँगा, क्योंकि दर्शन कोई भी होता है, वह दर्शन कब दर्शन का रूप लेता है? जब, वह उसके व्यवहार में आया हुआ हो; तभी तो दर्शन कहलाएगा। मैं कहता हूँ कि गाँधी जी की शिक्षा कभी जीवन में आई ही नहीं; जो आई थी वह 'बेसिक एजुकेशन' ज़ाकिर हुसैन की थी। उसमें से मूल भाग हटा दिया गया था। जब, उसे जीवन में लाया ही नहीं गया, तो दर्शन कैसे बन सकता है। क्या वह सिद्धांत कहा जा सकता है? सिद्धांत का अर्थ होता है - सिद्ध हो गया है, जो अंत में। जब, अपनाया ही नहीं गया, तो वह सिद्धांत कैसे होगा? वह गाँधी जी के शिक्षा सम्बन्धी विचार हो सकते हैं। यही फ्रेरे के साथ हुआ। फ्रेरे ने जो बताया, वह फ्रेरे के विचार थे। विचारों का

जब उन्होंने अनुपालन किया, तो वह सभी कुछ सिद्ध नहीं कर पा रहे थे। इसलिए, वह कुछ हद तक सिद्धांत कहे जा सकते हैं, लेकिन अंत में सिद्ध किए हुए वह उस रूप में नहीं हैं, क्योंकि सीधी बात है कि आप जिन बच्चों के साथ आते हो, उनको आप समूह में लेते हो। सामूहिक मनोविज्ञान तैयार नहीं हो सकता है। मनोविज्ञान वैयक्तिक होता है। आप वैयक्तिक मनोविज्ञान को समूह पर कैसे लागू कर सकते हैं?

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: वे न उत्पीड़क हैं, न उत्पीड़ित हैं। यह एक वर्ग विशेष के द्वारा गढ़े गए नारे हैं। आज तो कोई सबसे ज्यादा उत्पीड़ित है, तो वह शिक्षक है। अब, अगर कोई उत्पीड़ित है, तो कोई उत्पीड़क भी होगा; स्वभाविक ही है। आज की कक्षाओं में, सरकारी स्कूल में, छात्र उत्पीड़क हैं; प्रधानाचार्य उत्पीड़क हैं। उन्होंने वोट माँगने के लिए, जो यह 'पेरेंट्स' के लिए बनाया है – पीटीएम, यानि उनको बिस्किट खिलाना, उनको यह खिलाना, उनको वह खिलाना; और बच्चे के सामने 'टीचर' को डांट देना; तो कौन उत्पीड़क है?; और यदि बात करें उन शिक्षकों की, जो पढ़ाना ही नहीं चाहते, तो इसलिए हमें यह जानना होगा कि इसके पीछे क्या उद्देश्य है? उनका कभी अध्ययन ही नहीं किया गया कि वे क्यों नहीं पढ़ाना चाहते? हमारी प्रक्रिया यह बन गई है कि बी.एड. करो और 'टीचर' बन जाओ। यहाँ परिवर्तन की आवश्यकता है। बी.एड. का वह पहले का स्वरूप समाप्त हो गया है। बी.एड. जब शुरू हुई थी, तब हमारे पास बहुत अधिक संसाधन, मीडिया नहीं था। आप यह नयापन देख सकते हो। मीडिया नहीं था। आप प्रतिदिन इन चीज़ों के साथ रहते हो, तो ये सभी कुछ क्यों बी.एड. के 'कोर्स' में नहीं आ सकता? मैंने कई स्थानों पर यह कहा है - आप चाह कर भी यह नहीं कर सकोगे कि बच्चे मोबाइल मत लाएँ। मैंने कहा – इसे बदलो; मोबाइल मत रोको, मोबाइल का प्रयोग सिखाओ। मैं कहा करता हूँ - मुझे नहीं पता कि अपने काल में रामायण की क्या उपयोगिता थी, लेकिन आज मुझे रामायण की उपयोगिता समझ में आती है; विशेष रूप से दो बिन्दु। दोनों ही बिन्दु हनुमान जी से जुड़े हुए हैं।

हनुमान जी सागर पार करने से पहले भूल जाते हैं कि वह उड़ सकते हैं। उन्हें जामवंत आकर बताते हैं कि तुम्हारे में इतनी शक्ति है। तो, शिक्षक आकर बताएँ बच्चे को, कि भैया तुम यह कर सकते हो। यह तो रही एक बात। दूसरा उदाहरण - हनुमान जी जाते हैं, संजीवनी लेने के लिए। पूरा पहाड़ उठाकर ले आते हैं; और सुषेण क्या करते हैं? बताते हैं कि यह संजीवनी है। मैं कहता हूँ - आज गूगल ने सूचनाओं का पहाड़ बच्चों के सामने रख दिया है। अध्यापक का काम सुदीक्षक का है; अच्छी तरह से जो दीक्ष है। वह बताए कि तुम्हारे लिए क्या उपयोगी है। फ्रेरे के साथ भी यही दिक्कत हुई; सोचा उन्होंने अपना, लेकिन जिन पुस्तकों का उन्होंने अध्ययन किया, वे विदेशी थीं; उपनिवेशी थीं; उसके विरोध में अपनी नीतियाँ चलाईं। उन्होंने पढ़ा - वैयक्तिक मनोविज्ञान और उसे अपना रहे हैं - समाज में। बिना समझे, उन्होंने मार्क्स को 'फॉलो' किया। मैं कहता हूँ कि मार्क्स का सबसे अधिक, जिन्होंने अपमान किया है; मार्क्सवादियों ने किया है। वे उसे समझ ही नहीं पाए हैं। वह एक लम्बी बातचीत है। उस पर फिर कभी चर्चा कर सकते हैं। चाहते हो, आप - पूंजीवादी सिद्धांत लेना, तो आप मार्क्सवादी कैसे हो सकते हो?; एक 'इंस्पेक्टर' की भूमिका ले लेना, फिर 'इंस्पेक्टर' का शिक्षा मंत्री बन जाना, और फिर उसके बाद 'इंस्पेक्शन' लाना; यह कहाँ से मार्क्सवाद आ गया?

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: हमें शिक्षा सम्बन्धी परिभाषाओं के बारे में सोचना होगा। यदि, आप सोचते हैं कि किताबें पढ़ने से ही शिक्षा आती है, तो शायद गलत है। मैं यह कैसे कहूँ कि किसान अनपढ़ है; पूसा के 'एग्रीकल्चरिस्ट' से? अब जो लड़की घोड़े के बारे में सब कुछ जानती है, उसे ये कहते हैं कि तू पढ़ी-लिखी नहीं है, क्योंकि तू लिख नहीं सकती। तो, यह 'डिफरेंशिएशन' वाली शिक्षा, शिक्षा नहीं हो सकती। यदि, फ्रेरे की बात करें, तो देखिए - हर शिक्षा-दर्शन सहायता कर सकता है, अगर हम उसे ठीक प्रकार से समझें हैं, तो। विचार तो वही है ना कि सबको शिक्षित करो, लेकिन पहले हमें शिक्षा की परिभाषा

बदलनी पड़ेगी। हम शिक्षा के नाम पर साक्षरता की चर्चा करते हैं; और 'बाई चांस' फ्रेरे का दर्शन भी साक्षरता पर आधारित हो गया है - प्रौढ़ो की साक्षरता।

मेरे घर के पास एक लड़की रहती थी। यह 2003 की बात है। वह मेरे पास आई; और उसने पूछा - 'अंकल' यह कागज़ 'अटेस्ट' कर दोगे? मैंने कहा - आप कहाँ से आई हैं?, कौन हैं?, मैं तो आपको जानता नहीं हूँ? उसने कहा - आप मुझे नहीं जानते! मैंने कहा – न। मैं यह चार घर छोड़कर ही तो रहती हूँ। मैंने कहा – अब जानता हूँ। तुम वही हो न, जो सारा दिन बाहर खड़ी रहती हो? खैर, यह किसके कागज़ हैं? उसके साथ कोई और लड़की भी थी। यह मेरी 'फ्रेंड' है। कैसी हो? इसने 'कॉलेज' में 'एडमिशन' लेना है। तो, तुम्हें कैसे पता चला कि मैं 'अटेस्ट' करता हूँ? कहती - मुझे नीचे वालों ने बताया था। मैंने कहा - अच्छा इसके कागज़ हैं, तो तुम्हारे कहाँ हैं? उसने मुँह नीचे झुका लिया। मेरी तो 'कंपार्टमेंट' आई है। मैंने कहा – कैसे? कहती कि 11 नंबर आए हैं – 'पॉलिटिकल साइंस' में। सब 'टीचर' कहते हैं कि पढ़ ही नहीं सकती है। मैंने कहा – ठहरो-ठहरो, तुम वही लड़की हो न? मैं एक बार अपने विद्यार्थियों को लेकर आया था, तुम्हारे स्कूल में; एक लड़की पीछे बैठती थी; वह भाग जाती थी। कहती - मैं वही हूँ। अब मुझे सारा ध्यान आने लगा। मैंने कहा - अच्छा यह बताओ, तुम्हें घर से डांट नहीं पड़ती है? कहती - पड़ती है। फिर क्या करती हो? कहती - मैंने उसका तरीका निकाल लिया है। 'प्रोग्रेस रिपोर्ट', मैं पापा को दिखाती ही नहीं हूँ; तो वह देर से आते हैं; और सो जाते हैं। मैंने उनके 'साइन' बना रखे हैं। मैं खुद कर देती हूँ। मैंने कहा - मम्मी? उसने कहा - मम्मी को बनाना बड़ा आसान है। घर का काम कर दो; वह खुश हो जाती हैं। उन्हें तो, मीठी-मीठी बातें कहो। उनके साथ काम कराओ। उनको तो, चाय बनाकर पिला दो; और भी खुश हो जाती हैं। खैर, यह सारी बातें हुई। मैंने कहा - अच्छा तुम बाहर खड़ी रहती हो? बोली – बाहर खड़े होकर मैं यह भी देखती हूँ कि आप बार-बार आते हो। कभी माताजी के लिए खाना ला रहे हो। कभी कुछ कर रहे हो; कभी कुछ कर रहे हो। कभी सफ़ाई कर रहे हो। इस बात को मैंने स्वीकार किया। मैंने कहा कि तुम्हारी 'प्रिंसिपल' तुम्हें शायद ढूँढती रहती हैं। उसने कहा कि वह तो ऐसे ही

देखती हैं। इधर-उधर देखती ही नहीं हैं। मैं कभी 'टॉयलेट' चली जाती हूँ। कभी मैं मैदान में चली जाती हूँ। उनको पता ही नहीं चलता है। मैंने कहा – अच्छा! एक बात बताओ; मैंने मन में एक बात सोची। मैंने कहा – 'होमटास्क' करती हो? कहती – नहीं। मैंने कहा - फिर क्या करती हो? बोली - करती हूँ, पर मुझे कुछ आता ही नहीं है। फिर क्या करती हो? कहती - मेरी 'फ्रेंड' बहुत सारी है, ना। मुझे पता है, उन्हें क्या-क्या रहता है। मैं बहुत सारी चीज़ें ले जाती हूँ; उनको खूब खिला देती हूँ; फिर उनकी 'कापियाँ' ले लेती हूँ। कहती – लेकिन, एक बात का बड़ा मज़ा आता है। उनको डांट पड़ती है - काम अच्छा नहीं है; और मेरा काम अच्छा, क्योंकि मैंने सबका देख लिया है। मैंने एक बात सोची कि जो लड़की मां-बाप को धोखा दे सकती है, जो 'टीचर' को धोखा दे सकती है, जो 'फ्रेंड' की मनोवैज्ञानिकता को अच्छी तरह जानती है, पहचान सकती है; उस प्रकार के काम, जिसे लोग गलत काम कहते हैं, वह करने के बाद भी बच जाती है; वह कुछ भी हो सकती है, मूर्ख नहीं हो सकती; और अगर, पढ़ाई का अक्ल के साथ सम्बन्ध है, तो उसके सर्वाधिक अंक आने चाहिए। मैंने उससे पूछा – पढ़ोगी? कहती - क्या आप पढ़ाओगे? आज 3 तारीख है; 29 को तुम्हारा 'एग्ज़ाम' है; तुम आ जाना एक-एक दिन छोड़कर। लेकिन, तुम्हें पता है ना कि मैं माताजी के लिए करता हूँ - रात को 9 बजे तक? बोली - मैं आ जाऊँगी ना; मैं पास ही में रहती हूँ। भैया ले जाएगा, मुझे। उसने आना शुरू कर दिया। मैंने उसे कुछ नहीं पढ़ाया। मैं उसे पूछता रहा; जैसे - मार्क्सवाद पढ़ाना है। अब आप ध्यान देना; उत्तर दे रहा हूँ – आपके कुछ प्रश्नों के। यह हमारे यहाँ पर सरकारी स्कूल भी हैं, 'प्राइवेट' स्कूल भी हैं। यह क्यों है? तो, कहती - जैसे यह मेरा है, अमीर है, पैसा है, मेरे मम्मी-पापा दे सकते हैं, तो मैं 'प्राइवेट' में हूँ। जिनके पास नहीं हैं, वह 'गवर्नमेंट' में हैं। मैंने कहा – तो, सारे गवर्नमेंट हो जाएँ; जैसे - सरकारी हॉस्पिटल भी हैं? सारी बातें पूछ लीं। बसों में 'ग्रीन लाइन' भी चलती हैं, रेड लाइन, ब्लू लाइन भी चलती हैं; क्यों? वह सारे उत्तर देती गई। तुम्हारे मम्मी-पापा जिसे वोट देते हैं, कैसे देते हैं? उसने सारा बता दिया। उसी की बातों से निकालकर मैं उसे बताता चला गया। उसके बाद मैं उसे थोड़ा सिद्धांत दे देता था, क्योंकि मेरा मानना था कि यह चालाक बालिका सब

कुछ जानती है। फिर, वह एक हफ़्ता आई; और कहती - मैं रोज़ आ जाऊँ? मैंने कहा - अच्छा आ जाओ। मैं उससे सिर्फ़ बातचीत करता था। वह दिन भी आ गया - 29 तारीख। 2003 में 29 तारीख को ही जून, 29 को सीबीएसई का जन्म दिवस भी था। 'अटल बिहारी वाजपेई' जी आ रहे थे। मैं 'कमेटी' का 'कनवैनर' होने के नाते वहाँ गया हुआ था। रात को दस, साढ़े दस बजे आता हूँ; वह भागकर आई। इंतज़ार कर रही थी। बोली – 'अंकल' मेरा 'पेपर' बहुत अच्छा हुआ; 'अंकल' मेरा 'पेपर' बड़ा अच्छा हुआ। मैंने कहा – 'पेपर' कहाँ है? वह मैं, 'पेपर' भूल गई। मैंने कहा - सुबह दिखा देना। बोली – नहीं, मैं अभी दिखाऊँगी। मैंने कहा – लेकर आओ। पीछे-पीछे उसकी माँ भी आई; आँखों में आँसू। मैंने कहा - आप क्यों रो रही हैं? कहती - पहली बार मैंने अपनी बेटी को खुश देखा है। कहती - मम्मी मुझे सब कुछ आता था। जब उसने 'पेपर' दिखाया, मैंने कहा - इसके 65 से 70 के बीच आएँगे, अन्यथा अगर यह 'नॉर्मल' होता, तो 85 तक आ जाते। कहती – इसके!, मेरे!; मैंने कहा – हाँ तुम्हारे। 68 'मार्क्स' आए; एम.ए. भी कर लिया; एम.बी.ए. भी कर रही है। मैंने कुछ नहीं पढ़ाया। यह शिक्षा है। बच्चे को पहचानना शिक्षा है। विषय को पहचानना शिक्षा है। इसलिए, मैं कहता हूँ कि शिक्षा की परिभाषा बदलो। शिक्षा सिखाना नहीं होता, बच्चे को जानना होता है; उसे एक 'लेवेल' देना होता है; सीखना होता है।

मैं कहा करता हूँ - किसी शिक्षक की चार भूमिकाएँ होती हैं – पहली, वह शिक्षक होता है। शिक्षक का अर्थ पढ़ाना नहीं, पढ़ना होता है। शिक्षा - सीखना है। इसलिए, कहते हैं – 'सिक्ख'। शिक्षा से ही 'सिक्ख' बना है। गुरु जी कहते थे – 'सिक्ख', तूँ सिखदां है?; 'सिक्ख'। इसलिए, 'सिक्ख' शब्द का प्रचलन हुआ। यह 'एंपावरमेंट' है; बच्चे को सशक्तिकरण में लाना। लोग कहेंगे – यह कठिन है। बच्चे सुनना चाहते हैं। मैं जो कह रहा हूँ, वह वास्तविकता कह रहा हूँ। बच्चे सुनना चाहते हैं। बच्चे जानना चाहते हैं। अध्यापक के पास सुनाने के लिए कुछ है ही नहीं। मेरी भी बी.एड. की वही 'क्लास' होती थी, जो बाकी बी.एड. के टीचर की होती थी। वहाँ एक 'टीचर' थे। उनकी क्लास के एम.एड. स्टूडेंट्स उनकी क्लास में थे नहीं; और मेरी क्लास में आ जाते थे। वह 'टीचर' कहते कि बच्चे ही नहीं हैं; वहाँ तो 5

ही बच्चे हैं; यहाँ तो, एक आता है, तो दूसरा नहीं आता। मेरी बी.एड. की 'क्लास' में अगर, आपको ध्यान हो, तो कितने लोग 'एब्सेंट' होते थे? मैं उपस्थिति भी नहीं लेता था, लेकिन मुझे सब पता था कि कौन कहाँ बैठता है।

उस दिन मैं एक पत्र पढ़ रहा था कि हमारी किस्मत में नहीं था - आप से पढ़ना। मैं अपनी प्रशंसा नहीं कर रहा हूँ। इसी तरह मैं एक जगह मूल्यांकन करने गया हूँ। मुझे तो वहाँ परीक्षा करनी है, पर लोगों ने कहा कि हमने बहुत कुछ पा लिया है, आज। आपने हमें यह सिखा दिया कि परीक्षा कैसे ली जाती है। कहने का अर्थ है कि एक 'सेंसटिविटी' होती है; वह चाहिए।

वह बच्चा इतनी चालाकी भरी बातें करता था; एक छोटी-सी घटना फिर याद आ गई। इसमें आपके प्रश्नों के बहुत से उत्तर आ जाएँगे। एक दिन मैं बस में जा रहा था। अगर, 'टीचर' को यह जानना हो कि बच्चे कैसे हैं, तो 'टीचर' को डीटीसी की बसों में तब जाना चाहिए, जब बच्चे डीटीसी की बसों में बैठे हों; और उनकी बातें सुनो। अब मैंने एक बच्चे को देखा। वह फलों के कुछ नाम कहता था; और सारी 'क्लास', सारे बच्चे हँस पड़ते थे। मुझे समझ ही नहीं आया था, पर मैंने उस बच्चे से बाद में पूछा - किस 'क्लास' में हो? बोला - क्यों अंकल?; 'नाइंथ' में हूँ। मैंने पूछा - तुम्हारे हिन्दी में कितने नंबर आते हैं? कहता - फट्टे मारता हूँ, तो थोड़े-से आ जाते हैं। मैंने कहा - फट्टे मारना क्या होता है? अब उसकी भाषा मुझे भी समझ में नहीं आई, तो पता लगा कि उसके 34 से 35 प्रतिशत आ जाते हैं। मैंने सोचा – जो, बच्चा सारे बच्चों को हँसा सकता है; चालाकी भरी बातें कर सकता है, अगर उसके हिन्दी में अंक नहीं आते हैं, तो उसका अर्थ उसे हिन्दी नहीं आती, कैसे हो सकता है? मुझे लगता है, आपको बहुत सारे प्रश्नों के उत्तर इसमें मिलेंगे।

इस तरह से शिक्षा की परिभाषा बदलनी पड़ेगी। साक्षरता शिक्षा नहीं है। हर बच्चा शिक्षित है। उसकी शिक्षा के साथ साक्षरता को जोड़िए। साक्षर बनाकर शिक्षित मत कीजिए। मैंने आप लोगों को 'एक्स्ट्रा ऑर्डिनरी' कुछ

नहीं बताया। आप लोगों को, जो दैनिक जीवन के उदाहरण थे, उन्हीं को उन सिद्धांतों के साथ जोड़कर बता देता था।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: मैं तो सीधी बात जानता हूँ। बच्चों को उनकी भाषा दे दो। शिक्षा ठीक हो जाएगी। मैंने यह प्रश्न कई स्थानों पर उठाया है कि भारत के संविधान को बदलो, अनुच्छेद 350ए को बदलो। प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में होगी; उसे बदलिए। पूरी शिक्षा उसकी भाषा में होगी; इसे लिखिए। निश्चित तौर पर ऐसे में शिक्षकों की व्यवस्था भी करनी पड़ेगी। यह स्वभाविक है; और अगर प्रश्न यह है कि ऐसे में इन तथाकथित 'पब्लिक स्कूलों' का क्या होगा, तो ज़रूरत ही नहीं है। 'पब्लिक स्कूल' शिक्षा के लिए बने ही नहीं है। कौन-सा स्कूल बना है?

एक 'स्टूडेंट' कहती थी – सर, मैं इस बार पिकनिक में आपके लिए चावल बनाकर लाऊँगी। खास तौर पर आपके लिए बनाकर लाऊँगी। आप खा कर देखना कि मैं कैसा बनाती हूँ? ले आई; मैंने खाया; बड़े स्वाद थे। बोली - कैसे लगे, सर? मैंने कहा – जो, बनाया अच्छा बनाया, लेकिन चावल कहाँ थे। कहती – क्यों!; चावल ही तो बनाए थे। मैंने कहा - स्वाद चावल का नहीं था। पूछा – अच्छा, तुमने क्या-क्या डाला? बोली - यह डाला, यह डाला, यह डाला। पूछा - कैसे बनाया? बोली - ऐसे बनाया, ऐसे बनाया। मैंने कहा - कुछ भी मत डालो; बस चावल उबालो। बोली – सर, फिर तो खाए भी नहीं जाएँगे। मैंने कहा - चावल का स्वाद वही है। तुमने मुझे सब्जियों के स्वाद खिलाए हैं। तुमने मेरा स्वाद छीनकर मसालों के स्वाद दिए हैं। 'आई थिंक' आपके प्रश्न का उत्तर मिल गया होगा।

यह शिक्षा है ही नहीं, जिसे चला रहे हो। यह आपके और मेरे केवल-और-केवल बहाने हैं कि हम शिक्षा दे रहे हैं; और शिक्षा ले रहे हैं।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: मेरी दृष्टि में न कोई नियोजक है, न कोई व्यवस्थापक। शिक्षा का अर्थ, आज भी मैं बात कर रहा था, जो अभी-अभी शास्त्री जी आए थे, सुबह उनसे कुछ बात हो रही थी। उन्होंने पूछा - जो हुआ है, क्या वह ठीक है। मैं उसे गलत नहीं कहूँगा, क्योंकि यदि, मैं पिछला युग देखता हूँ, तो 'वाजपेई' जी की 'गवर्नमेंट' ने काम बहुत किया था; बहुत काम किया था, लेकिन 'भगवाकरण' का नाम देकर उन सभी ने इसे उड़ा दिया था, जबकि वे 'भगवाकरण' का नाम लेकर बोलने वाले जानते ही नहीं थे कि 'भगवाकरण' क्या होता है। मैंने कहा - इस 'गवर्नमेंट' ने वह उल्टा कर दिया है। अब अन्य पार्टी वाले खुद कहते हैं कि 'भगवाकरण' पर अधिकार केवल उनका ही नहीं है। कोई आरोप नहीं लगा है। अभी भी मेरा मानना है कि इस देश के लिए अभी मोदी जी का होना ज़रूरी है। वे किसी का विरोध नहीं करते हैं। अन्य पार्टी के लोगों के पास कोई मुद्दा ही नहीं है। वे कहते हैं - मोदी हटाओ। किसलिए हटाओ? मैंने कहा – उन्होंने बहुत काम किया है; गाँवों तक गैस पहुँचाई। यह कोई सामान्य बात नहीं थी; 'डीमोनेटाइजेशन' का 'स्टेप' लेना, कोई सामान्य बात नहीं थी। मुख्य बात है - किसी को कोई मुद्दा ही नहीं दिया है।

सच्चाई तो यह है - नीति बन रही है; यह शिक्षा नहीं चलेगी। यहाँ अँग्रेजी की अनिवार्यता वाली शिक्षा नहीं चल पाएगी। मैंने चार साल के पुराने बी.ए.बी.एड. के 'स्ट्रक्चर' का भी विरोध किया था। झूठ बोलकर दो साल का बी.एड. किया गया था। क्षमा याचना सहित, मैंने पूरे भारत में घूम-घूम कर उसका खुलासा किया। कहाँ लिखा है कि बी.एड. को दो साल का करना है? 'प्राइवेट' वाले जो चाह रहे हैं, उसका विरोध भी मैंने किया। मुझे लगता है कि इसके बाद अगर दोबारा यह 'गवर्नमेंट' आती है, तो शिक्षा में बड़े बदलाव देखने को मिलेंगे। इस बार का मुद्दा 'सोशल' था। गाँवों तक

चीज़ों को पहुँचाना, छात्र सम्बन्धी समानता पर चर्चा, फिर इसकी भी ज़रूरत थी कि जो किसान हैं, उनके लिए बहुत नीतियाँ बनाई हैं। वे दिखावा कुछ भी नहीं करते हैं। यानि, आप देखोगे हर किसी का 'अकाउंट' खुलवा देना, क्या यह कम मुश्किल काम था? वह भी सभी का खुलवा दिया है। पारदर्शिता आई है। 'कैश' बंद कर दिया है। फिर भी भ्रष्टाचार होगा; वह अलग बात है। अब इसका अर्थ यह है - एक व्यक्ति ने कोशिश तो की है। पाँच साल से उन्हें बैठे हुए देखा है, किसी ने? हमेशा सोच रहे हैं। दिन में पता नहीं कितनी 'मीटिंग' करते हैं? बाहर पैसा खर्च नहीं करते। होटलों में खर्च नहीं करते। रात में 'बाई एयर' जाते हैं; और सुबह फिर 'मीटिंग' करते हैं। फिर होटलों पर खर्चा नहीं करते हैं। कहने का अर्थ है - एक व्यक्ति लगा हुआ है। मैं उनकी प्रशंसा नहीं कर रहा हूँ। कहने का अर्थ यह है - अभी जो, वर्तमान नीतियाँ हैं, ये शैक्षिक नीतियाँ नहीं है। ये राजनीति की दृष्टि से शिक्षा के मुद्दे हैं।

शिक्षा तब तक लोगों की नहीं होगी, स्वतंत्रता की नहीं होगी, जब तक लोगों को अपनी भाषा में लिखने की स्वतंत्रता नहीं दी जाएगी। माता-पिता और छात्र, क्योंकि उनका 'ओरियंटेशन' ही वही हुआ है कि अँग्रेजी में लिखो, 'पब्लिक स्कूलों' में पढ़ाओ, यह सब बन्द होगा। यह बात ध्यान रखना - उन पर अंकुश आ जाएगा। आज ही मेरे पास एक व्यक्ति आए थे। उन्होंने कहा कि जो यह बहुत सारी अखबारों ने अपनी भाषा बदली है, इस पर मेरी बातचीत कराना चाहते थे; सम्मेलन रखेंगे। मैंने कहा - मैं बात कर लूँगा कि एक अख़बार विशेष को हिंदी में अँग्रेजी के शब्द ध्यान आते हैं; अन्य को नहीं आते क्या? वहाँ हिंदी के शब्द क्यों नहीं लिखते, क्योंकि उनको विज्ञापन चाहिए होते हैं। इनका भाषा से कोई लेना-देना नहीं है। इसलिए, उन्होंने उसकी भाषा वैसी बना डाली है।

एक मीटिंग हुई थी - दास्य भाव से मुक्ति, स्लेवरी पर। मैं भी वहाँ गया था। मुझसे कई सवाल पूछे गए; भयंकर 'डिस्कशन' थी, तो मैंने वहाँ एक ही बात कही – दासता किसे कहते हैं? विचारों का स्वतंत्र न होना दासता है। हमारी पुस्तकें - हमें न मिले; वह दासता है। अगर, मान लीजिए कि बच्चा 'मेडिकल साइंस' नहीं पढ़ पा रहा, तो इसलिए नहीं कि वह 'मेडिकल

साइंस' के योग्य नहीं है ,बल्कि अँग्रेजी की पुस्तकों ने उसे पढ़ने के योग्य नहीं बनाया है। इसलिए, मेरे लिए आपका यह प्रश्न अधूरा प्रश्न है। यह स्वतंत्रता का प्रश्न भाषा की शिक्षा से जुड़ा हुआ है। 'आर्टिकल' 19 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है, लेकिन 'कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ़ इंडिया' सुप्रीम कोर्ट की भाषा अँग्रेजी बताता है। मैं इसे स्वतंत्रता कैसे मानूँ?

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: यह दोनों उनके द्वारा गड़े हुए शब्द हैं। वे न तो स्वयं विवेक की बात करते रहे न मतांधता को छोड़ सके। वह केवल 'क्रिश्चियनिटी' के साथ जुड़े रहे। यह मतांधता नहीं होगी क्या? खुद की नीति को क्या उन्होंने "विवेकीकरण" के साथ खोज कर देखा है? विवेक का मतलब होता है कि हर चीज़ को आप 'टेस्ट' कीजिए। यह हर कोई कहता रहा है। भारत में तो विवेक कहा ही इसलिए गया है, जो नीर-क्षीर को अलग-अलग कर सके। शिक्षा का अर्थ ही यह माना गया है कि जो विवेक उत्पन्न कर सके। विध्वंस की ओर ले जाने का जहाँ तक प्रश्न है, तो मैं एक उदाहरण देता हूँ। मेरा एक विद्यार्थी है, उसे जो भी 'कालेज' वाले रखते, तो बाद में सोचते कि वह वहाँ से चला जाये, क्योंकि वह उनको सत्य का पाठ पढ़ा देता। उसे कहते कि यहाँ मत बैठो, वहाँ मत बैठो, आप यह न करो। यह सभी जगह है। अब, आप अंत में आकर समझौता कर लोगे, यह अलग प्रश्न है।

एक लबादा ओढ़ी हुई ज़िदगी का हटना ज़रूरी है। क्योंकि, लोग नहीं चाहते हैं कि आप आज 'पब्लिक स्कूल' बंद कर दो; तो क्या होगा? तो, लोग अलग-अलग रूप में हिंसक हो जाएँगे। विवेक कहता है – 'पब्लिक स्कूल' बंद हों। स्वार्थ कहता है – 'पब्लिक स्कूल' खुले रहें।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: शिक्षा के लिए, वस्तुतः उस तरह से पैसे की ज़रूरत नहीं है, जैसा आजकल किया जा चुका है। पैसा किस लिए चाहिए?; वह भी बता देता हूँ। जिस विभाग में मैं काम करता था, वहाँ के एक व्यक्ति के बारे में मैं एक बात कहा करता हूँ कि इस विभाग में अगर किसी व्यक्ति ने सबसे अधिक सरकारी धन का दुरुपयोग किया है तो, उस व्यक्ति ने। कैसे? एक चिट्ठी के लिए वह कम-से-कम 15-20 'ड्राफ्ट' बनाते थे; सारे फाड़ देते थे। क्या उस पर पैसा नहीं लग रहा है? उन्होंने कितना व्यर्थ की चीज़ों पर खर्च किया? उनके द्वारा 'कॉन्फ्रेंस' किस लिए कराई गई? भाई, वायुयान में चलना है; किसने कहा है कि वायुयान में चलो? पढ़ाया कितना है, उन्होंने? उन्होंने कितनी 'क्लासेज' ली हैं?; और कितना पैसा लिया है, तनख्वाह का? एक और व्यक्ति भी थे, उस विभाग में। उन्हें पैसा चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि 'टीचर' को पैसा नहीं चाहिए, 'टीचर' को 'मोटिवेटिड' भी करना है; पर 'ग्रुपिज़्म' नहीं करना है कि 'चाँद किरण सलूजा' 'मार्कसिस्ट' में विश्वास नहीं करता है। वही व्यक्ति यह भी कहा करते थे - सलूजा जी, 'मार्कसिस्ट' हम कहलाते हैं; और जीवन आप जीते हैं। वे कहते - मुझे तो 'वीसीशिप' भी चाहिए; मुझे कार भी चाहिए; मुझे सरकारी बंगला भी चाहिए; मुझे खाना भी चाहिए; बाहर जाकर लोगों के साथ, मुझे पार्टी भी चाहिए। आपको कुछ नहीं चाहिए? आप सुबह आते हैं; रात तक यहीं रहते हैं। बाहर जाते ही नहीं हैं। जब 'रिनोवेशन' चल रहा था, विभाग का, तो वह फिर आए - मेरे पास; वीसी की टीम भी थी। मुझसे कहा – मैंने सिर्फ़ एक ही व्यक्ति को पूरे विभाग में पाया, जिसके साथ मैं 'एडजस्ट' कर सकता हूँ। बाकी सब दिखावा है; मैं बात करता हूँ - सब से।

मेरा कहने का अर्थ क्या था? पैसा कहीं भी 'प्रॉब्लम' नहीं है। शिक्षा धन के साथ नहीं आती है; और सच्चाई तो यह है कि जिस दिन आपने देखा भी

होगा, अनुभव भी किया होगा, शिक्षा के लिए जितनी वस्तुएँ लाई जाती हैं, उसका 70% 'कमीशन' में जाता है। तो, पैसे की कमी कैसे है? यह 'विल' नहीं है; दर्शन नहीं है; शिक्षा को समझा नहीं है। हम रटी हुई परिभाषाएँ देते हैं। मैंने कभी एक कविता लिखी थी। कविता में इसका उत्तर आएगा। छोटा सा बच्चा हाथ जोड़कर कह रहा है -

मत दो मुझे परिभाषाएँ।
मत दो मुझे शब्दों के अर्थ, जो तुमने दिए हैं।
मत दो मुझे परिभाषाएँ, जो तुमने लिखी हैं।
देने दो मुझे - नए शब्दों के नए अर्थ।
रचने दो मुझे - नई परिभाषाएँ।
बुनने दो मुझे - नए सूरज का नया सवेरा।

एक बच्चे की 'क्रिएटिविटी' खरीदी जा सकती है, क्या? देखो, अमृत जी, बहुत सारी बातें, बहुत सारी स्थितियों पर निर्भर करती हैं। 'व्हाट कैन वी डन? मैं आपको खुश करने नहीं जा रहा हूँ। मुझे इससे कोई अंतर भी नहीं पड़ता है, अगर कोई मुझे पूछता है, तो। हालाँकि, मेरी आपसे इन्हीं दिनों में बात हो पाई है, अन्यथा बात भी नहीं हो पाई है। कोई भी, और मैं कहता भी हूँ, इस बात को; अगर, कोई मुझे यह पूछता है – 'एज़ ए टीचर', जिन 'स्टूडेंट्स' को आप याद रखोगे, वे कौन हैं?, तो उनमें अमृत पाल भी तीन-चार में, वही रहेगा; 'द क्रिएटिविटी यू हैव'; अंक आधार नहीं हैं; सिद्धांत बताना नहीं, सिद्धांत जीना। 'इट इज़ नॉट सिंपल थिंग; इट इज़ नॉट सिंपल थिंग'; बहुत धक्के खाए हैं, लेकिन हिम्मत नहीं छोड़ी है। मेरी बात समझ आ रही है?

कहने का अर्थ है - शिक्षा लिखित सिद्धांतों पर नहीं चलती है। यह पैसा तब होता है, जब आप किताबें खरीदते हो। जिस दिन एक अध्यापक एक बच्चे की किताब बन जाता है, किताब खरीदने की ज़रूरत नहीं रहती। आपने अभी बताया; आप सहज रूप में बता गए कि मैंने नेट से पहले आप के 'नोट्स' पढ़ लिए थे। तो, महँगी खरीदी हुई किताबें तो काम नहीं आई, न? इसका अर्थ है – धन, आज के युग में उतनी बड़ी बात नहीं है; यह सब

उपलब्ध है; मीडिया पर उपलब्ध है; किताबें उपलब्ध हैं। मैंने शुरू में कहा था - मैं जीविकाविहीन शिक्षा की चर्चा नहीं करता। इसलिए, जो पढ़ाने वाले अध्यापक हैं, उनको जीविका चाहिए। मैं शब्दों से नहीं खेलूँगा कि नौकरी और शिक्षा का कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। क्यों नहीं होना चाहिए? मैं वे शब्द नहीं कहूँगा कि पढ़ना अलग है और अंक पाना अलग है। मैंने कहा - जो पढ़ता है, उसके अंक नहीं आएँ; यह कैसे हो सकता है?

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: कहीं भी हो - यह सत्य है। यह भारत में ही नहीं, कहीं भी हो, यह सत्य है। इसलिए, जो भी ब्राज़ील में हुआ था, वह कुपोषण आदि एक सार्वभौमिक समस्या है; वह फिर चाहे कहीं भी हो, चाहे वह ब्राज़ील हो, भारत हो, लंका हो। इसलिए, जो यह आपका 'मिड-डे-मील' है, यह इसी लिए चलाया गया था। अगर, जितने भी आईएएस बने हैं, इनका ज़रा 'डेटा' इकट्ठा किया जाए, तो वह किन विद्यालयों से आए हुए हैं? तो, उसका आधार क्या है? तो, यह सर्वकालिक सार्वभौमिक समस्याएँ हैं।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

व 13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: देखो - हम संस्कृति का अर्थ नहीं जानते हैं। हम संस्कृति का अर्थ केवल प्राचीन गीत-संगीत आदि से परिचित हो जाना मानते हैं। संस्कृति वह नहीं है; जैसे - हम कहते हैं, कार्य-संस्कृति; कार्य-संस्कृति का क्या अर्थ है?

एक परंपरा, जिससे संस्कृति का निर्माण भी होता है; जैसे - विज्ञान की अपनी एक संस्कृति है – प्रयोगात्मकता। समाज विज्ञान की अपनी एक संस्कृति है - सामाजिक मुद्दों का प्रश्न उठाना। शिक्षा की अपनी एक संस्कृति है कि भिन्न प्रकार से लोगों में बौद्धिकता प्रदान करना। अब, आज जो शिक्षा की संस्कृति बनी हुई है, वह उच्च पदों को प्राप्त करने के लिए बन गई है।

संस्कृति का अर्थ आपको थोड़ा समझना पड़ेगा। संस्कृति निर्मित भी होती है। संस्कृति केवल गढ़ी हुई वस्तु नहीं होती है। तो, संस्कृति का किन संदर्भों में प्रयोग किया जा रहा है, वह एक मुख्य बिंदु है। देखो, यह थोड़ा कठिन प्रश्न है। मेरी दृष्टि में तो बदलाव के कई स्तर होते हैं। कोई भी बदलाव अपने आप में अंतिम नहीं होता है। जिस दिन अंतिम हो जाएगा, उस दिन बदलाव समाप्त हो जाएगा। शिक्षा के अंतर्गत आज सामाजिक मुद्दों में यह एक बहुत बड़ी समस्या है कि आज, जो हम चाह रहे हैं, वह कई वर्षों के बाद आएगा। जब तक वह आएगा, तब तक नई स्थितियाँ बन चुकी होंगी, तो यह भी एक सर्वकालिक सार्वभौमिक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। अगर, आप कहते हैं कि कुपोषण है, बीमारी है, तो उसमें बदलाव तो चाहिए-ही-चाहिए। तो, एक संस्कृति का निर्माण हो सके, जिसमें एक मनुष्य को सम्मान दिया जा सके, एक मनुष्य होने के नाते। अगर, उसे कुपोषण प्राप्त हो रहा है, वह बीमार हो रहा है; यदि, उसे औषधियाँ प्राप्त नहीं हो रही हैं; और अगर, प्रधानमंत्री जी को यह सोचना पड़ रहा है कि अरे! भैया सबके लिए स्वास्थ्य का हम कुछ प्रबंध कर सकें, तो उसके पीछे कारण यही है कि मानव होने के नाते उसके पास यह सब चीज़ें होनी चाहिए। अगर, नहीं उपलब्ध होती हैं, तो इसका अर्थ है कि समाज के एक वर्ग ने उस पर अपना आधिपत्य बना लिया है। यदि, आप राजनीति विज्ञान का इतिहास देखेंगे, तो राजनीति किसी पर आधिपत्य करने के लिए नहीं बनी थी; राजनीति इसलिए बनी थी कि उन सुविधाओं को सब जगह पहुँचाया जा सके। इसलिए, प्राचीन भारत में 'वसुधैव कुटुंबकम' का प्रश्न उठाया गया, अर्थात् वसु यानि पृथ्वी का जो धन है, वह किसी एक वर्ग के लिए नहीं है; संपूर्ण विश्व के लिए है; सारे लोगों के लिए है; सारे लोग एक कुटुंब के समान हैं।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: सीधी बात है - आप कहाँ पढ़ाते हैं? क्या बी.एड. का पाठ्यक्रम आपने बनाया है? क्या शिक्षण पद्धतियाँ आप निर्धारित करते हैं? क्या मूल्यांकन पद्धति जो है, उसमें आप अपने कितने विद्यार्थियों को जाँचते हैं? जो 'फाइनल एग्ज़ामिनेशन' होते हैं, वह कितना जाँचते हैं - आप? बाहर जाते हैं - 'पेपर' या सारे यही चेक होते हैं? आपके पास कितनी 'पावर' है? सामान्यत:, स्थिति क्या है? बी.एड. की जितनी भी बड़ी-बड़ी 'यूनिवर्सिटी' हैं, उसमें यह है कि कोई भी व्यक्ति चला जाता है - 'पेपर' 'चेक' करने के लिए। इसका अर्थ है कि वह एक मानक प्रक्रिया है। मूल्यांकन, क्या अंक देने के लिए होता है?; वास्तव में, कोई भी सरकार आती है, तो दो बिंदुओं पर प्रश्न शुरू हो जाता है - शिक्षा और साहित्य या इतिहास। विज्ञान पर प्रश्न क्यों नहीं खड़ा होता है? क्योंकि, विज्ञान तथ्यों पर आधारित होता है। गणित पर खड़ा क्यों नहीं होता है? क्योंकि, वह भी तथ्यों पर आधारित होता है। बाकी, जो यह राजनीति है, इसका मतलब है - आज जो राजनीतिक दल आया है, वह अपनी नीतियों के अनुसार शिक्षा को रूप देना चाहता है। यही शिक्षा के राजनीतिकरण का अर्थ है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: कोई भी शिक्षा पद्धति हो, वह वही तैयार करती है, जो व्यक्ति की - क्षमा याचना सहित - रचनात्मकता को समाप्त करे। यानि, अभी तक इस प्रकार की कोई शिक्षा नीति है ही नहीं, जो उसको रचनात्मक बनाए। अभी तक हमें घटी-घटाई, पढ़ी-पढ़ाई, रटी-रटाई बातें सिखाई जाती रही हैं, जो हमें स्वार्थी बना रही हैं। जैसे ही आप बी.एड. कर लेंगे, फिर एम.एड. कर जाएँगे; कितनी मज़ेदार बात है; मैं इसे सीआईई में देखा करता था। एम.एड. करने का

उद्देश्य यह था कि स्कूल से पीछा छूट जाएगा। जिस बी.एड. के कारण हम शिक्षित बने हैं, उसी शिक्षक-व्यक्ति से छूट पाने के लिए एम.एड. कर रहे हैं। तो, मैं कैसे कहूँ कि एम.एड. शिक्षण ज्ञान के लिए है? मुझे लगता है कि शिक्षा आज के युग में केवल एक स्वार्थ बनाने की प्रक्रिया है। जितना कोई बढ़ता चला जाता है, उतनी अधिकारों की माँग करना शुरू कर देता है; कर्त्तव्य उसमें नहीं आ पाते हैं, क्योंकि शिक्षा की प्रक्रिया ने केवल उनको कुछ लाभों को प्राप्त करना ही सिखाया है।

अगर, इस संदर्भ में फ्रेरे के विचारों की सार्थकता देखें, तो मुझे लगता है कि वे इसमें कोई भूमिका नहीं निभा सकते; और मुझे ऐसा क्यों लगता है? सीधी बात है – फ्रेरे जिस दल से भी जुड़े हुए थे, क्या उसके आने के बाद शिक्षा में कोई परिवर्तन हो पाया? मान लीजिए - मार्क्सवादी विचारधारा आती है, जिससे वह जुड़े हुए थे। क्या मार्क्सवादी विचारधारा वाले अपनी बात नहीं चलाएँगे? आज आप बिना किसी राजनीतिक विचारधारा के नहीं रह सकते हैं। जब आप बिना किसी राजनीतिक विचारधारा के नहीं रह सकते हैं, तो जो भी राजनीति में आएगा, जिसके हाथ में भी शासन आएगा, क्या वह अपनी राजनीति नहीं चलाएगा? तो, क्या शिक्षा राजनीति का विषय नहीं बन जाएगा? फिर, जो भी व्यक्ति आएगा, जो भी व्यक्ति जाएगा, क्या वह पूरी प्रशासनिक व्यवस्था को बदल पाएगा? मैं आज जानता हूँ कि बहुत सारी चीज़ें सरकार बदलना चाहती है; मेरी जब उन लोगों से बातचीत होती है। लेकिन, जब चीज़ें आती हैं, तो वे सब चीज़ें नहीं हो पाती हैं; लोग ही नहीं चाहते हैं, क्योंकि हर वर्ग बंटा हुआ है; हर वर्ग स्वार्थी है। हम चाहते हैं कि मुझे लाभ प्राप्त होना चाहिए। मैं, अगर आज यह मुद्दा उठाता हूँ कि आरक्षण समाप्त करो, मानवता के नाते; यह भी तो भेदीकरण की प्रक्रिया है, तो लोग स्वीकार कर लेंगे क्या? अभी हाल ही में तो कोई गलत घटना हो गई थी; पूरा-का-पूरा आंदोलन खड़ा हो गया था। हर राजनीतिक दल को, यदि सत्ता चाहिए, तो मौलिक बदलाव नहीं आ पाएँगे। फ्रेरे की भी यही समस्या थी। तो, कहा है - उन्होंने; कहने को तो सारी बातें कही जा सकती हैं। इसलिए, यह नीति बनी है कि कथनी और करनी में तो अंतर रहता ही है।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: अभी पिछले दिनों बहुत सारी घटनाएँ घटी, जिसमें एक बहुत बड़ी प्रतिमा का उद्घाटन हुआ है – 'सरदार पटेल' जी की। आज से 5 साल पहले कितने लोग 'सरदार पटेल' से परिचित थे? जितनी भी आपकी एनसीईआरटी की किताबें आती हैं, उसमें जो भी ज्ञान दिया गया है, जो भी बातें कही गई हैं, वह किस विषय से सम्बद्ध हैं? मैं, अगर आज आपसे पूछूँ कि अमृत जी शिक्षण सम्बन्धी भारतीय सिद्धांतों का वर्णन कीजिए। प्राचीन भारत में शिक्षा के क्या-क्या सिद्धांत थे? मुझे कोई एक ऐसा उदाहरण दीजिए, जिसमें हम कह सकें कि 'स्थूल से सूक्ष्म' की ओर जा रहे हैं, तो आप कितने दे पाएँगे? इस पर चर्चा नहीं होती न? तो, इसका अर्थ क्या बना?; और जिज्ञासा भी उत्पन्न नहीं की जाती कि हम यह सब जाने। तो, इसका मतलब है कि हो गया – 'जिज्ञासा का बंध्यकरण'।

भारत में यह भी दिक्कत है कि एक ही कक्षा में 40 से 50 विद्यार्थी बैठा दिए जाते हैं; और उनकी भी जिज्ञासा है। कौन, उनको शांत करता है? हम हर बच्चे को कहते हैं, 'इंडिविजुअल डिफरेंस' पढ़ाते हैं, लेकिन कितने लोगों को 'इंडिविजुअल डिफरेंसेस' का पता है? आज जिस 'प्राइवेट' बी.एड. 'कॉलेज' में विद्यार्थियों की संख्या कम हो जाएगी, तो उसे वह बंद करना चाहेंगे। इसका मतलब - अगर, उनको छात्र चाहिए, तो फिर अध्यापक कैसे जिज्ञासाओं से जुड़े रहेंगे? इसलिए, सिर्फ सिद्धांतों की चर्चा हो रही है; व्यवहारिकता, उसकी नहीं है।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: जितनी पूर्ति होती है, उससे ज्यादा माँग हो जाती है। कारण - जनसंख्या का निरंतर आना है। जिस अनुपात से जनसंख्या बढ़ती है, क्या

उस अनुपात से विद्यालय खुलते हैं? क्या उस अनुपात से शिक्षार्थियों का प्रवेश हो पाता है?; और जिस शिक्षा को पाने के लिए वह देखते हैं, उसे प्राप्त कर वे बेकारी में तो नहीं घूम रहे हैं? तो, उसको शिक्षा दें या उसको कोई काम सिखाएँ? शिक्षित होकर कितने लोग, वस्तुतः शिक्षित कहलाए जा सकते हैं?

इसलिए जो एक मजदूर का लड़का है, जो एक रिक्शा चलाने वाले का लड़का है, वह उसे कुछ दे ही नहीं पा रहा है। वह उसे कहता है - पढ़ ले। पढ़ने के लिए उसे 'गवर्नमेंट स्कूल' में भेज दिया जाएगा। वहाँ उसके साथ जो व्यवहार किया जाएगा, वह स्कूल छोड़कर बैठ जाएगा। हमारा सिद्धांत यह कहता है कि हर विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी से भिन्न है, लेकिन पुस्तक तो सामान चल रही है।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: चुनौती दे सकती है, लेकिन ऐसा होगा नहीं। आप कितने विद्यालयों को बंद करेंगे?; भुखमरी नहीं बढ़ जाएगी? अगर आप इतने सारे, यानि व्यवहारिकता में हम जाते हैं - कितना 'परसेंट' स्कूल इस समय 'प्राइवेट' होगा? क्या उन सभी स्कूलों को सरकारी बनाया जा सकता है? क्या उनके अध्यापकों की आय का प्रश्न व्यवहारिक हो सकता है? क्या वे, जो अभिभावक हैं, 'पेरेंट्स' हैं, वे अपने बच्चों को वहाँ भेजना चाहेंगे? क्योंकि, उनका स्तर तो वही बन जाएगा। तो, फिर क्या करोगे? मैं बार-बार कहता हूँ कि फ्रेरे के विचार, तो ब्राज़ील में ही नहीं चल पाएँगे, तो यहाँ कहाँ चलेंगे। पर, विचारों का मुद्दा उठते रहना चाहिए। इससे लोगों में चिंतन क्षमता विकसित होती रहेगी; होती रहनी भी चाहिए। व्यवहारिकता उसे पाएगी या नहीं, यह एक अलग प्रश्न है। यह प्रश्न करना पड़ेगा; और ऐसा होना भी

चाहिए; एक अलग प्रश्न करना पड़ेगा। उनकी प्रासंगिकता चिंतन को विकसित करने में हो सकती है, व्यवहारिकता में नहीं हो पाएगी।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: इस प्रश्न पर साक्षात्कारदाता द्वारा प्रश्न संख्या 16 के उत्तर में ही टिप्पणी कर दी गई है।

प्रो. (डॉ.) नगेन्द्र सिंह का साक्षात्कार

2) साक्षात्कारदाता: डॉ. नगेन्द्र सिंह

आचार्य व अधिष्ठाता शोध, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक संघटक इकाई), अजमेर, राजस्थान

अधिष्ठाता शिक्षा, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान

सदस्य सचिव, आधार पत्र विकास हेतु 'राष्ट्रीय फ़ोकस समूह 2021 (विद्यालय व उच्च शिक्षा के बीच कड़ी)'

---

1) प्रश्न: फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: निश्चित रूप से फ्रेरे के विचारों पर उस समय की परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य रहा होगा; जैसे – काले-गोरे का भेदभाव, देश निकाला, और उस समय की विकट आर्थिक परिस्थितियाँ। जिन भी परिस्थितियों में हमारे विचार जन्म लेते हैं, उनका निश्चित रूप से हमारे विचारों पर असर पड़ता है।

2) प्रश्न: यदि, फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: यदि, आप आज़ादी से पहले या आज़ादी के बाद के विभिन्न दस्तावेज़ों को देखें, जिन्हें भारत सरकार द्वारा गठित की गई विभिन्न समितियों द्वारा बनाया गया था, तो आप पाएँगे कि सभी ने राष्ट्र के लक्ष्यों के अनुरूप विद्यालयी शिक्षा पर 'फ़ोकस' किया था। शिक्षा, सरकार द्वारा बनाए गए राष्ट्र के लक्ष्यों के अनुरूप ही होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, 1964-66 के 'कोठारी कमीशन' में माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण की बात कही गई है, लेकिन आप पाएँगे कि सरकार अभी भी इस लक्ष्य प्राप्ति से जूझ रही है। यह शिक्षा का काम था, जिसे भुला दिया गया। अब, प्रश्न यह है कि शिक्षा

के वास्तविक उद्देश्य क्या होने चाहिए?; जैसे - शिक्षा का एक उद्देश्य सभ्य समाज के निर्माण के लिए एक बेहतर इंसान बनाना होना चाहिए, क्योंकि भारतीय समाज एक प्राचीन समाज है, और हम एक बेहतर नागरिक चाहते हैं। इसके लिए, हमें यह देखना होगा कि शिक्षा प्राप्त कर जो बच्चे सामने आ रहे हैं, क्या वे सच में इंसान हैं?, परन्तु जहाँ तक विद्यालयी शिक्षा का सवाल है, तो भूतकाल के दो से तीन दशकों में, असल में हमने केवल विज्ञान, तकनीक, इंजीनियरिंग, और गणित इत्यादि पर ही अधिक 'फ़ोकस' किया है। इस सोच ने सारी स्कूली शिक्षा के उद्देश्य ही परिवर्तित कर दिए हैं। अभिभावक भी यही चाहते हैं कि हमारा बच्चा इंजीनियर बने, डॉक्टर बने, तो ऐसे में दूसरे अनुशासनों का क्या होगा?, जिनकी समाज को ज़्यादा आवश्यकता है। यदि, इस युग का कोई इतिहास लिखा जाए, तो यह युग ऐसा होगा, जिसमें हमारे पास कोई विशेष विशेषज्ञ नहीं है, जो 'शिक्षा के इतिहास' या 'शिक्षा के अर्थशास्त्र' पर ध्यान केंद्रित कर सकें। असल में, इस युग को कहा जाना चाहिए – 'एरा ऑफ इंक्लूजन एंड फ़्यूजन'। 'इंक्लूजन' का अर्थ है - इस सारे समाज को एक बिंदु, यानि 'इंक्लूसिवनेस' की ओर देखना चाहिए। शिक्षणशास्त्र के संदर्भ में अथवा एक शिक्षाविद के नाते यह एक ऐसा युग है, जिसमें हमें तीन चीजों को 'इंफ्यूज़्ड' करना होगा। यह तीन चीजें क्या हैं? – विषयवस्तु, शिक्षणशास्त्र, और प्रौद्योगिकी। आप वास्तव में, आने वाली पीढ़ी का इसके ज़रिए सामना कर सकते हैं। अगर शिक्षक 'वेल वर्स्ड' नहीं होगा, 'वेल इक्विप्ड' नहीं होगा, तो वह 'इंस्ट्रक्शनल' वाले भाग को 'इंफ्यूज़' कैसे कर सकेगा? अगर, आप इन चीज़ों पर ध्यान केन्द्रित नहीं करेंगे, तो आप कक्षा की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं ला पाएँगे।

3) प्रश्न: फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: स्वाभाविक तौर पर फ्रेरे के विचार प्रासंगिक हैं। इसलिए, मैं कह रहा हूँ कि ऐसे बहुत से मुद्दे हैं, जिन्हें स्कूली शिक्षा से बाहर कर दिया गया है; और जो बच्चे में समझ, संवेदना, और शिक्षा पैदा कर सकते हैं।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: आज़ादी के बाद शिक्षा और स्वास्थ्य को सामाजिक कल्याण विभाग के अंतर्गत माना गया। इसके अतिरिक्त, वैश्वीकरण के प्रभावों के कारण शिक्षा के उदारीकरण और निजीकरण को नीतियों के अंतर्गत सभी बातों का उत्तर माना गया। आज के समय में शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या है - लोगों को शिक्षित करना। हमारे पास अनेक कार्यक्रम हैं; जैसे – 'एजुकेशन फॉर ऑल', लेकिन हम अभी तक इसमें सफ़ल नहीं हुए हैं, जबकि 1986 की शिक्षा नीति आई; 1992 की संशोधित नीति आई, तो उस समय भविष्य की पीढ़ी ने सोचा कि शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए निजीकरण ही केवल इसका एक मात्र उत्तर हो सकता है। सभी जानते हैं कि निजीकरण के नाम पर क्या हुआ है – 'शिक्षा का पण्यीकरण'। इसलिए, आपका प्रश्न बड़ा प्रासंगिक है।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: प्रबंधन, चाहे वह सार्वजनिक क्षेत्र का हो या निजी क्षेत्र का, बात असल में यह है कि आज शिक्षक समाज के हाथों की कठपुतली बनकर रह गया है। उसको पाठ्यचर्या कौन बनाकर देगा? – एनसीईआरटी; 'मेथड्स' कौन बनाएगा - आरआईई, 'ट्रेनिंग इंस्टिट्यूट'; परीक्षा कौन करेगा – सीबीएसई, 'स्टेट बोर्ड', तो शिक्षक क्या करेगा? भाई, फ़िर शिक्षक की 'ऑटोनॉमी' की बात भी की जाती है!

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी है, क्योंकि हमारे बाद जो देश आज़ाद हुए, उन्होंने ये 'टारगेट' 'अचीव' कर लिए; हम अभी तक नहीं कर पाए। उस 'टारगेट' को बढ़ाते चले आ रहे हैं। कितनी अजीब बात है! फ़्रेरे के विचार इस स्थिति को बदलने में हमारी सहायता कर सकते हैं, अगर हम

केंद्रित होकर या एक दिशा में काम करें। आज के आर्थिक युग में उनके विचार बड़े महत्त्वपूर्ण हैं।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: असल में, हमें यह देखना होगा कि हम शिक्षा को परिभाषित कैसे करते हैं; जैसे - मैंने कई शिक्षाविदों से पूछा है कि आप विद्या और शिक्षा में क्या फ़र्क पाते हैं?; कभी मर्ज़ी आई - विद्यार्थी कह दिया; कभी मर्ज़ी आई - शिक्षार्थी कह दिया। ऐसा क्यों है? जब, इम्तिहान ले लिया, तो परीक्षार्थी कह दिया। मुझे बताइए कि शिक्षा और विद्या में क्या फ़र्क है? ये अवधारणाएँ बहुत स्पष्ट नहीं हैं। अगर, हमारे विद्यार्थी ही स्पष्ट नहीं हैं, तो हम 'प्री-सर्विस टीचर एजुकेशन कोर्स' में कक्षाओं में शिक्षक को क्या सिखा रहे हैं? इसलिए, हमें पहले स्पष्ट होना होगा कि हम किस तरह की शिक्षा देना चाहते हैं। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन में विद्यालयी शिक्षा में तीन तरह के 'कोर्स' हैं - वहाँ 'प्रीलिमिनरीज़ क्लास' हैं, 'वोकेशनल कोर्स' हैं, और 'एलिमेंट्री कोर्स' हैं। अगर, कोई वैज्ञानिक या इंजीनियर बनना चाहता है, तो वह संबंधित 'कोर्स' ले सकता है। व्यवसाय संबंधित 'कोर्स' वे लोग, जो 'ब्रेड' और 'बटर' कमाना चाहते हैं, और अपनी 'लाइफ इंजॉय' करना चाहते हैं, ले सकते हैं। जो वैज्ञानिक या 'आइंस्टाइन' नहीं बनना चाहते, वे दूसरे 'कोर्स' को ले सकते हैं। इस तरह से 'कोर्स' का विभाजन स्कूली स्तर पर होना चाहिए।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: "स्वतंत्रता का भय" है, क्योंकि सभी स्तरों पर अविश्वास है, जो कि हमने अपनी नीतियों की वजह से पैदा किया है। मुहे याद है - अल्पसंख्यकों

के लिए एक कार्यक्रम था। वहाँ के 'पार्टिसिपेंट' बताते हैं कि अगर, हम मदरसा में जाकर लोगों को यह बताते हैं कि सरकार ने यह 'पॉलिसी' चला रखी है; और आप इसे अपने यहाँ 'इंप्लीमेंट' कीजिए; और आपको इसका 'इंसेंटिव' भी मिलेगा, तो वे समझते हैं कि यदि, हमने इसे लागू कर दिया, तो हमारा मदरसा हमारे हाथ से गया। यह क्या है? अगर, आप इस कथन का विश्लेषण करें, तो यह वही है - जिसकी बात आप कर रहे हैं।

जहाँ तक 'पेरेंट्स' की बात है – 'पेरेंट्स' का डर मूल्यों को लेकर है; जैसा कि बाहर के समाजों में हो रहा है। मैं कई 'पेरेंट्स' को बात करते हुए सुनता हूँ कि भाई अब बच्चों को स्कूल भेजने से भी डर लगने लगा है, क्योंकि बच्चियों को भेजो, तो रास्तों का बहुत बुरा हाल है; उनकी सुरक्षा एक समस्या है। ऐसे में मुझे लगता है कि प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल व्यवस्थित सुधारों में होना चाहिए। 'मास एजुकेशन' में भी प्रौद्योगिकी का उपयोग होना चाहिए। आजकल, सभी बच्चे मोबाइल और लैपटॉप अपने 'पेरेंट्स' की तुलना में ज़्यादा अच्छी तरह चलाते हैं, परन्तु मेरे विचार से प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल को लेकर हमारे शिक्षकों और समाज की ज़िम्मेदारी ज़्यादा बढ़ जाती है। हमें एक शिक्षक के रूप में इसमें अपनी भूमिका को देखना होगा। हमें विद्यालय के बाहर की बातों को प्रौद्योगिकी के ज़रिए बच्चों तक पहुँचाना होगा; और उन्हें समझाना होगा। मैंने ब्रिटेन और केनेडा में देखा था कि शिक्षकों, वकीलों, इत्यादि के 'सोशल मीडिया' पर अपने समूह हैं, जहाँ वे अपने अनुभव, समस्याएँ, पेशे से संबंधित विषयवस्तु, इत्यादि एक-दूसरे से शेयर करते हैं, परन्तु यहाँ हम देखते हैं कि 'सोशल मीडिया' का उपयोग मनोरंजन के उद्देश्य से हो रहा है, बुरे संदेशों को फैलाने में हो रहा है या समाज में विभाजन पैदा करने के लिए। कल रात एक 'न्यूज़' आई थी कि उत्तर प्रदेश में 'मुस्लिम कम्युनिटी' को एक 'वेक्सीनेशन' देनी थी, क्योंकि वे लोग एक खास बीमारी से पीड़ित हो रहे थे, परन्तु महिलाओं ने अपने बच्चों को वह 'वैक्सीनेशन' देने से मना कर दिया; केवल अनपढ़ता की वजह से। अंत में, सरकार ने एक मुस्लिम डॉक्टर को लोगों को भरोसा दिलाने के लिए भेजा। इसे हम अविश्वास की स्थिति के रूप में देख सकते हैं। अगर, हम शिक्षा प्रणाली को देखते हैं, तो हम किसी व्यक्ति विशेष को प्रशिक्षित करते हैं;

उसकी 'क्वालिफिकेशन', 'एक्सपीरियंस', इत्यादि को 'कंफर्म' करके ही उसे शिक्षक 'एपाइंट' करते हैं। इसलिए, हमें उस शिक्षक पर और उसके पढ़ाए हुए पर भरोसा करना चाहिए। समाज क्या चाहता है? समाज चाहता है - बच्चों को पढ़ाया जाए। पहले इसी भारतीय समाज में क्या होता था? आचार्य गुरुकुल में यही पढ़ाते थे। आचार्यों को 'मॉनिटर' करने के लिए गुरुकुल में कोई नहीं होता था। चाहे राजा हो या रंक, जिस किसी को भी गुरुकुल में उसके शारीरिक, मानसिक, और बौद्धिक विकास के लिए भेजा जाता था, वह केवल आचार्य की 'रिस्पांसिबिलिटी' होती थी। वहाँ कोई और 'रिस्पांसिबल' नहीं होता था। अब यह गलत हो रहा है कि हम शिक्षकों पर भरोसा ही नहीं कर रहे हैं। अब हम एक 'हेड टीचर' रख रहे हैं, जो यह 'मॉनिटर' करता है कि शिक्षक 'क्लास' में जाता है या नहीं, जबकि आपने ही उस 'टीचर' को उसकी 'क्वालिफिकेशन' और 'एक्सपीरियंस' को देखकर 'सिलेक्ट' किया था, लेकिन आप उस पर भरोसा ही नहीं कर रहे। अब आपको किसी 'इंस्पेक्टर' की ज़रूरत पड़ रही है – 'प्रिंसिपल' और 'हेड मास्टर' को 'मॉनिटर' करने के लिए; और वह भी 'क्वालिफाइड' है, जिसे आपने ही 'सिलेक्ट' किया है, लेकिन आप उस पर भरोसा नहीं कर रहे हैं या आप 'डेप्युटी डायरेक्टर' और 'असिस्टेंट डायरेक्टर' रख रहे हैं। इन सब बातों की समाज को ज़रूरत नहीं है। समाज क्या चाहता है? - उसके बच्चे को पढ़ाया जाए। कौन पढ़ाएगा? – 'टीचर'। जिस 'टीचर' को आपने 'एपाइंट' किया है, उसमें विश्वास तो रखिए। यदि, आप उस पर अविश्वास रखते हैं, तो फिर काम कैसे चलेगा?

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: यह हो सकता है। शिक्षक को इसमें सावधानी बरतनी चाहिए। एक 'टीचर' को, जब वह स्कूल की अपनी कक्षाओं में प्रवेश कर रहा होता है, तो

उसे मन में यह ध्यान रखना चाहिए कि एक 'टीचर' का रोल क्या है?, उससे समाज क्या चाह रहा है? व्यक्तिगत रूप से शिक्षक के अपने विचार हो सकते हैं, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह अपना व्यक्तित्व अपने विद्यार्थियों पर थोपे। उसे अपनी कक्षाओं का वातावरण लोकतांत्रिक रखना होगा। मुझे याद है – जब, मैं एम.एड. का विद्यार्थी था, तो मेरे शिक्षक अक्सर यह कहा करते थे कि जो अच्छा 'लिसनर' नहीं है, वह अच्छा 'लर्नर' भी नहीं हो सकता। मुझे यह आज के युग में चरितार्थ होता दिख रहा है। हम 'थ्योरी ऑफ टीचिंग' और 'थ्योरी ऑफ़ लर्निंग' पढ़ते हैं, पर सबसे पहली चीज़ यह है कि शिक्षक को ही पहले सीखना चाहिए न कि इस तरह की सोच रखनी चाहिए कि विद्यार्थी एक खाली बर्तन है, जिसे हम भर देंगे।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: साक्षर तो हो ही नहीं पाए हैं। इसलिए, तो यह एक समस्या है। तभी, 'नेशनल लिटरेसी मिशन' की ज़रूरत पड़ी थी। हम 'लिटरेसी' का वह 'टारगेट' भी 'अचीव' नहीं कर पाए, जबकि कहा तो यह जाता है कि किसी भी लोकतंत्र को चलाने के लिए कम-से-कम लोगों की प्राथमिक स्तर की शिक्षा तो होनी ही चाहिए। इसीलिए, 'शिक्षा का सार्वभौमीकरण', 'सभी के लिए शिक्षा', और 'सर्वशिक्षा अभियान' जैसे मुद्दे उभर कर सामने आए। इसलिए, मेरे लिए शिक्षा के उद्देश्यों वाला सवाल महत्त्वपूर्ण है। हमें अवधारणाओं का स्पष्ट होना आवश्यक है। हमें यह सोचना होगा कि हम आगे क्या चाहते हैं?, हम शिक्षा का मतलब क्या ले रहे हैं?, क्या हम शिक्षा में केवल ज्ञान को देख रहे हैं या 'विशडम' की बात भी कर रहे हैं? लोग अक्सर कहते मिल जाएँगे कि ग्रामीण क्षेत्रों में जाओ; वहाँ के लोगों की 'विशडम' ज़्यादा है, जबकि वे ज़्यादा शिक्षित नहीं हैं। वह 'विशडमफुल' विद्यार्थी होते हैं।

इसके अलावा, जहाँ तक पैसे की कमी का प्रश्न है, तो मुझे लगता है - पैसे की कमी कभी नहीं रही है; राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी रही है। यह सवाल उठता रहा है कि हम शिक्षा पर जीडीपी का कितना प्रतिशत खर्च करते हैं? हमें अक्सर अमेरिका का उदाहरण दिया जाता है। आज हम 2.5% से घसीटते-घसीटते शायद 3.3% तक आ गए हैं। 'डिफेंस सेक्टर' में हमारा खर्चा ज़्यादा है। यह अपने आप में दिखाता है कि पैसे की कमी तो नहीं है। एशिया महाद्वीप में ऐसे भी देश हैं, जिनसे हम सीख सकते हैं। हम जापान जैसे देशों से सीख सकते हैं कि लोगों के विकास के लिए सारा पैसा कैसे नियोजित किया जाता है। आज जापान को आधुनिक समाजों में सबसे अधिक आधुनिक माना जाता है।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: नहीं, यह 'हैव' और 'हैव नॉट' के बीच सही प्रकार से वितरण न होने का प्रश्न है। 'हैव' और 'हैव नॉट' के बीच 'गैप' कम होना चाहिए, परन्तु कुछ विशेष प्रकार की नीतियों की वजह से यह 'गेप' बढ़ता ही चला गया है। समाज में संसाधनों का बँटवारा ठीक प्रकार से नहीं हुआ है।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/देखती हैं?

उत्तर: यदि, भारत में राजनीतिक व्यवस्था में सुधारों की बात करें, तो हम कह सकते हैं कि आज की सरकार 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' की बात कर रही है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए – 'राष्ट्रीय चरित्र' का निर्माण करना। यदि, हम यह नहीं करेंगे, तो हम इसकी कल्पना कैसे कर सकते हैं कि भारत एक महान राष्ट्र बनेगा? मैं अक्सर यह पूछता हूँ कि भारत एक देश है या राष्ट्र? देश को एक राजनीतिक इकाई के रूप में परिभाषित किया जा सकता

है, परन्तु यदि हमें राष्ट्र का निर्माण करना है, तो हमें बहुत सोचना होगा; और सबसे ज़रूरी बात है – 'राष्ट्रीय चरित्र' और शिक्षा ही केवल एकमात्र औज़ार हैं, जिसके ज़रिए हम इसे प्राप्त कर सकते हैं। जहाँ तक भारत में आर्थिक स्थिति में सुधारों की बात है, तो हम कह सकते हैं कि भारत में आर्थिक सुधार हो रहा है। पहले हमारे पास अनौपचारिक आर्थिक व्यवस्था थी; अब यह औपचारिक हो रही है; जैसे - भारत में प्रथमत: 'विमुद्रीकरण' हुआ; अब जीएसटी को देखा जा रहा है। यह सभी कुछ सुधारों की ओर इशारा कर रहा है।

इसके अलावा, भारत में जहाँ तक सामाजिक परिस्थितियों का प्रश्न है, तो भारत की परिस्थितियाँ बहुलवादी समाज की हैं। भारत पर बड़ा पैना अंतर्राष्ट्रीय फ़ोकस है। यूरोप में एक या अनेक ऐसे देश हैं, जिन्हें 'एक राष्ट्र' या 'एक धर्म को मानने वाले देश' कहा जा सकता है। ये सभी देश भारत की बहुलतावादी प्रकृति को समझने में नाकाम रहे हैं। उनके लिए यह समझना बड़ा कठिन रहा है कि अलग-अलग धर्मों को मानने वाले लोग एक ही देश में कैसे रह लेते हैं? उनके लिए इस तरह की समझ या स्थिति को पचाना काफ़ी कठिन रहा है। इसलिए, मैं कह रहा हूँ कि भारत पर पैनी अंतरराष्ट्रीय दृष्टि है, जो भारतीय 'मॉडल' को 'फ़ेल' करना चाहती है। मैं नहीं जानता कि मैं अपनी बात आप तक पहुँचा पाया हूँ या नहीं।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: भारत में प्रयोगों के नाम पर निजीकरण हो रहा है। मुझे नहीं लगता कि वे इन मुद्दों पर अनुसंधान करते हैं। उन्होंने स्कूली शिक्षा में 'पॉलिसी' के नाम पर कई चीजें 'इंट्रोड्यूस' की हैं, पर इसका परिणाम क्या हुआ? असल में, 'पॉलिसी' में किसी की रुचि नहीं है। 1968 में स्कूली शिक्षा पर नीति बनी। उसके लगभग 18 साल के बाद 1986 में शिक्षा नीति बनी; और 1986 के

पश्चात इतने सालों के बाद अब इस पर सोचा जा रहा है। यानि, इतने बड़े देश की शिक्षा नीति को बनने में इतने अधिक साल लगते हैं!

मैं इस बात को राष्ट्रीय स्तर के कई पटलों पर उठा चुका हूँ कि 1964-66 में 'कोठारी कमीशन' को लाया गया। उसने विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न पक्षों पर 'फ़ोकस' किया। फिर, उसके आधार पर नीति बनी; और आगे की प्रक्रिया; जैसे – पाठ्यक्रम बनने की, पाठ्यपुस्तक बनने की, शिक्षक प्रशिक्षण की, इत्यादि पर आगे बढ़ा गया, लेकिन 1964-66 के 'कोठारी कमीशन' के बाद कोई कमीशन ही नहीं है! 1986 के बाद आगे नई 'पॉलिसी' को बनने में इतना समय लगा! भला एक देश कितने सालों तक बिना किसी शिक्षा नीति के और 'पैरा-टीचर' जैसी अवधारणाओं के साथ रह सकता है? ये बातें सारे शिक्षण समुदाय को गहरे स्तर पर प्रभावित कर रहीं हैं।

मैं कल ही एक वीडियो देख रहा था कि बिहार के एक शिक्षक को जनवरी, दिसंबर की 'स्पेलिंग' ही नहीं आती है। कोई मुझे वह वीडियो दिखा रहा था कि सर, इसे देखिए। मैंने उन्हें कहा कि इसे मत दिखाइए। यह व्यक्ति 'टीचर' नहीं है। ये लोग यह बता रहे हैं कि यह व्यक्ति बिहार का शिक्षक है, पर असल में यह विद्या का शिक्षक नहीं है। हमने बहुत सारे 'पैरा-टीचर' अलग-अलग नामों से इकट्ठे कर लिए हैं; जैसे – 'सरस्वती पुत्र', 'शिक्षामित्र', 'गुरुमित्र', इत्यादि, लेकिन जो 'क्वालिफाइड' और प्रशिक्षित शिक्षक असल में व्यवस्था में आने चाहिए थे, उनका 'सिलेक्शन' ये लोग नहीं कर पा रहे हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है।

14) प्रश्न: फ़्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: आपके प्रश्न में ही इस प्रश्न का उत्तर निहित है। मुझे शायद बोलने की आवश्यकता नहीं है। विद्यालयी शिक्षा प्रणाली पूरी तरह वर्ग आधारित हो गई है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ़्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: शायद, इस तरह के नागरिक, जो पढ़-लिख कर बाहर चले जाते हैं। अगर, इसका 'क्रेडिट' हम शिक्षा व्यवस्था को देना चाहें, तो शायद यह बेईमानी होगी। असल में, यह उनके व्यक्तिगत प्रयासों की वजह से है; जैसे – खेलों की बात करें, तो 'सचिन तेंदुलकर' या पी. टी. उषा' जैसे लोग; उनकी तो किसी ने सहायता नहीं की। वे तो स्वयं ही किसी से 'चैरिटी' लेकर या पता नहीं क्या-क्या करके, अपने स्तर पर ही अपने खाने-पीने का इंतज़ाम करते थे। इस बात का 'क्रेडिट' अगर व्यवस्था ले ले, तो मुझे लगता है - यह बेईमानी होगी। असल में, शिक्षा व्यवस्था से जो बच्चे निकल रहे हैं, वे व्यवस्था में 'कोलेप्स' कर रहे हैं। इस व्यवस्था में हम काबिल नहीं बन सके हैं। इसलिए, मैं कहता हूँ कि इसीलिए एनसीईआरटी के 2000 वाले एनसीएफ में ईक्यू, आईक्यू, और एसक्यू की बात की गई थी। केवल आईक्यू की ही आवश्यकता नहीं है, साथ ही 'सोशल इंटेलिजेंस' और 'इमोशनल इंटेलिजेंस' की भी आवश्यकता होगी। इन दोनों के बीच असंतुलन होने की वजह से ही हमारे पास बुरे परिणाम आए हैं। आप पाएँगे कि 76 प्रतिशत, जो कि कम नहीं होता, पाने वाली बच्ची भी आज के समय में 'सुसाइड' कर रही है। इस तरह की स्थितियों को बदलने में फ़्रेरे के विचार निश्चित तौर पर सहायता कर सकते हैं। इसके लिए हमें विभिन्न संस्थाओं में 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' की चर्चा करानी होगी। अगर, वाकई में इस दिशा में काम किया जाए, तो हमें कामयाबी मिल सकती है। मैं इस बारे में हताश नहीं हूँ। यह हमारा ही 'सिस्टम' है; हमें काम करना है; और आगे बढ़ना है।

16) प्रश्न: फ़्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: आप फ़्रेरे के बारे में पूछ रहे हैं। मैं यहाँ इस समय फ़्रेरे और इवान इलिच को 'डी-स्कूलिंग' के संदर्भ में देख रहा हूँ। असल में, हमें सोचना होगा कि

हम बच्चे किसके लिए तैयार कर रहे हैं? यकीनन - 'सोसाइटी' के लिए। इसके बाद, हम उसे 'सोसाइटी' से निकालकर एक विद्यालय में बंद करके 'आर्टिफिशियल' चीज़ें दे रहे हैं; और कह रहे हैं कि हम यहाँ बच्चों को 'सोसाइटी' के लिए तैयार कर रहे हैं; हम उन्हें समाज का सक्रिय सदस्य बनाने का प्रयास कर रहे हैं, जबकि आपको पता ही है कि हम बी.एड. में प्रकृतिवाद और प्रयोजनवाद के बारे में पढ़ाते हैं, जिसके अनुसार 'आर्टिफिशियल सेटिंग' में उतनी अच्छी 'लर्निंग' नहीं होती, जितनी कि 'नेचुरल सेटिंग' में। इसीलिए, 'डी-स्कूलिंग' की बात की गई थी। मुझे लगता है कि हम भिन्न रूप में प्रगति कर रहे हैं, परन्तु हमें इन विचारकों के विचारों का अनुसरण करना पड़ेगा।

आप देख सकते हैं कि आजकल परिसरों को 'वाईफाई' की सुविधा प्रदान कर दी गई; और सुनने को मिलता है कि 'हॉस्टल' से बच्चे कक्षाओं में आते ही नहीं, क्योंकि वे वहीं बैठे-बैठे ज्ञान या सूचना को 'वेबसाइट' और 'गूगल' के ज़रिए ग्रहण कर लेते हैं। अब, शिक्षक उनके लिए एकमात्र ज्ञान के स्रोत नहीं हैं। हमारी औपचारिक शिक्षा प्रणाली 'फ़ेस-टू-फ़ेस मोड' की है। इसके अलावा, हम 'डिस्टेंस मोड' और 'ई-मोड' भी देख सकते हैं। मुझे लगता है कि यदि, हमें शिक्षा के लक्ष्यों को प्राप्त करना है, तो हमें इन तीनों 'मोड्स' में 'कोआर्डिनेशन', 'कोलैबोरेशन', और 'कोऑपरेशन' करना होगा।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: मेरी नज़र में, जैसा कि मैंने पहले प्रश्न के उत्तर में ही कहा था कि शिक्षा के उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए। हमारे यहाँ ऐसा समाज रहा है, जिसमें वर्ण व्यवस्था देखने में आती है। इस व्यवस्था में जो हाथ का काम करने वाले लोग थे, वे आज भी हैं। उन्हें बी.ए. या एम.ए. की 'डिग्री' की आवश्यकता नहीं है। हमें यह समझने की ज़रूरत है कि अगर, हम इस वर्ग के लोगों को

शिक्षित करना चाहते हैं, तो हमें उन्हें ऐसी शिक्षा देनी होगी, जिसके ज़रिए वे अपने पेशों या काम-धंधों के संदर्भ में अपनी आय के स्रोत बढ़ा सकें। यदि, भारत की अर्थव्यवस्था की बात करें, तो कृषि इसका आधार है। ऐसा कहा जाता है कि भारतीय समाज या देश कृषि प्रधान है। यहाँ की अर्थव्यवस्था इसी से चलती है। त्योहारों का भी इससे सम्बन्ध रहा है; जैसे - फसलों के संदर्भ में ही 'लोहड़ी' मनाई जाती है। इसलिए, हमें यह सोचना होगा कि यदि, किसानों को शिक्षित करना है, तो उन्हें ऐसी शिक्षा देनी होगी, जिससे वे अपना काम आसानी से कर सकें। किसानों को प्रौढ़ मानकर उन्हें साक्षर बनाने की प्रक्रिया से उनका नुकसान ही हुआ है। इसके अतिरिक्त, किसानों की आत्महत्या एक तथ्य है, परन्तु इसका राजनीतिकरण करने की आवश्यकता नहीं है। हमारे जो किसान या सीमांत किसान अनपढ़ हैं, असल में उन्हें कृषि सम्बन्धी तकनीकों का ज्ञान नहीं है; जैसे - थ्रेशर कैसे काम करता है? या कौन-कौन सी कृषि सम्बन्धी बढ़िया मशीनें उपलब्ध हैं? इस संदर्भ में उन्हें शिक्षित करने की आवश्यकता है, परन्तु हमें यह देखना होगा कि विभिन्न स्कूलों में से कितने स्कूलों में कृषि एक विषय के रूप में उपलब्ध है? पहले किसी समय, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों में ही बी.एड. एग्रीकल्चर हुआ करता था। 'डेमोंस्ट्रेशन स्कूल' में कृषि एक विषय था।

इसके अलावा, योजना आयोगों की बात करें, तो उन्हें राष्ट्रीय लक्ष्यों को पूरा करने के संदर्भ में नियोजित किया गया था। इसीलिए, विभिन्न योजना आयोगों ने अपने-अपने समय में 'हरित क्राँति', 'पीली क्राँति', 'नीली क्राँति', 'श्वेत क्राँति', इत्यादि को लक्षित किया था; और इसी के अनुरूप शिक्षा के लक्ष्य बनाए गए। अगर, आज किसी से पूछें कि कौन से क्रम की पंचवर्षीय योजना चल रही है? 12वीं, 13वीं, या 14वीं, तो शायद ही कोई बता पाता है। असल में, पढ़े-लिखे लोगों का जागरूकता स्तर बहुत पीछे चला गया है। यदि, कोई वर्तमान की पंचवर्षीय योजना का क्रम बता भी दे, तो उसके लिए योजना के लक्ष्यों को बताना कठिन हो जाता है। इसलिए, मैंने 'कोआर्डिनेशन', 'कोलैबोरेशन', और 'कोऑपरेशन' की बात की थी। हमें इन तीनों को बड़ी गहराई से समझना होगा।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: मैं समझता हूँ कि आज के दौर में अब धीरे-धीरे लोगों को यह बात समझ में आने लगी है। उस समय हम दूरी की वजह से यह चाह रहे थे कि 'पड़ोसी विद्यालय नीति' को स्वीकार कर लिया जाए। 'राममूर्ति कमेटी' ने भी इसकी अनुशंसा की थी, पर किन्ही कारणों की वजह से इसे नहीं माना गया, परन्तु आज अभिभावकों को यह समझ में आ रहा है कि यदि, वे अपने बच्चे को बहुत दूर के विद्यालय में भेजते हैं, तो आठवीं कक्षा के बाद अधिकतर स्कूल परिवहन की सुविधा प्रदान नहीं करना चाहते। इसलिए, उन्हें मजबूरी में बच्चे को मोटरसाइकिल इत्यादि दिलानी पड़ती है; और बहुत दूर के विद्यालय में जाने पर यात्रा के दौरान दुर्घटना का भय भी रहता है।

इसलिए, अभिभावकों को यह बात समझ में आने लगी है कि बच्चे को जितना नज़दीक के विद्यालय में डालेंगे, उतना ही उनका तनाव कम होगा; और बच्चे का भी। परिणामस्वरूप, बच्चा अपनी शिक्षा पर अधिक ध्यान दे पाएगा। इसलिए, इस संदर्भ में अब धीरे-धीरे दबाव बन रहा है; और सभी अभिभावक अपने बच्चे को नज़दीक के विद्यालय में ही दाखिला दिलाना चाह रहे हैं।

इसके अलावा, यदि 'समान विद्यालयी शिक्षा' की बात करें, तो अभी भी आर्थिक परिस्थितियों के चलते बच्चे अलग-अलग तरह के विद्यालयों में जा रहे हैं। वर्गों की वजह से शिक्षा का बंटवारा तो है ही। यदि, फ़्रेरे के सिद्धांतों की बात करें, तो मुझे लगता है कि हमें अब सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक न्याय की बात भी करनी होगी। हमें भारतीय संविधान के संदर्भ में लोगों को सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक न्याय भी दिलाना होगा।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: मैंने आपसे पहले ही कहा था कि हमें 'फ़ेस-टू-फ़ेस मोड' के अलावा 'डिस्टेंस मोड', और 'ई-मोड' को भी देखना होगा। हमें इनमें 'कोआर्डिनेशन', 'कोलैबोरेशन', और 'कोऑपरेशन' की बात करनी होगी। हमें इन्हें बड़ी अच्छी तरह समझ कर चलना होगा। इसलिए, मैं कहता हूँ कि 'फ़ेस-टू-फ़ेस मोड' 'डाइल्यूटिंग' है, क्योंकि इसमें औपचारिक उपस्थिति, इत्यादि की जो रूढ़ता है, वे सभी बातें व्यवस्था को फ़ायदे की बजाय नुकसान ही पहुँचाने वाली हैं। इसके अतिरिक्त, यदि 'मॉनिटरिंग' इत्यादि की जाए, तो यह तब तक ठीक प्रकार से संभव नहीं हो पाएगी, जब तक हम 'राष्ट्रीय चरित्र निर्माण' की बात नहीं करेंगे।

आपको शायद मुझ से ज़्यादा ही पता होगा कि भारत का भ्रष्ट देशों की सूची में कौन-सा स्थान है? भ्रष्टाचार शिक्षा व्यवस्था में भी है। आपने देखा ही होगा कि दाखिले से लेकर मूल्यांकन तक लोग विभिन्न बिंदुओं पर चर्चा करते हैं, लेकिन इसमें सुधार कैसे हो? या इस पर कैसे अमल किया जाए?, इस बात पर चर्चा के लिए तैयार नहीं होते। जिस दिन ये लोग इन बातों पर चर्चा के लिए तैयार हो जाएँगे; और परिवर्तन का बीड़ा उठा लेंगे, ये सभी बातें इतनी बड़ी नहीं है कि समस्या के रूप में हमारे सामने आ सकें।

प्रो. (डॉ.) आयुष्मान गोस्वामी का साक्षात्कार

3) साक्षात्कारदाता: डॉ. आयुष्मान गोस्वामी
आचार्य व विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक संघटक इकाई), अजमेर, राजस्थान
सदस्य सचिव, आधार पत्र विकास हेतु 'राष्ट्रीय फ़ोकस समूह 2021 ('प्रारंभिक बाल्य देखभाल व शिक्षा' एवं 'आधारभूत साक्षरता व संख्याज्ञान (आयु: 0 – 8 वर्ष)''

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: फ़्रेरे का अध्ययन करने पर मुझे लगता है कि पहली बात तो यह है कि कोई भी विचारक अपने काल और परिस्थितियों की उपज होता है। यह कहना बड़ा मुश्किल होता है; और बड़ा समय भी लेता है कि आदमी अपनी काल और परिस्थितियों से ऊपर उठकर कालजयी हो जाए। यह बड़ा मुश्किल है। फ़्रेरे की जो परिस्थितियाँ थी, उदाहरण के लिए - निरक्षरता की परिस्थितियाँ थीं, निर्धनता की स्थिति भी थी या राजनीतिक अवसाद की स्थिति थी, उन स्थितियों में; खासकर उन वर्गों के लिए कार्य करना, जो वंचित हैं, उनके लिए आवाज़ उठाना, और उनकी समस्याओं को समझ पाना, यह बड़ी बात है। मार्क्स की परंपराओं में भी आप इस भेद को किसी-न-किसी रूप में देख सकते हैं। समाज में एक वंचित, शोषित या गरीब वर्ग है, तो एक पूरा-का-पूरा साधन संपन्न वर्ग भी है। इस तरह का भेद हर सभ्यता में या समाज में किसी-न-किसी रूप में रहेगा ही। इसलिए, मुझे लगता है कि फ़्रेरे कि जो भी उस समय की सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, उन्होंने उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों के ताने-बाने को बुनने में सहायता प्रदान की होगी। उन्होंने सोचा होगा कि मैं इस वर्ग के लिए क्या कर सकता हूँ? वंचित वर्ग समाज का एक बड़ा वर्ग है; और जब तक ये वर्ग मुख्यधारा

से नहीं जुड़ेगा, तब तक हम जिसे विकास कहते हैं या जिसे मानवतावाद कहते हैं या जिसे हम सबको साथ लेकर चलने का भाव कहते हैं, उसे पाना बड़ा कठिन होगा।

2) प्रश्न: यदि, फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: देखिए - शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में, हालाँकि हम उस तरह से बात न करें, जिस तरह से गाँधी जी और विवेकानंद जी ने की है; जैसे कि मनुष्य के अंदर व्याप्त पूर्णता को साकार करना, इत्यादि। फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन में मुझे कहीं-न-कहीं समाजवादी या प्रयोजनवादी दृष्टि दिखाई देती है, अर्थात् मुझे सामने एक वर्ग दिखाई दे रहा है, जो वंचित है, जिसके पास सुविधाओं का अभाव है; और जिसके शोषण का सबसे बड़ा कारण है कि उसके पास शिक्षा का अभाव है। तो, शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य यह हो सकता है कि शिक्षा व्यक्ति को समाज की परिस्थितियों के अनुसार ढलने के योग्य बनाए। शिक्षा व्यक्ति को वह क्षमता प्रदान करे कि वह अपनी क्षमताओं को या वह जो कर सकता है, उसे पहचान ले। असल में, शिक्षा एक बहुत बड़ी ताकत है; और उन्हें यह समझना होगा कि जब तक आप शिक्षित नहीं होंगे, तब तक आप अपने साथ हो रहे शोषण, अन्याय या अत्याचार का विरोध नहीं कर सकेंगे। तो, आपके साथ हो रहे शोषण का, जो कि सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों रूप से गलत है, प्रतिकार करने की आपकी क्षमता को विकसित करना, यह शिक्षा का बड़ा उद्देश्य हो सकता है।

जहाँ तक इन उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रश्न है, तो देखिए - आज हम शिक्षा के सार्वभौमीकरण की बात कर रहे हैं, लेकिन सार्वभौमीकरण केवल कहने मात्र से नहीं होगा। सबसे बड़ी बात यह है कि अगर हम सभी तक शिक्षा पहुँचा रहे हैं, तो हमें यह देखना होगा कि क्या गुणवत्तायुक्त शिक्षा पहुँच रही है या नहीं? ठीक है कि हमने नारा दे दिया; सबको शिक्षा मिल जाएगी; ठीक है। पर, यदि हम हमारे समाज में ही देखें, तो कम-से-कम 18 से 22 तरह के

विद्यालय मिल जाएँगे। जहाँ एक ओर ऐसा विद्यालय भी मिलेगा, जहाँ किसी तरह की सुविधा नहीं है; कहने भर को 'बिल्डिंग' है, कक्षा है, अध्यापक हैं, पर सुविधाओं का पूरी तरह से अभाव है; और दूसरी तरफ रईस, साधन-संपन्न विद्यालय भी मिल सकते हैं, जहाँ पर दुनिया भर की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अगर, हम यह कह रहे हैं कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति की पद्धति क्या होगी, तो मेरे अनुसार पद्धति ऐसी होनी चाहिए कि हर व्यक्ति शोषण से मुक्त हो सके; अन्याय, अत्याचार से मुक्त हो सके। असल में, पहले हमें शिक्षा के अंदर से ही शोषण और अत्याचार समाप्त करना पड़ेगा, यानि भारत में हर किसी को समान स्तर की शिक्षा मिलनी चाहिए, चाहे वह किसी भी वर्ग का, किसी भी संप्रदाय का, किसी भी राजनीतिक तबके का या किसी भी स्तर का हो। सबको शिक्षा समान मिलनी चाहिए। हमें यही पद्धति अपनानी होगी।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ, मुझे लगता है कि फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन की बहुत प्रासंगिकता है। अगर, हम उनके विचारों को भारतीय परिवेश में समझें, तो हमें यह देखना होगा कि अगर, हम वंचितों की बात कर रहे हैं, शोषितों की बात कर रहे हैं या दलितों की बात कर रहे हैं, तो हम इसे किसी भी जाति से जोड़कर नहीं देखें। हम यह देखें कि जो भी मानव मात्र है, चाहे वह किसी भी जाति का हो, किसी भी संप्रदाय का हो, किसी भी पंथ को मानने वाला हो, अगर वह शोषित है, वंचित है, अभाव में है या साधन विहीन है, तो उसे समाज से जोड़ें।

हमारे अंदर, असल समस्या यह है कि हम चीज़ को जाति से 'टैग' कर देते हैं, संप्रदाय से 'टैग' कर देते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। मुझे लगता है कि फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को भारतीय परिवेश के अनुरूप अपनी

आवश्यकताओं के अनुसार यदि, थोड़ा बदलें तो इसकी प्रासंगिकता मुझे दिखाई देती है।

4) प्रश्न: फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिए - भारत के संदर्भ में आज बात करें, आधुनिक उत्पादन की बात करें या अमीर-गरीब की बात करें, तो हम देख सकते हैं कि 1950 के भारत में और आज के भारत में बहुत अंतर आया है। मैं अब यह नहीं कह सकता कि हमारी अर्थव्यवस्था समाजवादी है या पूंजीवादी है या मिश्रित अर्थव्यवस्था है। पता नहीं यह किस दिशा में जा रही है? पर, हाँ - सुधार लगातार होते जा रहे हैं; और दूसरा यह हो सकता है कि यह जो अमीर-गरीब का दायरा है, यह कई जगह पर हमें बढ़ता हुआ दिखाई दे रहा है। जहाँ तक मुझे याद है, पिछले 15 से 20 सालों के बीच काफ़ी लोग जागरूक हो गए हैं; सक्षम बन गए हैं; और लोगों के सामने व्यापार के ज़रिए कमाने के, नया काम करने के रास्ते खुले हैं। अमीरी-गरीबी का अंतर अभी भी है, पर मेरा ऐसा मानना है कि गरीबी का एक बहुत बड़ा वर्ग या एक बहुत बड़ा, जो हिस्सा था, वह कहीं-न-कहीं धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। इसका शिक्षा पर यह प्रभाव पड़ा है कि घरों में काम करके कमाने वाले, होटल-ढाबे में काम करने वाले या जो ये मज़दूर हैं, ये भी अब कम-से-कम इस बात को समझ रहे हैं कि हमारे बच्चे किस तरह के स्कूलों में जा रहे हैं; और जो यह तथाकथित बड़े लोग हैं, उनके बच्चे किस तरह के स्कूलों में जा रहे हैं। ये लोग अब कहीं-न-कहीं सोचने की स्थिति में तो हैं; अंतर करने की स्थिति में तो हैं कि इस सब के पीछे कोई-न-कोई कारण है कि शायद हम गरीब हैं; हमारे पास साधन नहीं है; इसलिए, हमारे लिए यह व्यवस्था है कि हमारे बच्चे इस तरह के स्कूलों में जा सके। हालाँकि, इस तरह के विद्यालयों से शिक्षा की गुणवत्ता का, व्यक्ति के चरित्र का सीधा सम्बन्ध नहीं है। ऐसा नहीं है कि यदि, कोई सरकारी स्कूल में पड़ेगा, तो चरित्रवान या ज्ञानवान नहीं बनेगा; और ऐसा भी नहीं है कि कोई बहुत बड़े 'कान्वेंट' या 'इंग्लिश मीडियम' स्कूल से पड़ेगा, तो वह बड़ा अधिकारी बन जाएगा। यह सभी कुछ निर्भर करेगा हमारे

पारिवारिक संस्कारों पर, हमारी शिक्षा पर, और खासतौर पर विद्यार्थी की सीखने की इच्छा पर और ललक पर। मुझे लगता है कि शिक्षा व्यवस्था पर इन सब बातों का फ़र्क तो पड़ता ही है। शिक्षा में यह दिखाई देता है, जबकि यह दिखाई नहीं देना चाहिए था।

मुझे याद है कि हम लोग भी सरकारी स्कूल में पढ़े हैं; और हमने देखा है कि वहाँ पर हर वर्ग का बच्चा आया करता था; और आज मैं देख रहा हूँ कि सरकारी स्कूल में आपको 'क्लियर कट' एक विशेष वर्ग मिलेगा, जो आर्थिक दृष्टि से समान है। जो यह मध्यम वर्ग है या जो यह उच्च वर्ग है, वह अब आपको सरकारी स्कूलों में दिखाई नहीं देता। हो सकता है कि मैं पूरी तरह से न देख पाया हूँ, लेकिन मुझे लगता है कि ऐसा है। जिसके पास पैसा आ जाता है, तो वह सोचता है कि अपने बच्चे को 'प्राइवेट' स्कूल में ही पढ़ाया जाए, पर यह हो सकता है कि शिक्षा की गुणवत्ता वहाँ वैसी न हो। ऐसा है, क्योंकि 'प्राइवेट' विद्यालयों की भी मैंने दो-से-तीन 'कैटेगरी' देखी है; कुछ ऐसे हैं, जो सिर्फ़ नाम मात्र के हैं; तीन-चार कमरे हैं; एकदम घुटा-सा वातावरण है। सिर्फ़ वहाँ लिख रखा है – 'इंग्लिश मीडियम को-एजुकेशनल' स्कूल। बाकी, जो शिक्षक वहाँ बच्चों को पढ़ा रहे हैं, उनकी स्थिति, मानसिकता, उनका ज्ञान का स्तर, सामाजिक कौशल, उनके पास कुछ नहीं है; यह स्थिति है। आगे हम इन पर कितना काम कर पाते हैं, यह तो आने वाला समय बताएगा।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: यह आपका सवाल मुझे बड़ा भारी लगा; और अपने आप में इस पर 'इंडिपेंडेंट रिसर्च' हो सकती है। इस पर मैं आपको बधाई देता हूँ। उत्पीड़ित का हमारे यहाँ पर कोई सीमित दायरा नहीं है कि हम कहें कि जो वंचित-शोषित वर्ग है, बहुत पीड़ित है; और जो साधन संपन्न वर्ग है, अमीर वर्ग है, वह उत्पीड़क है। क्योंकि, हो सकता है कि मान लीजिए - कोई साधन संपन्न वर्ग का बच्चा है, जो स्कूल जा रहा है। उस पर भी उस तरह के 'प्रेशर' हैं,

दबाव हैं। वह भी एक तरह से वहाँ पर उत्पीड़ित हो गया है। मुझे लगता है कि यह जो सहज आनंद है, जो शिक्षा में विद्यार्थी को मिलना चाहिए था, वह सारी शिक्षा व्यवस्था में सभी तरह के विद्यालयों में कहीं पीछे छूट रहा है। इसी तरह, सरकारी विद्यालय, जहाँ सामान्य वर्ग के लोग आ रहे हैं, वहाँ के विद्यार्थी भी एक अलग तरह के उत्पीड़ित हैं।

आज शिक्षकों को विद्यालयों में दुनिया भर की चुनौतियाँ दी जा रही हैं। पहले सरकारी विद्यालयों के शिक्षक हमें केवल पढ़ाया करते थे; और बहुत अच्छा पढ़ाया करते थे। उन पर किसी तरह की प्रशासनिक ज़िम्मेदारी नहीं हुआ करती थी, परन्तु अब ऐसा नहीं है। यह क्यों किया गया? इसके पीछे क्या रणनीति है? इसके पीछे क्या सोच है? यह आगे का विषय है; और हाँ - इतना मैं भी मानता हूँ कि शिक्षक की गरिमा में गिरावट आई है; और दूसरी बात शिक्षकों ने भी अपनी गरिमा को गिराया है। एक ज़माने में ऐसा होता था कि यह काम बड़ा सम्माननीय होता था। इसमें पैसा या अपनी झूठी प्रतिष्ठा, दिखावा यह सब कुछ नहीं होता था। यह बड़ा साधारण होता था; और शिक्षक सादा जीवन, उच्च विचार रखने वाला होता था। आजकल, जितने भी आंदोलन होते हैं, वे सभी केवल अधिकारों को लेकर होते हैं; कर्त्तव्यों को लेकर नहीं होते कि हमारे क्या कर्त्तव्य हैं? इसलिए, यदि शिक्षा के संदर्भ में कहें, तो मुझे सभी उत्पीड़ित दिखाई देते हैं - अध्यापक भी, संरक्षक भी, अभिभावक भी, उत्पीड़ित दिखाई देते हैं; और यदि, उत्पीड़क का संदर्भ देखा जाए, तो यहाँ माता-पिता बच्चे से बहुत अधिक आशाएँ रख रहे हैं; और शिक्षा को केवल प्रतिस्पर्धा के रूप में देख रहे हैं; जैसे कि उनके बच्चे ने साइंस में 87% स्कोर किया, 'मेथ' में 97% स्कोर किया; तुम्हारे बच्चे ने क्यों नहीं किया। जहाँ 'पेरेंट्स' अपने बच्चों की तुलना करते हैं, 'कंपैरिजन' करते हैं, उस समय हम यह भूल जाते हैं कि एक पौधे के दो फूल भी एक जैसे नहीं होते, वे तो दो बहुत अलग बच्चे हैं। इसलिए, यह सबसे बड़ी बात है कि बच्चा अपने अंदर जो छुपा हुआ आनंद है, उसको महसूस कर सके, उसको साकार कर सके, उसको निकाल सके; और जिस दिशा में, जो अच्छा कर सकता हो, वह कोशिश करे।

अब, तो सारी शिक्षा व्यवस्था ही उत्पीड़क हो गई है; उसमें प्रशासन भी है, इसमें राजनीति भी है। ये सभी चीज़ें एक तरह से उत्पीड़क हैं कि हमने एक पूरी 'रिजल्ट ओरिएंटेड सोसाइटी' खड़ी कर दी है। एक ऐसा ज़माना भी था, शायद आपको भी उसका अनुभव होगा कि जो बच्चा 'ट्यूशन' पड़ता हो, उसे अलग दृष्टि से देखा जाता था कि शायद यह पढ़ने में कमज़ोर होगा, इसलिए 'ट्यूशन' पढ़ रहा है। अब यह 'कल्चर' हो गया है; 'स्टेटस सिंबल' हो गया है कि अब वह शाम को दो-दो जगह 'ट्यूशन' जाता है। तो, हमने 'सिस्टम' को ही, जो हमारा तथाकथित अच्छा 'सिस्टम' चल रहा था, उसको भी उत्पीड़ित बना दिया; और उत्पीड़क वे लोग हो गए, जो शिक्षा के माध्यम से धंधा कर रहे हैं; जैसे - मान लीजिए कि क्या 'कोर्स' चला? नए बी.एड. पाठ्यक्रम में और एम.एड. के पाठ्यक्रम में परिवर्तन आया, तो इसके आधार पर 'मार्केट' में तुरंत नई बुक निकाल दो; पैसा कमाओ। इसके अलावा, 'नॉन-अटेंडिंग कॉलेजेज़' और 'नॉन-अटेंडिंग' स्कूल का 'कंसेप्ट' भी है कि अब आपको जाने की ज़रूरत ही नहीं है। आप 'डमी' स्कूल में चले जाइए; 'ट्यूशन' से पढ़िए; और आप 'इंजीनियरिंग' कीजिए। यह जो संस्थाएँ बन गई हैं, ये जो पैसे वाले लोग इसमें आ गए हैं, मुझे लगता है कि समाज में यह सबसे बड़े उत्पीड़क हैं; और उत्पीड़ित मैं मानता हूँ - बच्चे को, माता-पिता को, शिक्षकों को; मैं इन सभी को उत्पीड़ित मानता हूँ।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: देखिए - शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने का एक रूप यह हो सकता है कि हर व्यक्ति, हर बच्चा, हर बालिका, हर बालक विद्यालय जा सके। हमें उनकी पहुँच के लिए यह सुनिश्चित करना होगा कि वे अपने साधनों और घर की पारिवारिक परिस्थितियों के संदर्भ में कम दूरी के विद्यालय में जा सकें। भारत में इस संदर्भ में काफ़ी कोशिशें की गई हैं; बहुत-सी चीज़ें बनाई गई हैं; 'आरटीई एक्ट' भी लाया गया है; और देखा गया है कि स्कूल बनाए गए हैं, पर वास्तव में होता क्या है? हमारे यहाँ पर, जो सामाजिक

परिस्थितियाँ हैं, पारिवारिक परिस्थितियाँ हैं, वे कई बार बच्चों को विद्यालय छोड़ने के लिए मजबूर कर देती हैं।

शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना सकने के पीछे एक कारण, तो यह हो सकता है कि हमने बहुत देर से इन चीज़ों पर सोचा। हालाँकि, सोचा जरूर कि हम 1 किलोमीटर के दायरे में एक 'प्राइमरी' स्कूल लेकर आएँ। दूसरी बात यह है कि यह जो मानसिकता है, सोच है - वर्ग को लेकर, निम्न वर्ग को लेकर, जाति को लेकर या इस बात को लेकर कि नहीं साहब लड़कियों को नहीं पढ़ाना है; यह नहीं करना है; इस तरह की मानसिकता भी पहुँच न बना सकने के पीछे एक बाधक रही है। एक बात यह है कि अगर, हम भारत की बात करें तो पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण को देख लीजिए - आपके घर के 1 किलोमीटर के दायरे में एक विद्यालय है, जो पहाड़ पर है या हिमाचल या जम्मू-कश्मीर में है, तो हमें यह देखना होगा कि वहाँ की 1 किलोमीटर की चढ़ाई भी हमारे यहाँ के 3 किलोमीटर वाले पैदल मार्ग से ज़्यादा मुश्किल होती है। इसलिए, हमारी जो यह परिस्थितियाँ हैं, मरुस्थलीय इलाके हैं, पहाड़ी इलाके हैं, दूरस्थ इलाके हैं, यहाँ के विद्यालयों में पानी की सुविधा नहीं है, बिजली की सुविधा नहीं है, तो यह भी एक समस्या है। हमने विद्यालय खोल दिए, 'बिल्डिंग' दे दी, पर बिल्डिंग के साथ 'इंफ्रास्ट्रक्चर' नहीं है, तो आप क्या करेंगे? पाँचवी तक का स्कूल दे दिया। दो 'टीचर' चला रहे हैं। 'टीचर' को 'सपोर्ट' करने के लिए कोई 'हेलपिंग स्टाफ़' नहीं है; इसलिए वही उनका काम करें; वही 'क्लर्क' का काम करें; कोई 'टीचर' ही 'हेडमास्टर' का काम करे। इसलिए, मैं कह रहा हूँ कि एक मानदण्ड होना चाहिए; जैसे कि इतने बच्चों के लिए हमें इतने अध्यापक देने हैं; इतना स्टाफ़ देना-ही-देना है। क्या यह 'रेशिओ' न देखें कि हाँ साहब 30 बच्चों पर एक 'टीचर' हो गया; अब 60 बच्चे हैं, तो दो 'टीचर' देने होंगे? मैं तो मानता हूँ कि लोकतंत्र में हर व्यक्ति का महत्त्व है; समूह का महत्त्व नहीं है; व्यक्ति का महत्त्व है। हो सकता है कि मैं आदर्श की बात कर रहा हूँ, पर अगर किसी विद्यालय में दो बच्चे भी हैं या 5 बच्चे भी हैं और उन्हें तीन 'सब्जेक्ट' पढ़ाने हैं, तो इसके लिए तीन 'टीचर' की आवश्यकता होगी; वहाँ पर 3 'टीचर' होने ही चाहिए। उन्हें यह नहीं कहा जाए कि तुम्हारे यहाँ 'स्टूडेंट्स'

कम हैं, तो तुमको 2 किलोमीटर दूर के स्कूल में 'मर्ज' कर रहे हैं। फिर, तो पहुँच की कोई बात ही नहीं हुई।

अब यदि, फ़्रेरे के विचारों से समाधान तलाशने की बात करें, तो मुझे लगता है कि हमारे यहाँ एक व्यक्ति का आंदोलन बड़ी मुश्किल से सफ़ल हो पाता है। फ़्रेरे का व्यक्ति का आंदोलन चला। समाज ने उनको उस तरह से 'सपोर्ट' दिया। इसके अलावा, दुनिया भर के विश्वविद्यालयों से उनको 'सपोर्ट' मिला; अच्छी बात है। हमारे यहाँ अभी मुझे थोड़ी शंका लगती है, क्योंकि हमारे यहाँ पर व्यक्ति का आंदोलन चलता तो है; जैसे – 'अन्ना हज़ारे' जी का आंदोलन चलता तो है, पर धीरे-धीरे पता नहीं क्यों, जब तक कि उस आंदोलन को कोई विचारधारा या राजनीतिक समर्थन न मिले, तब तक वह सफ़ल नहीं हो पाता। बड़ा मुश्किल है।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: अब बात करें, तो व्यवस्थित किया जा सकता है। मूल बात यह है कि जैसा कि संविधान भी 'गारंटी' दे रहा है कि हमें वंचित लोगों की गरिमा को सबसे ऊपर मानकर चलना होगा। 68 के बाद 86 की 'पॉलिसी' आई; और अब इतने सालों के बाद नई शिक्षा नीति पर बात हो रही है, यानि लगता है कि काफ़ी लंबे समय तक राजनीतिक इच्छाशक्ति नई शिक्षा नीति को लेकर तैयार ही नहीं थी। यानि कि राजनीतिक इच्छाशक्ति इस बात को लेकर तैयार ही नहीं थी कि हम एक नीति बना दें, जिसके तहत हम खासतौर पर अपवंचितों के लिए ये सुविधाएँ सभी विद्यालयों को मूल रूप से प्रदान कर दें।

आप देख सकते हैं कि बड़ी योजनाएँ चलती हैं; जैसे - सरकार ने कुछ 'लैपटॉप' बाँट दिए, खाना बंट गया, कपड़े बाँट दिए। अब तक इस बात पर फ़ोकस ही नहीं किया गया है कि उनका जो समग्र उत्थान है, वह किस तरह

से हो। इस पर होना तो यह चाहिए था की राष्ट्र के स्तर पर सारे राज्यों की सहमति लेकर शिक्षा नीति तैयार की जाती; और वह शिक्षा नीति केवल कागज़ों तक सीमित न हो, बल्कि उसका 'इफ़ेक्टिव इंप्लीमेंटेशन' भी हो; उसका प्रभावी क्रियान्वयन हमारे देश में होना चाहिए। हालाँकि, आरटीई के साथ हमने कानून बना दिया है, पर स्थिति यह है कि हम स्कूलों को अभी भी बाध्य नहीं कर पा रहे हैं कि वे गरीबों को 25% सीटें दे दें। उन्होंने अपना रास्ता निकाल लिया है। शुरू में वे यह 'शो' करते हैं कि हमारे यहाँ 'एंट्री लेवल' पर 20 सीटें थीं। 20 में से 5 दे दीं; बाकी आगे की 'क्लासेस' में वह सौ-सौ सीटें कर देते हैं। यहाँ पर वे लोग तोड़ निकाल देते हैं। यह बड़ी चीज़ है। इसलिए, शिक्षा की बात करें तो उसे व्यवस्थित करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा नीतियाँ बननी चाहिए। कानून को उसके साथ पूरी तरह जुड़ा होना चाहिए; और ज़िम्मेदारी तय की जानी चाहिए; समय दिया जाना चाहिए। अगर, नहीं होता है, तो उसके लिए ज़िम्मेदारी तय की जानी चाहिए।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: यह जो 'स्वतंत्रता का भय' है, मुझे लगता है कि एक वर्ग तो ऐसा है - हमारे यहाँ, जिसे शायद स्वतंत्रता का मायने पता ही नहीं है। स्वतंत्रता का मतलब क्या है? एक भेद हम यह भी करेंगे कि स्वतंत्रता और स्वच्छंदता में में भी अंतर है। हम स्वतंत्र हैं या स्वच्छंद? मुझे मेरी माँग मनवानी है, तो मुझे विरोध करने की स्वतंत्रता है, पर विरोध करने की मेरी स्वतंत्रता ऐसी नहीं होनी चाहिए कि वह दूसरे की स्वतंत्रता में बाधक बन जाए।

अगर, हम भारतीय समाज में शिक्षा के संदर्भ में बात करें, तो जो ये छात्र हैं, माता-पिता हैं, शिक्षा नियोजक हैं, शिक्षा व्यवस्थापक हैं, अध्यापक हैं, इनमें 'स्वतंत्रता का भय' किस रूप में देखा जाए? यदि, मैं अपनी बात को थोड़ा-सा वेदांत या उपनिषद की 'फिलॉसफी' की ओर ले जाऊँ, तो है तो

यह आदर्श की बड़ी बात, लेकिन स्वतंत्र का मायने यह होगा कि हम जीव को यह एहसास कराएँ कि वह परमात्मा है; और उसके अंदर परमात्मा का अंश है। वह अपने आप में शुद्ध-बुद्ध-मुक्त है। हमने दायरा बहुत छोटा कर लिया है। माता-पिता भी अपेक्षा लेकर चल रहे हैं। पता नहीं क्यों मुझे माता-पिता में एक अजीब-सा भय दिखाई देता है; पता नहीं भविष्य में क्या होगा? बच्चे यह नहीं बन पाए, तो क्या होगा? पता नहीं वह न कर पाया, तो क्या होगा? यदि, देखा जाए तो हमारे माता-पिता इतने चिंतित नहीं होते थे। आज के माता-पिता ज़्यादा चिंतित हैं। साधन पहले कम थे; सुविधाएँ पहले कम थीं; अवसर पहले कम थे। अब, साधन भी हैं; सुविधाएँ भी हैं; यह भी है; फिर भी भय है; यह भय, चाहे बच्चों को लेकर हो, पेरेंट्स को लेकर हो, शिक्षा नियोजकों को लेकर हो।

मुझे लगता है कि हमने कहीं-न-कहीं मनुष्य की जो एक ताकत है, एक पहचान है, उसको बड़ा सीमित कर दिया है। हर चीज़ को हम 'कंपटीशन' में, प्रतिस्पर्धा में देख रहे हैं। पहले हम व्यक्ति को एक आनंदपूर्ण प्राणी के रूप में देखते थे, पर अब उसे एक अच्छे नागरिक के रूप में विकसित करना चाहते हैं; और बाद में देखेंगे कि वह क्या बनता है। पर, क्या किसी को भी एक अच्छा नागरिक बना सके हम? यह स्वतंत्रता का भय, शायद उस 'सेंस' में नहीं आयेगा, जिस 'सेंस' में फ्रेरे ने बात की है। हमें वापस उसी परिस्थिति में जाना पड़ेगा, जिस परिस्थिति को उन्होंने सोचा था। वह परिस्थिति थी, जिसमें सोचा जा रहा था कि कहीं मेरे शोषण करने की स्वतंत्रता न चली जाए। अब, क्योंकि हमारे यहाँ लोकतंत्र है, तो सबसे बड़ी बात यह है कि हमारे यहाँ कोई वर्ग इस तरह की स्थिति में नहीं आ सकता, परन्तु अब शिक्षा को एक व्यवसाय के रूप में देखा जाने लगा है। ऐसी बहुत सी संस्थाएँ हैं, जो यह मानकर चल रही हैं कि हम तो बढ़िया 'किस्म' की शिक्षा दे रहे हैं; और 'पेरेंट्स' उनके सामने विवश हैं, नतमस्तक हैं कि वे जो भी कर रहे हैं, ठीक कर रहे हैं। तो, कहीं-न-कहीं अपनी स्वतंत्रता खोने में हम खुद ही ज़िम्मेदार हैं। इसीलिए, 'पेरेंट्स' से मनचाहा काम करवा रहे हैं; मनचाही 'फ़ीस' ले रहे हैं। 'पेरेंट्स' दे रहे हैं, इस डर से कि पता नहीं कहीं वे हमारे बच्चे को स्कूल से निकाल ही न दें; जैसे – अगर, वह उस स्कूल में नहीं पढ़ेगा, तो पता नहीं

क्या हो जाएगा? तो, इस तरह की 'स्वतंत्रता के भय' को समझने के लिए बड़े स्तर पर विश्लेषण करना होगा।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: अभी हाँ या न में कहना बड़ा कठिन है कि उस और ले जाएगा या नहीं। अगर, "विवेकीकरण" वास्तव में विवेक है; और विवेक का तात्पर्य यह है कि मुझ में यह समझ विकसित हो गई है कि सही क्या है और गलत क्या है, उचित क्या है, अनुचित क्या है, न्याय क्या है, अन्याय क्या है, तो फिर यह विध्वंस की ओर नहीं ले जाएगा। पर, मान लीजिए - अगर मैंने एक झूठा आवरण ओढ़ लिया है कि मुझ में "आलोचनात्मक चेतना" जागृति हो गई है; और अब मैं समाज में जाऊँ, तो स्थिति कुछ और होगी। उस समय विद्यार्थियों में, अभिभावकों में, 'स्टेकहोल्डर' में यह विवेक पैदा करने की कोशिश की जाएगी कि शिक्षा से रोज़गार मिलेगा, प्रसिद्धि मिलेगी और धन मिलेगा। असल में, हमें यह नहीं मानना चाहिए, बल्कि शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य है - मानव निर्माण। अगर, सब कुछ होने के बाद भी मेरे बच्चे में, मेरे छात्र-छात्रा में, समाज के प्रति या देश के प्रति कुछ करने का भाव नहीं आया, तो विवेक का क्या अर्थ है? जीवन भर मैंने देश से संसाधन लिए; यहाँ पढ़ा; एक मौका पाकर मैं बाहर विदेश में 'सेटल' हो गया; और जीवन भर अपनी सेवाएँ विदेश को दे रहा हूँ, तो ऐसी स्थिति में विवेक का क्या अर्थ रह जाएगा? हमें यह भी जानना चाहिए कि मैं देश के वंचित लोगों के लिए, दलित-पिछड़े लोगों के लिए काम करूँ, जो मेरा इंतज़ार कर रहे हैं, तो यह वास्तव में हमारा विवेक होगा।

इसके अलावा, भारत में विध्वंस की बात मुश्किल है। हमारे यहाँ तो शुरू से ही एक तरह से वाद-संवाद की परंपरा रही है। हमारे यहाँ पर

आलोचना करने की परिपाटी भी रही है, परन्तु अब स्वस्थ आलोचना बड़ी मुश्किल से देखने में आती है। ज़्यादातर क्या होता है कि किसी व्यक्ति ने आंदोलन शुरू किया; और वह सही भी है; और उसे किसी विचारधारा दल से समर्थन मिला, क्योंकि वह उस से सहमत है, नहीं तो कई उसका विरोध शुरू करना शुरू कर देंगे। विरोध करने में भी वे व्यक्ति यह जानते हैं कि यह व्यक्ति जो योजना ला रहा है, दस्तावेज़ ला रहा है, यह हमारे बच्चों के लिए भी लाभकारी है, पर वह इसे कहने में संकोच करते हैं। यह उनके अंदर का अंतर्विरोध है कि हम यह कैसे कह दें कि साहब यह हमारा विरोधी था; और उसने यह अच्छा काम कैसे करके दिखा दिया?

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: अगर, साक्षरता के लिए हम कहें कि जैसे भाषा का ज्ञान है या 'सिंपल अर्थमैटिक' का ज्ञान है, तो साक्षरता तो बढ़ रही है; और कभी समय आएगा की शत-प्रतिशत भी हो जाएगी। मेरा व्यक्तिगत रूप से मानना है कि शिक्षा के द्वारा हर व्यक्ति के अंदर, जो निहित अच्छाई है, इसे लक्षित करने में समय लगेगा। साक्षरता और शिक्षा में अंतर है; जैसे - लोग 'टेक्नोलॉजी' के मामले में साक्षर होते जा रहे हैं, पर शिक्षा वह है, जो विवेक पैदा करती है कि उस तकनीक का इस्तेमाल कहाँ और कैसे करना है। शिक्षा सही-गलत का विवेक पैदा करती है। दूसरी सबसे बड़ी बात यह है कि आप धरती पर आए; आपने कुछ हासिल किया; आपके पास कुछ है; फ़िर समाज के लिए या किसी व्यक्ति के लिए कुछ ऐसा कर जाइए कि उसका जीवन या भविष्य सुधर जाए। दोनों तरह की सोच में अंतर है। साक्षरता आवश्यक है, पर साक्षर होने के बाद हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हम इसे शिक्षा की ओर ले जाएँ, जिसका एक अर्थ यह होगा कि व्यक्ति स्वयं का निर्माण करें, समाज का निर्माण करें। इतना आत्मकेंद्रित न हो जाए कि उस आत्मकेंद्रण की साधना में

समाज के सामूहिक सुख को ही भूल जाए। यदि, इसे भारत के संदर्भ में देखें, तो शिक्षित करने के मामले में हमें अभी और प्रयास करने होंगे। यह ज़िम्मेदारी, मैं शिक्षकों को देता हूँ। शिक्षक अब यह मानकर चलें कि हमारा 'प्रोफेशन नोबेल' है; उसकी किसी दूसरे 'प्रोफेशन' से तुलना न करें; जैसे - डॉक्टर से, 'इंजीनियर' से या 'साइंटिस्ट' से। वह यह मानकर चले कि समाज में सबसे बड़ा दायित्व हमारा है; और इसके लिए समर्पित भाव से प्रयास करना पड़ेगा। पर, यह भी देखना होगा कि यह जो 'नोबेल' काम थे, इनकी डोर धनी लोगों के हाथ में है। उनके पास पैसा है; और वे इसे कहीं 'शो' नहीं करना चाहते, तो वे इस तरह की 'कॉलेज बिल्डिंग' खोल देते हैं; और कम पैसों में इसके तथाकथित आचार्य रखे जाते हैं। संस्थान वही चलाते हैं; और पीछे यह पैसा कमा रहे होते हैं। प्रधानाचार्य को 'मैनेजमेंट' के अनुरूप समझौता करना पड़ता है; उनका भी अपना एक अलग संकट है। पर, होना यह चाहिए कि 'मैनेजमेंट' को सोचना होगा वह 5-5 हज़ार में 10 शिक्षक रख रही है। इसके बजाय, वह 'स्मार्ट सैलरी' देकर दो-तीन रख ले, पर क्या इससे भी स्थिति ठीक होगी? हमें यह सोचना होगा कि क्या इससे हमारा काम चल जाएगा? यह चुनौती बहुत बड़ी है; और यह रास्ता बड़ा ही मुश्किल है। इसमें आर्थिक साधन का 'प्रेशर' तो होता ही है। इस 'प्रेशर' से निपटना बड़ा मुश्किल है। फिर भी, मैं मानता हूँ कि ज़िम्मेदारी हम शिक्षकों की है। हम, ऐसी परिस्थितियों में भी जमकर प्रयास करें।

इसके अतिरिक्त, जहाँ तक पैसे की कमी की बात है, इसका सम्बन्ध आर्थिक नीतियों से है, जिसको लेकर मेरी इतनी समझ नहीं है। पर, मुझे लगता है कि आज की स्थिति में पैसे की कमी नहीं है; संसाधनों की कमी नहीं है। हमारे पास प्राथमिकता की कमी है। मैं किस चीज़ को देखता हूँ? यह घर का 'एरिया' है; 'कॉलोनी' है। उसके बाद क्या चाहिए? सबसे पहले उसको सारी सुविधाओं से युक्त एक श्रेष्ठ विद्यालय दे दीजिए; और एक सारी सुविधाओं से युक्त श्रेष्ठ अस्पताल दे दीजिए। यही दो चीज़ें हैं। सबसे पहले उसको शिक्षा दे दीजिए। जो, वंचित व्यक्ति है, उसे सबसे पहले संतोष हो जाए कि मेरे बच्चे उसी स्तर के विद्यालय में पढ़ रहे हैं, जिस स्तर के विद्यालय में हमारे एसपी, कलेक्टर, मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री के बच्चे भी

जाते हैं। इससे उसके दिमाग में जो बहुत बड़ा तनाव है, बहुत बड़ी चुनौती है, वह वैसे ही खत्म हो जाएगी। तो, साधन की कमी नहीं है; हमारे अंदर सोच की और इच्छाशक्ति की कमी है। अब साधन बहुत है; बहुत सुविधाएँ हैं।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: हो सकता है। अगर, बच्चे कुपोषित हों, तो उनकी शारीरिक सामर्थ्य इतनी नहीं होती, उनका मानसिक विकास इतना नहीं हो पाता कि वे ठीक से पढ़ सकें; और गरीबी भी इसी से संबंधित है। पिछले काफ़ी समय से, विशेषकर 'मिड-डे-मील' जैसी चीज़ें शिक्षा से जोड़ दी गई हैं। तो, ये बाधाएँ काफ़ी हद तक कम हुई हैं। अगर, अब भी लोग शिक्षा नहीं पा रहे हैं या शिक्षा नहीं लेना चाह रहे हैं, तो लोग और यहाँ तक कि सरकार भी प्रयास कर रही है कि हर स्तर के विद्यालय तक जाकर, शिक्षकों तक जाकर, गाँव के जनप्रतिनिधि तक जाकर लोगों को ज़िम्मेदार बनाया जाए। गाँव या ब्लॉक में कोई विद्यार्थी विद्यालय नहीं आता है, तो वहाँ भी ज़िम्मेदारी तय की जा रही है। सुधार का कार्य तो हमने किया है; और उसमें आगे भी सुधार की आवश्यकता है।

12) प्रश्न: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

व 13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: स्थापित संस्कृति, तो मैं उसे कहूँगा, जो हमारी सनातन मूल्य परंपरा है। यदि, शिक्षा के संदर्भ में बात करें, तो उसकी जीवनधारा यह है कि व्यक्ति को

संपूर्ण चेतना का वास माना गया है। व्यक्ति या बालक के अंदर पूर्ण चेतना है। बस, उसका साकारीकरण करना है। स्थापित संस्कृत में शिक्षा-दर्शन का भी यही आधार है। स्थापित संस्कृति की जहाँ तक बात है, हम देख सकते हैं कि हमने बच्चे को बारहवीं के बाद, 'ग्रेजुएशन' के बाद उसकी सारी 'एजुकेशन' को 'कंपटीशन' से जोड़ दिया है। हालाँकि, दूसरा तरीका हो सकता था। अगर, समाज में कहीं-न-कहीं हम यह माहौल खत्म करते कि यह जितने भी 'जॉब' या नौकरियाँ हैं, यह प्रतिस्पर्धा का साधन नहीं हैं, बल्कि आपके अंदर जो क्षमता है, आप उसे निखारिए, तो अच्छा होता। हम बी.एड. में, जब विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं और उनसे पूछते हैं, तो उनका यह बड़ा अजीब सा जवाब होता है कि सर, मैं कुछ नहीं कर पाया, इसलिए बी.एड.करने आया हूँ। यह जो मानसिकता है, ऐसा नहीं होना चाहिए, बल्कि होना चाहिए कि मैं इसके लिए बना हूँ या बनी हूँ। 'टीचर' बन सकूँ, इसलिए नहीं कि मेरा मेडिकल में नहीं हुआ या 'इंजीनियरिंग' में नहीं हुआ।

हमारी जो स्थापित संस्कृति, जो मूल्यों की संस्कृति, जो मानवता की संस्कृति है, उस संस्कृति के साथ जो प्रति संस्कृति का निर्माण है, मुझे लगता है कि आज़ादी के बाद से पिछले 10-15 सालों से बाहर जाने की ललक है; देश को छोड़कर बाहर जाकर 'सेटल्ड' होना है; बहुत बड़ी 'रिच क्लास' में 'इस्टैबलिश्ड' हो जाएँ। यह मानसिकता पता नहीं कहाँ से प्रवेश कर गई - हमारे अंदर? सादा जीवन, उच्च विचार की परंपरा नहीं रही। यह पीछे छूट गई या परिवारों ने यह मान लिया कि जब तक यह साधन-सुविधाएँ नहीं होंगी, तब तक हम आगे नहीं बढ़ पाएँगे। पहले भी लोग जीते थे। पहले भी लोग इन्हीं साधनों में रहते थे। पहले लोग नौकरी के 15-20 सालों के बाद मकान बनाते थे। अब, नौकरी लगते ही मकान बनाने लगते हैं। ठीक है कि 'लोन' मिल जाता है, पर कहीं-न-कहीं हमने अपने को बहुत अधिक सुविधाओं से 'पैक' कर लिया है। अपनी आशाएँ, अपेक्षाएँ, आकांक्षाएँ बहुत अधिक बढ़ा ली हैं। क्योंकि, मेरा 'प्रोफेशन' तो बहुत लिमिटेड है; मैं तो एक 'टीचर' हूँ; 'कॉलेज' में पढ़ाता हूँ; मेरी आय 'लिमिटेड' है, तो मैं अपने को किसी 'बॉलीवुड' के 'स्टार' से, किसी 'साइंटिस्ट' से, किसी बड़ी 'मल्टीनेशनल कंपनी' के 'एग्जीक्यूटिव' से 'कंपेयर' नहीं कर सकता; मुझे

करना भी नहीं चाहिए। हो सकता है, वह मुझसे 'क्वालिफ़िकेशन' में कम हो, पर वह उसका अपना 'फील्ड' है। वर्तमान परिस्थिति में यह भेद बढ़ रहा है। हमारी, जो स्थापित संस्कृति थी - सादा जीवन, उच्च विचार की; और जो यह प्रति संस्कृति का निर्माण हो रहा है कि हमने महत्त्वाकांक्षाओं को बहुत अधिक महत्त्व दे दिया, इन दोनों के बीच एक टकराव है; उसको कम करना पड़ेगा।

14) प्रश्न: फ़्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: भारत के सम्बन्ध में भी हमने वर्ग पैदा कर दिए हैं। एक वंचित वर्ग है और बाकी साधन संपन्न हैं। जो वर्ग सुविधाओं को 'सपोर्ट' नहीं कर सकता, उसके लिए तो यह शिक्षा है; और जो ले सकता है, वह ले लो। जो खरीद सकता है, वह ले लो। एक ज़माने में माना जाता था कि जो बहुत महँगे कपड़े हैं, वे 'लग्जरी आइटम' होते थे। उस 'लग्जरी आइटम' में कार है। ये हमारी ज़रूरत नहीं है; 'नीड' नहीं है। लेकिन, शिक्षा में ऐसा नहीं है। शिक्षा सबकी ज़रूरत है; और यह वर्ग हमने पैदा कर दिया; और यह साफ़ दिख रहा है। हमारे यहाँ पर, जो वंचित वर्ग है, उसके लिए यह शिक्षा है; और जो साधन संपन्न वर्ग है, उसके लिए यह शिक्षा है। जो साधन संपन्न शिक्षा से निकलेंगे उनके लिए रोज़गार के बहुत अधिक अवसर होंगे; और जो साधारण शिक्षा से निकलेंगे, उसमें कोई 'ऑब्स्ट्रक्शन' होगा। जो 'गॉड गिफ़्टिड' होगा, वह तो निकल ही जाएगा; बाकी सभी उसी स्तर पर रह जाएँगे। हमारे यहाँ वर्ग तो हैं; हमने वर्ग तो पैदा किया है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ़्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: यह एक बड़ा प्रश्न है। अगर, पूरी शिक्षा व्यवस्था में देखा जाए, तो अच्छे नागरिक भी तैयार कर रही है। अच्छे नागरिक को मैं इस अर्थ में लेता

हूँ कि लोग, जो हमारे संविधान सम्मत कर्त्तव्य हैं, उन कर्त्तव्यों का निष्ठा के साथ पालन कर सकें; फिर वे चाहें श्रमिक हों, किसान हों, प्रोफ़ेसर हों, 'डॉक्टर-इंजीनियर' हों, 'न्यूरोसाइंटिस्ट' हों, नेता हों, कुछ भी हों। सविधान द्वारा अपेक्षित जो कर्त्तव्य हैं - परिवार के प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, उनका अनुपालन करने वाले नागरिक भी शिक्षा प्रणाली तैयार कर रही है।

हमारे यहाँ पर हमारी शिक्षा प्रणाली से एक बड़ा वर्ग वह तैयार हो रहा है, जो यह देख रहा है कि मैं अपने लिए, ज़्यादातर अपने परिवार के लिए क्या कर सकता हूँ; आगे कितनी 'प्रॉपर्टी', कितना पैसा, कितनी 'मनी', कितनी 'वेल्थ' 'अरेंज' कर सकता हूँ। वह आगे की 7 पीढ़ियों का सोच कर चलने वाला आदमी हो गया है; सात पीढ़ियों का चरित्र बना सकूँ। 7 पीढ़ियों के चरित्र के लिए कोई मिसाल बना सकूँ, ऐसी सोच वाले नागरिक, शायद हम तैयार नहीं कर पा रहे हैं। हम इसके लिए तैयार कर रहे हैं कि आने वाली दो या पाँच पीढ़ियों का गुज़ारा कैसे कर सकें। निश्चित रूप से कोई व्यक्ति, अगर ऐसा सोचेगा, तो उस व्यक्ति को कुछ अनैतिक रास्ते भी इख्तियार करने पड़ेंगे। उसका आगे चलकर समाज से विरोध उत्पन्न होगा।

फ़्रेरे का दर्शन यह है कि आप विवेक की बात करें; आप समझ की बात करें; 'रिफ्लेक्शन' की बात करें; अब तो, यह 'रिफ्लेक्शन' हमें हर 'क्लास' में, हर स्तर पर लाना पड़ेगा; जैसे - पुराने ज़माने में हमारे यहाँ एक प्रश्न होता था कि मैं कौन हूँ?, मैं कहाँ से आया हूँ? अगर, व्यक्ति बार-बार इस बात का चिंतन करता रहे कि मैं क्यों पढ़ रहा हूँ?, मैं ऐसा क्यों कर रहा हूँ?, उससे समाज को क्या फ़ायदा है?

गाँधी जी ने भी अपना इस तरह का एक विचार दिया है; उसमें कहीं-न-कहीं एक बात है कि मैं जो कुछ कर रहा हूँ, तो पहले मैं इस पर विचार कर लूँ कि इससे सारे देश के समाज को, उस वंचित व्यक्ति को, जो सबसे पीछे खड़ा है, क्या लाभ मिलेगा? अगर, मैं इस पर सोचता हूँ, तो शायद मुझे कोई दिशा मिल जाएगी कि मैं इन लोगों के लिए क्या कर सकता हूँ?; इन वंचितों के लिए क्या कर सकता हूँ?

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: हमारे यहाँ आज एसटीईएम पर 'फ़ोकस' किया जा रहा है – 'साइंस', 'टेक्नोलॉजी', 'इंजीनियरिंग', और 'मेडिकल'; जैसे कि इनके अलावा कोई और 'प्रोफ़ेशन' है ही नहीं। कोई 'सोशल साइंस' पढ़ रहा है। कोई 'लैंग्वेज' पढ़ रहा है। कोई 'लिटरेचर' पढ़ रहा है। कोई संगीत पढ़ रहा है, तो ठीक है। पर, पता नहीं क्यों हमारे यहाँ पर एक अजीब सा 'सिंबल' बना दिया गया है। तो, बच्चे में जो जिज्ञासा है, यह लाना पड़ेगा कि बच्चा चाहे कुछ भी कर रहा है; मान लीजिए कि एक बालिका है - वह बहुत अच्छा नृत्य करती है; और उसके नृत्य से उसकी पढ़ाई पर कोई फ़र्क नहीं पड़ता, तो ठीक है वह करे - शास्त्रीय नृत्य करे; वह 'डांस' करें। हम उनको विरोध के रूप में नहीं देखें कि अगर वह कला की, खेल की, संगीत की साधना करेगा, तो वह कहीं-न-कहीं पिछड़ जाएगा। उसकी जिज्ञासा, उसको अपना जीवन जीने दें - हम। बस, यह ध्यान रखें कि वह गलत दिशा में न जाए। हालाँकि, विद्यालयों ने कोशिश भी की है, प्राइवेट भी और सरकारी भी; अब इस बात पर फ़ोकस देना हमने शुरू कर दिया है। इसको सीसीए या 'एक्स्ट्रा करीकुलर' कहा जाता है। इस पर 'फ़ोकस' हो रहा है, पर तब भी 'पेरेंट्स' को एक अजीब-सा डर है कि कहीं उनका बच्चा इस पर बहुत ज़्यादा न चला जाए; हमारा बच्चा तो पढ़ना चाहिए। इस तरह की सोच के लिए 'पेरेंट्स' भी ज़िम्मेदार हैं, कहीं-न-कहीं।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: ऐसा इसलिए है कि पूरे राष्ट्र के लिए 'कॉमन पॉलिसी' बनाना कितना संभव होगा?, इसके लिए किसी एक तबके को हम ज़िम्मेदार नहीं ठहरा सकते। यह तो वक्त की बात है। ऊपर से शुरू करें - राजनीतिक इच्छाशक्ति

से, 'ब्यूरोक्रेसी' से, नीचे 'सबोर्डिनेट' तक आएँ, 'टीचर' तक आएँ, स्थानीय संस्थाओं तक आएँ, यहाँ तक कि ग्राम पंचायत, स्थानीय संगठनों तक आएँ, तो यह लगता है कि कहीं-न-कहीं सबकी समझ में, सब के प्रयासों में, कमी रह गई है; और सामूहिक प्रयासों की जो कमी रही है, उसी के कारण हम पिछड़ते चले गए।

अगर, हम सभी लोग राष्ट्रीय स्तर पर बैठ जाएँ; और विचार कर लें कि देश के आने वाले 20 सालों में देश की सार्वजनिक शिक्षा कैसी होनी चाहिए?; और हमारी सामाजिक आवश्यकताएँ, हमारी राजनीतिक आवश्यकताएँ, हमारी जो अंतरराष्ट्रीय अपेक्षाएँ हैं, सबको ध्यान में रखते हुए हम एक बढ़िया शिक्षा नीति बना लें; और उसके बाद किसी व्यक्ति को राजनीतिक दल को किसी संस्था को यह अधिकार नहीं है कि आप उसमें बदलाव करो। आप 'डिबेट' करो, तब आप उसको 'मॉडिफाइड' करो; और बनाओ। घोषित कर दो कि पूरे भारत को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलेगी; और समान मिलेगी। शिक्षा व्यवस्था, स्वास्थ्य व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, अगर यह तीन चीज़ें भारत में सबको समान मिल जाए, तो बाकी का लोग देख लेंगे।

लोग कम खाने को तैयार हैं। लोग कम पहनने-ओढ़ने को तैयार हैं। लोग कार की जगह, बाइक से जाने को तैयार हैं या साइकिल पर जाने को तैयार हैं, लेकिन आप उनके बच्चों को वही शिक्षा दे दो, जो भारत के हर संपन्न वर्ग को मिल रही है। उनके माता-पिता को वही इलाज दे दो, जो भारत के बड़े-से-बड़े नेता या उद्योगपति को मिल रहा है। सबके लिए न्यायिक विभाग उसी तरह से चला दो, जैसे कि बड़े लोगों के लिए चलते हैं, बस। शिक्षा अलग नहीं है; शिक्षा को इनके साथ जोड़कर देखना पड़ेगा। हमें और राजनीतिक दलों को इसको लेकर एक सहमति बनानी पड़ेगी कि हम इस बात के लिए तैयार हैं कि आज जो भारत की शिक्षा व्यवस्था है - पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च माध्यमिक तक, वह पूरे भारत में सबके लिए समान होगी।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: अगर सामाजिक स्थिति की बात करें, तो सामाजिक स्थिति तो बिल्कुल इसके अनुकूल है। समाज तो चाहता है - यह। क्योंकि, मैं भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लोगों से बात करता हूँ, शिक्षकों से, शिक्षक प्रशिक्षकों से, माता-पिता से, लोगों से बात करता हूँ। सामाजिक स्थिति तो यह है कि यह जो सामाजिक भेद बड़ा हो रहा है, उसकी यह महती आवश्यकता है कि हम 'समान शिक्षा प्रणाली' या 'पड़ोसी विद्यालय' को अपना लें। इसमें कहीं-न-कहीं जो कमी आती है, वह है - हमारी प्रशासनिक और राजनीतिक इच्छाशक्ति में कमी का होना। वह ऐसा नहीं करना चाहती।

अब, इसके पीछे क्या कारण हैं? या तो 'ब्यूरोक्रेसी' नहीं चाहती है या राजनीतिक इच्छाशक्ति नहीं चाहती है, क्योंकि वे लोग जिनके हाथ में सत्ता आ गई है, जिनके पास राजनीतिक अधिकार आ गए हैं, जिनके पास प्रशासन आ गया है, वे हमेशा से चाहते हैं कि हमारे बच्चे या जो एक अलग वर्ग है, वह चलता रहे; और जो हम तरह-तरह का छोटा सा प्रलोभन, समाज को देते रहें हैं, उसको भी चलाते रहें। तो, स्थिति तो हमसे चाह रही है; स्थिति की तो माँग है कि ऐसा होना चाहिए। पर, इसमें कहीं-न-कहीं जो कमी है, वह है - हमारी प्रशासनिक अकुशलता, निर्णय लेने की क्षमता का अभाव, और राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव।

मुझे तो, जैसे ही मैंने फ्रेरे के विचारो को पढ़ा, तो मुझे तो लगा कि उनके ये विचार बहुत क्रांतिकारी हैं, मतलब एक व्यक्ति, जिसने अपना जीवन समर्पित कर दिया; और यह भी देखिए साहब कि मेरा भविष्य क्या होगा, मेरे इतने विरोधी बन जाएँगे या मुझ पर राजद्रोह लग जाएगा या मुझे निकाल दिया जाएगा। यह जो, उनके विचार हैं, यह व्यक्ति को एक बहुत बड़ी ताकत देते हैं। इसी प्रकार, अगर मैं गाँधी जी के आंदोलन को देखूँ, तो गाँधी जी

अपने आंदोलन में एक अहिंसक आंदोलन का विचार लेकर चले। वह उस विचार को लेकर आगे बढ़े; वह ठीक है; जो भी है, देश जुड़ता चला गया, समाज जुड़ता चला गया। अगर, फ्रेरे के विचारों को एक आंदोलन के रूप में लें, तो मुझे लगता है कि उनके विचार बड़े प्रभावी हैं; और मुझे यह लगता है कि फ्रेरे के विचारों; खासतौर पर उनके शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी सरोकारों पर विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में चर्चा अवश्य होनी चाहिए।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: बी.एड., यह बड़ा गंभीर प्रश्न है। हमें यह देखना पड़ेगा - सारा 'नीड एसेसमेंट', यानि आने वाले दस सालों में हमें कितने शिक्षक चाहिए। उसके 'प्रोपोर्शनेट' में ही हम 'टीचर एजुकेशन' के 'इंस्टिट्यूट' खोलने की अनुमति दें। ऐसा नहीं है कि यह अभी 5 थे; और 3 सालों में 50; और पाँचवे साल में 150 हो गए। हम यह देखें कि हमें कितने शिक्षकों की ज़रूरत है? अगर, मुझे लगता है कि इतने-इतने विषयों में इतने शिक्षकों की आवश्यकता होगी, तो उतनी ही सीट 'एलाट' करें; और 'टीचर एजुकेशन' में पहले हम 'परमानेंट अपॉइंटमेंट' के बारे में सोचें। ऐसा नहीं कि पहले आपने जनवरी से शुरू किया और 31 मार्च तक रख लिया; और उसके बाद नई 'फैकल्टी' चाहिए। मेरा मानना है कि जो, राष्ट्र शिक्षकों का या शिक्षक प्रशिक्षकों का सम्मान नहीं कर सकता, उस राष्ट्र को विध्वंस से कोई नहीं बचा सकता। कोशिश यह करनी चाहिए कि 'टीचर एजुकेशन' के 'इंस्टीट्यूशन' को तो 'गवर्नमेंट' को ही खोलना चाहिए। 'प्राइमरी स्टेज' पर यह नहीं होना चाहिए कि आपने किसी को भी 'परमिशन' दे दी कि अपना खोल लो या जो यह 'अप्पोइंटिंग अथॉरिटी' है – इनकी; 'अप्पोइंटिंग अथॉरिटी' 'गवर्नमेंट' की कोई 'अप्पोइंटिंग अथॉरिटी' होनी चाहिए। अभी तो ये खुद ही होते हैं। मान लीजिए - एनसीईआरटी है; यह बड़े 'इंस्टीट्यूशन' हैं। उनके माध्यम से, 'एक्सपर्ट' के माध्यम से इनका 'सिलेक्शन' करके भेजा जाए। मैं तो पिछले 5 साल से यहाँ 'आर्ट एंड एसथेटिक्स' को देख रहा हूँ। मुझे लगा कि इसका

बड़ा प्रभाव पड़ता है। इसके बाद बच्चे जब इंटर्नशिप पर जाते हैं, तो उन्होंने इन कलाओं का प्रयोग करके पढ़ाया, तो बहुत फ़र्क आया; और शारीरिक शिक्षा को हम यह न माने कि 'लाइन' बना दी, 'मॉर्निंग असेंबली' करवा दी। यह तो पूरा जीवन भर चलने वाली शिक्षा है। यह 'फिजिकल एजुकेशन', 'आर्ट एंड एसथेटिक्स', 'विजुअल एंड फाइन आर्ट' तो, 'मैंडेटरी' ही होना चाहिए। इनके बिना हम एक अच्छे शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की कल्पना नहीं कर सकते। अब मुझे बड़ा दुख होता है कि शिक्षा का जो, यह पवित्र काम था, यह पैसे वालों के, 'बिजनेसमैन' के हाथों में चला गया है। पर, ज़िंदगी की सारी चीज़ें नफ़े और नुकसान में नहीं तोली जातीं। अगर, मैं बहुत बड़ा विद्यालय चला रहा हूँ; और मेरे पास बहुत बड़ा 'बिजनेस' है; और काफ़ी बड़ा मेरा 'प्रॉफ़िट' है, तो मैं यह नहीं सोचूँगा कि मुझे स्कूल से भी 'प्रॉफ़िट' कमाना है। अगर, 'टीचर' को पूरी सैलरी देकर भी मैं 50 बच्चे निकाल देता हूँ, तो देश के लिए मेरा यह योगदान बहुत बड़ा है। यह नहीं होना चाहिए कि हम बच्चे से कहें कि यह 'कॉलेज' 'नॉन अटेंडिंग' है; 'टीचर' से यह कहें कि बच्चे आते नहीं है; आपको तो शुरू के 5 दिन आना है; बाद में 5 दिन आना है; और यह करना है। मैं देखता हूँ कि 'एजुकेशन' को बहुत से 'प्राइवेट कॉलेज' मजाक में लेते हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने के लिए अच्छे शिक्षकों की आवश्यकता होगी; और इसके लिए अच्छे शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की आवश्यकता भी होगी।

प्रो. (डॉ.) उषा शर्मा का साक्षात्कार

4) साक्षात्कारदाता: डॉ. उषा शर्मा
आचार्या, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , दिल्ली
सदस्य सचिव, आधार पत्र विकास हेतु 'राष्ट्रीय फ़ोकस समूह 2021 (प्रौढ़ शिक्षा)'

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: इस प्रश्न का उत्तर मैं अभी नहीं दे पाऊँगी, क्योंकि मेरा ऐसा मानना है कि जिस व्यक्ति को आपने बहुत गहराई से न पढ़ा हो, तो उसके बारे में कुछ भी कहना सही नहीं है।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य है - व्यक्ति इतना बेहतर, क्षमतावान बन सके कि अपनी ज़िंदगी को सार्थक तरीके से जी सके। क्योंकि, शिक्षा समाज से जुड़ी हुई है; समाज में उसका इस्तेमाल होता है, तो शिक्षा ऐसी हो, जो व्यक्ति को इतना सामर्थ्यवान बनाए, ताकि वह समाज के लिए कुछ बेहतर कर सके। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के लिए भी इस रूप में है कि व्यक्ति अपनी खूबियों को, खामियों को पहचान सके, विश्लेषण कर सके, सही निर्णय ले सके। तो, शिक्षा का उद्देश्य यही है - ज़िंदगी को सार्थक तरीके से जीना, बेहतर तरीके से जीना। अगर, हम इस मुद्दे को ध्यान में रखते हैं कि सर्वोपरि उद्देश्य है – क्षमतावान बनाना, तो इसकी प्राप्ति की पद्धतियाँ कई हो सकती हैं। उसमें सबसे ज़्यादा ज़रूरी यह है कि हम शिक्षा को विषयों के साथ न बाँधे, बल्कि व्यक्ति के सामने तरह-तरह के 'सिचुएशनल टेस्ट' रख सकते हैं;

थोड़ा बातचीत कर सकते हैं; और व्यक्ति के परिवेश को ध्यान में रखा जा सकता है कि अगर आप की परिस्थितियाँ इस तरह से हैं, तो आप किस तरह से व्यक्त करो; और धीरे-धीरे बच्चे के सामने चुनौतियाँ भी रखी जाएँ कि अगर इस तरह की स्थिति आती है, तो आप क्या करेंगे?, क्या करना बेहतर रहेगा?; यह उसका उद्देश्य है। क्योंकि, बच्चे बहुत छोटे से विद्यालय आना शुरू करते हैं, 4 साल से, 6 साल से विद्यालय आना शुरु करते हैं, तो विद्यालय एक माहौल बनाता है, जहाँ बच्चे को सामाजिक विकास मिलता है; और साथ-साथ उनका शारीरिक विकास खुद-ब-खुद हो रहा है; तो उसको हर लिहाज़ से क्षमतावान बनाना, चाहे वह उसका शारीरिक विकास है या उसका भावात्मक विकास है या उसका सामाजिक विकास है या मानसिक विकास है। एक सर्वांगीण विकास की जब हम बात करते हैं, तो उसमें यह चारों 'एस्पेक्ट' शामिल हो जाते हैं।

हमारी पद्धति ऐसी हो, जिसमें बच्चों को अपनी बात कहने का मौका मिल सके, 'क्रिटिकली' चीज़ों को 'एनालाइज' करने का मौका मिल सके, जो उनके आसपास घट रहा है, उसमें वह 'क्यों' पूछकर, उसके जवाब खोजने की कोशिश करें। पद्धति में यही सब चीज़ें शामिल हैं।

3) प्रश्न: फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: स्कूली पाठ्यचर्या में यह आवश्यक है कि उपरोक्त से संबंधित कामों या गतिविधियों के लिए और 'स्पेस' रखा जाए। हम, ज़्यादातर शिक्षा के नाम पर विषय केंद्रित हो गए हैं। हमें विषय पढ़ाने हैं। भाषा पढ़ानी है। गणित पढ़ाना है; विज्ञान है, समाजिक विज्ञान है, लेकिन अगर इन विषयों को भी पढ़ाना है, तो उसके पीछे मुख्य उद्देश्य यही है कि बच्चे अपनी बात कह सकें। समाज में वह 10 तरह के लोगों के साथ उठते-बैठते हैं, तो अपनी बात कह सकें; और हमारे खुद के परिवेश में भाषा जिस तरह से व्याप्त है, उस 'पर्टिकुलर' भाषा को वह समझ सकें। दूसरा यह है कि जब हम अपने

आसपास बहुत-सी चीज़ों को घटते हुए देखते हैं, तो बच्चे 'क्यों' पूछते हैं कि ऐसा क्यों होता है; और अपने इतिहास को, अपने सामाजिक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को समझना भी ज़रूरी है, क्योंकि बहुत सारी चीज़ें, जो हमारे आसपास घटती हैं, वे हमारे अतीत-इतिहास से भी जुड़ी हुई हैं। वे भविष्य का निर्माण करती हैं।

आज की जो शिक्षा पद्धति है, शिक्षा व्यवस्था है, उसमें हम लगातार विषयों की ओर शायद ज़्यादा उन्मुख हो रहे हैं। लेकिन, कोशिश की जानी चाहिए कि हममें, जो एक पैनी बुद्धि है, क्षमता है, तार्किक विश्लेषण है या निर्णय लेने की क्षमता है या खुद को जानने की ललक है, बच्चे में उन चीज़ों को लाना है। उसकी ज़रूरत है। हालाँकि, यह बदलाव है; और 'कंस्ट्रक्टिविस्ट अप्रोच' यह कहती है। एनसीईआरटी ने 'नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क बनाया', उसमें 'क्रिटिकल पेडागोजी' और 'क्रिटिकल थिंकिंग' की बात है; और एक पूरा 'चैप्टर' है कि ज्ञान क्या है?, सीखना क्या है?, और बच्चे कैसे सीखते हैं? या सीखने के लिए वह कितने उत्सुक रहते हैं? उसके बावजूद, स्कूलों में वही चीज़ हमें उस लिहाज़ से नज़र नहीं आ रही है। हम 'रिजल्ट ओरिएंटेड' हो गए हैं; 'मार्क्स ओरिएंटेड' हो गए हैं; 'सब्जेक्ट ओरिएंटेड' हो गए हैं, जबकि शिक्षा का यह उद्देश्य कभी रहा नहीं है।

4) प्रश्न: फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: इसे दो तरीके से देख सकते हैं - एक तो यह कि शिक्षा में जितना 'इन्वेस्टमेंट' किया जाना चाहिए, जितना निवेश किया जाना चाहिए, उस लिहाज़ से नहीं है, क्योंकि हम बच्चे की शिक्षा की बात करते हैं, लेकिन 'अल्टीमेटली' वह शिक्षा पूरे समाज, दुनिया, देश के साथ ही जुड़ी हुई है, तो उसमें निवेश करने की ज़्यादा ज़रूरत है; और बाकी हम फ़ायदा ले सके, हमें कुछ लाभ हो सके; और दूसरा 'पर्सपेक्टिव' यह है कि संसाधन बहुत सीमित हैं - हमारे पास। तो, कुछ ऐसा किया जाए कि निवेश कम हो; और तब भी लाभ हमारे पास ज़्यादा हो। तो, दो 'पर्सपेक्टिव' से इस वाली चीज़ को हम

'एजुकेशन' में देख सकते हैं। लेकिन, यह बताना बहुत ज़रूरी होगा कि शिक्षा में निवेश बहुत कम है। निवेश बढ़ाया जाना चाहिए, ताकि लाभ मिल सके। जो, भारत की स्थिति है, उसमें 'मार्जिनलाइज़्ड' हैं। तो, उसी 'डायवरस सिचुएशन' को 'एड्रेस' करने के लिए निवेश की ज़्यादा ज़रूरत है; और सोचे-समझे हुए निवेश की ज़रूरत है। अगर, हमारे पास सीमित संसाधन हैं, तो हमें ज़्यादा सोचने की ज़रूरत है कि इन सीमित संसाधनों से हम ऐसा क्या करें कि क्या 'पॉलिसी' बनाएँ, क्या व्यवस्था बनाएँ, जिससे हम बेहतर लाभ प्राप्त कर सकें?

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: देखिए - उस लिहाज़ से तो नहीं; यह तो एक बहुत ही 'डायवर्स सिचुएशन' है। इसको 'जनरलाइज' नहीं किया जा सकता, क्योंकि भारत की स्थिति ऐसी है कि उसमें हर तरह के बच्चे हैं। उसमें हर तरह का समाज है। हर तरह के 'टीचर' हैं। हर तरह का प्रशासन है, तो इस बात को 'जनरलाइज' नहीं किया जा सकता। लेकिन, हाँ - होगा कहीं-न-कहीं। हो सकता है कि कहीं बच्चे पीड़ित हैं, कहीं 'टीचर' पीड़ित हैं, कहीं प्रशासन पीड़ित है, क्योंकि बच्चे की शिक्षा किसी एक व्यक्ति का मुद्दा नहीं है। वह सभी से जुड़ा हुआ है। अगर, इस पूरे चक्र में या कड़ी में किसी एक के साथ 'फॉल्ट' है, तो उसका असर नकारात्मक रूप से बाकी पर पड़ता है; जैसे - अगर हम यह कहें कि हम 'क्वालिटी एजुकेशन' लाना चाहते हैं, तो 'क्वालिटी एजुकेशन' में एक मुख्य मुद्दा बन जाता है कि कितने प्रतिशत बच्चे आपके स्कूल में पास हो रहे हैं या 'पास परसेंटेज' 'इंक्रीज़' हुआ है या नहीं? अब उस 'पास परसेंटेज' को 'इंक्रीज़' करने के लिए आप कुछ भी कर रहे हैं। आप कहते हैं कि नहीं, बहुत 'लिनियंट मार्किंग' कर दीजिए। आप कहते हैं कि नहीं छोड़ दीजिए, तो यह 'टीचर' से कई बार 'कंप्रोमाइज' करने के लिए भी कहा जाए कि नहीं?; कर दीजिए, इसको पास कर दीजिए। कम-से-कम स्कूल का 'रिजल्ट' तो बड़ा हुआ दिखेगा। तो, यह दिक्कतें हैं। तो, 'टीचर्स' भी कई बार जो नहीं करना चाहते, उनको करना पड़ता है; और 'इंटीरियर' में आप

जाएँगे, तो आप देखेंगे कि कई जगह बच्चे भी उत्पीड़ित होते हैं। उनके पास शौचालय की सुविधा नहीं है। हालाँकि, सरकार ने स्वच्छ शौचालय अभियान चलाया; और इसके चलते स्कूलों की स्थिति बहुत सुधरी है, लेकिन कुछ जगह ऐसा है कि शौचालय बन तो गए हैं, लेकिन 'फंक्शनल' नहीं है; पानी नहीं है, तो बच्चे कहाँ-कहाँ पीड़ित हैं? यह स्थिति कि पीने का पानी नहीं है, 'बाउंड्री बॉल' टूटी हुई है या 'स्ट्रेंथ' बहुत ज़्यादा है, स्कूल में दो ही कमरे हैं, 'रैंप' नहीं है, खेलने का मैदान नहीं है, तो लेकिन जनरलाइज करना इस बात को बहुत ही 'डिफिकल्ट' है; और क्योंकि शिक्षा अब हर बच्चे का अधिकार है, इसलिए कोई भी बच्चा इस अधिकार से वंचित न हो; उनको चिंता होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, बेटी शिक्षा, जो है, हम सबकी साँझी ज़िम्मेदारी है।

सरकार हमें संविधान के माध्यम से एक अधिकार देती है। 'आर्टिकल 21' की बात करते हैं - जीने का अधिकार। यह जीने का अधिकार कोई लेन-देन की चीज़ नहीं है कि संविधान ने दे दिया और हमने ले लिया। जीने के अधिकार को हम जी पाएँ, इसके लिए पूरी व्यवस्था को कोशिश करनी होगी। ऐसी स्थितियाँ बनानी होंगी कि चाहे तो कानून बनाएँ, 'रूल एंड रेगुलेशन' बनाएँ, ऐसी स्थितियाँ बनानी होंगीं कि हर व्यक्ति यहाँ जी सके। साँस लेना जीना नहीं है। वह गरिमामय जीवन जी सके। इसके लिए कुछ ऐसी स्थितियाँ तैयार करनी पड़ेंगी कि कुछ प्रावधान करने पड़ेंगे, ताकि व्यक्ति जी सके। ठीक है कि यह स्थिति शिक्षा के साथ ही है; और 'आर्टिकल 21ए' के रूप में मौलिक अधिकार के रूप में हमें दे दिया गया है। अब हमें यह लगता है कि बच्चे स्कूल आ रहे हैं, तो शिक्षा का अधिकार हो गया, जबकि ऐसा नहीं है। शिक्षा का अधिकार, वह तब होगा जब उन्हें 'क्वालिटी एजुकेशन' मिलेगी। अभी तो, उन्हें स्कूल जाने का अधिकार मिल गया है। आपको स्कूल में 'एंट्री' करने से कोई मना नहीं करेगा। यह तो 'स्कूलिंग' का अधिकार हो गया। अभी शिक्षा का अधिकार लेना बाकी है। अगर, हाँ - शिक्षा को इस तरह से देखते हैं कि वह इंसान को इतना क्षमतावान बनाए कि वह जीवन को बेहतर तरीके से जी सके या समाज-दुनिया के लिए कुछ बेहतर कर सके, तो वह अभी बाकी है। अभी अधिकार को प्राप्त करने के

लिए सभी को कोशिश करनी है। चाहे, वह माता-पिता हैं, 'टीचर' हैं या स्कूल प्रशासन या 'पॉलिसी मैटर' है। तो, वह प्रावधान, वह सभी की ज़िम्मेदारी है। कोई एक व्यक्ति बच्चे की शिक्षा के लिए ज़िम्मेदार नहीं है। कोई एक व्यक्ति बच्चे के शिक्षा के अधिकार को हासिल भी नहीं कर सकता। हम सबको कोशिश करनी होगी।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: इसके पीछे बहुत सारे कारण हैं। एक मुख्य कारण यह बनता है कि बच्चे किस समाज या आर्थिक पृष्ठभूमि से आ रहे हैं। बहुत सारे बच्चे ऐसे हैं, जो गरीब तबके के हैं, जो 'अर्न' करते हैं; अपने परिवार के लिए दो वक्त की रोज़ी-रोटी कमाने के लिए उन्हें भी काम करना पड़ता है। कुछ बच्चे ऐसे भी हैं कि उन्हें घर भी देखना पड़ता है। बहुत-सी 'फैमिली' ऐसी भी हैं कि पहले वह ज़मीन के मालिक थे, उनके पास खेत थे, पर पर्यावरण के बदलने से बारिश का मौसम बदल गया; और अब क्योंकि, पानी नहीं है, तो खेती नहीं हो सकती; खेती नहीं होगी तो वे क्या करेंगे? तो, मजबूरन उनको अपने खेत बेचने पड़ गए हैं। वे मज़दूर बन गए हैं।

'ग्लोबलाइजेशन' की वजह से समाज आर्थिक रूप से प्रभावित हुआ है। तो, बहुत सारे परिवार ऐसे हैं, जो कमाने के लिए बाहर जाते हैं। उन्हें अपना घर छोड़ना पड़ता है। वे कई बार 'कम्युनिटी' के भरोसे अपने बच्चे को छोड़ देते हैं। कई स्थितियाँ ऐसी भी हैं कि बच्चे के घर के नज़दीक कोई स्कूल भी नहीं मिलता है; और पहाड़ी क्षेत्रों में तो, और भी मुश्किल की बात है। दूरदराज के क्षेत्र में बहुत अच्छे स्कूल का मिल पाना मुश्किल हो जाता है; और कई दफ़ा बच्चे ऐसा सोचते हैं कि जैसी उसकी क्षमताएँ हैं, जैसा उनका मानसिक स्तर है, उसके लिहाज़ से भी हम उनकी व्यक्तिगत ज़रूरतों को पूरा नहीं कर पाते हैं। तो, धीरे-धीरे बच्चे अरुचि लेने लगते हैं; और एक ऐसा पड़ाव आता है कि बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं। ये बहुत सारी स्थितियाँ उसके

लिए ज़िम्मेदार हैं। इसके लिए 'संवाद', 'आलोचनात्मक चेतना' जागृति, ये तो करने-ही-करने हैं, लेकिन सबसे ज़रूरी विचार यह है कि माता-पिता के रूप में, 'टीचर' के रूप में, प्रशासन के रूप में, 'पॉलिसी मेकर' के रूप में, समाज का सदस्य होने के रूप में हम अपनी ज़िम्मेदारी को समझें। अगर, हर व्यक्ति अपनी ज़िम्मेदारियों को निभा लेता है, तो ऐसा नहीं लगता कि व्यवस्था को बहुत बड़ा परिवर्तन या बहुत बड़ा नियम बनाने की आवश्यकता है। हाँ, खुद को बहुत सच्चे, जागरूक, और कर्मठ बनाने की ज़रूरत है कि हम जहाँ हैं, जिन स्थितियों में हैं, उनमें हम बच्चे के लिए क्या कर सकते हैं? तो, खुद को बदलना सबसे ज़रूरी है। अगर, हम परिवर्तित होंगे, तो बाद में बाकी लोगों को परिवर्तित कर सकेंगे। तो, धीरे-धीरे परिवर्तन आएँगा। लेकिन, हमारी कोशिश होती है कि हम दूसरों को बदल दें कि हम 'सिलेबस' बदल दें, माता-पिता, 'टीचर' कई बार ऐसा ही सोचते हैं।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: अपवंचितों की शिक्षा हो या किसी बच्चे की शिक्षा हो, तो शिक्षा तक उसकी पहुँच बनाने का जो एक बहुत बड़ा 'टास्क' था, वह पूरा हो चुका है; और वह है – 'फंडामेंटल राइट; एजुकेशन एज़ ए फंडामेंटल राइट"। यह एक बहुत बड़ी कारगर चीज़ है, क्योंकि जब यह आपका अधिकार पूरा न हो, तो आप इसके लिए 'कोर्ट' का दरवाजा खटखटा सकते हैं। बाकी चीज़ों के लिए; जैसे - नीति निदेशक तत्त्व, अगर पूरे नहीं हो पाते, तो उसके लिए आप 'कोर्ट' नहीं जा सकते, पर यहाँ जा सकते हैं। दूसरी चीज़ यह कि मैं फिर यह कहूँगी कि समाज जैसा भी हो, माता-पिता, स्कूल, प्रशासन सबको मिलकर सोचने की ज़रूरत है कि स्थिति को कैसे बदला जाए। अगर, हमारे पास स्वच्छ भारत अभियान है, हर स्कूल में स्वच्छ शौचालय हैं; लड़कियों के लिए अलग, लड़कों के लिए अलग, तो उस मुहिम को चलाने से यह तो हुआ कि स्कूलों में शौचालय बने; और ध्यान दिया गया; और हमने

'टारगेट' को पूरा किया। ऐसा नहीं है कि इससे पहले यह चीज़ हमारे 'एजेंडा' में नहीं थी। मुख्य चीज़ यह है कि जो चीज़ हमारे एजेंडा में है, उसके लिए क्या अभियान चलाया जाए कि चीज़ें मुकम्मल तरीके से पूरी हो सकें।

शिक्षा का हमारा जैसा भी इतिहास रहा है, उस स्थिति के प्रभाव से बाहर निकलना, उसका सामना करना, नई स्थितियाँ बनाना, यह ज़िम्मेदारी हम सबकी है। हम, सब चीज़ों को सरकार पर, संविधान पर नहीं छोड़ सकते। संविधान में प्रावधान किया गया है। उसको पूरा करना तो हमारी ज़िम्मेदारी है। तो, हम सबको इतना सक्षम बनना होगा कि हम समझ सके कि चीज़ें क्या कह रही हैं?; और हमें बच्चे की 'एजुकेशन' को लेकर क्या काम करने की ज़रूरत है? 'बेसिकली' हम सबको ही इस प्रभाव से बाहर आना होगा; और हम आ सकते हैं। ऐसा नहीं है कि हम नहीं आ सकते; हम आ सकते हैं।

दरअसल, प्रेशर हुआ करता है – 'सोसाइटी' में। दबाब का प्रभाव एक गोल दायरे में घूमता रहता है; जैसे - माता-पिता क्या सोचते हैं कि बच्चा अँग्रेजी पढ़ ले बस, ताकि उसे रोज़गार मिल जाए। तो, हमने शिक्षा को नौकरी के साथ जोड़कर देखा है। यह भी देखा है कि जो नौकरी पर बहुत बड़े पदों पर हैं, वे भी कई बार जटिल परिस्थितियों का सामना नहीं कर पाते, बेहतर निर्णय नहीं ले पाते; और कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो आत्महत्या कर लेते हैं, दबाब को सहन नहीं कर पाते, तो यह कैसी शिक्षा हुई? फिर, तो अँग्रेजी का 'प्रेशर' माता-पिता की तरफ़ से स्कूल पर जाता है। तो, अँग्रेजी 'मीडियम' कर दो। अँग्रेजी सिखा दो। फिर, यह प्रेशर बच्चे पर जाता है। अब बच्चा जिसके 'एनवायरनमेंट' में अँग्रेजी नहीं है, उसके लिए बहुत मुश्किल होता है - अँग्रेजी को माध्यम बनाना, क्योंकि उसका 'थॉट प्रोसेस' तो 'मदर टंग' में चलता है। अब हम लाख कह रहे हैं कि बच्चे अपनी मातृभाषा में ज़्यादा बेहतर सीखते हैं, लेकिन सुनने वाला कोई नहीं है, क्योंकि समाज का 'प्रेशर' है - माता-पिता, स्कूल, और सोसाइटी पर। इसलिए, 'प्रेशर' बनाते हैं कि वह समाज में ऐसा होते देखते हैं। यही 'प्रेशर' वापस समाज पर आता है, क्योंकि 'प्रेशर' इस तरह से घूमता रहता है। पूरे समूह में एक कड़ी को यह समझ में आ जाए कि ऐसा नहीं है। अँग्रेजी एक विषय के रूप में बच्चे सीख

सकते हैं; बेहतर सीख सकते हैं, लेकिन जहाँ तक कुछ नया सीखने की बात है, नया 'कंसेप्ट' बनाने की बात है, तो उसके लिए बच्चे की 'मदर टंग' बेहतर है, क्योंकि बच्चे शुरू से ही उसी भाषा में सोचते हैं, समझते हैं; और शिक्षा कोई किताब की जानकारी देना ही नहीं है, वह तो आपको चिंतन के लिए प्रवृत्त करती है; और चिंतन अपनी भाषा में बेहतर हो सकता है।

इसके अतिरिक्त, एनसीएफ में जो यह गृहभाषा और मातृभाषा का जो मुद्दा है, इनमें फ़र्क 'लैंग्वेज पर्सपेक्टिव' में किया जाता है। दरअसल, होता यह है कि जो तीन 'लैंग्वेज फार्मूला' है, भाषा को इसमें यह कहा जाता है कि बच्चे एक भाषा वह सीखेंगे जो उनकी मातृभाषा है या जो उनकी क्षेत्रीय भाषा है, फिर संविधान की जो राजभाषा है, सह-राजभाषा है, कहीं अँग्रेजी का मामला है, फिर एक आधुनिक भारतीय भाषा सीखेंगे। तो, 3 'लैंग्वेज फॉर्मूला' को, भारत की जो विविधता है, उसको संबोधित करने का तरीका माना गया।

हालाँकि, अभी इसके बारे में और गहराई से सोचने की ज़रूरत है। मान लीजिए - हम उड़ीसा में एक ख़ास इलाके में रहते हैं, जहाँ उड़िया भाषा एक अलग 'स्टाइल' से बोली जाती है; खास तरह की उड़िया या हम संथाली बोलते हैं या कोई और भाषा बोलते हैं। अगर, उड़ीसा के 'लार्जर पर्सपेक्टिव' में देखा जाए, तो वहाँ के बच्चे की मातृभाषा उड़िया है, पर मैं उड़ीसा के उस क्षेत्र में रहती हूँ, जहाँ पर उड़िया नहीं बोली जाती; संथाली बोली जाती है या कोई और भाषा बोली जाती है; और मेरे घर की भाषा वही है – गृहभाषा, यानि कि जो भाषा आप अपने घर में बोलते हैं। लेकिन, जब आप स्कूल आते हैं, तो उड़िया आपकी 'मदर टंग' हो जाएगी। इसलिए, 'बेसिकली' यह 'डिफरेंस' है, जो बच्चे की गृहभाषा है, वह स्कूल के लिए बच्चे की मातृभाषा, प्रथम भाषा नहीं भी हो सकती है। तो, यह तो बच्चा ही तय कर सकता है कि उसकी अपनी मातृभाषा क्या है? कई बच्चे एक से ज़्यादा भाषाई परिवेश में रहते हैं, तो उनकी भाषा एक से ज़्यादा हो सकती है। तो, यह मामला परिवेश का है कि हमारे परिवेश में कितनी भाषा उपलब्ध हैं?; 'बेसिक डिफरेंस' इसमें यही है।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: इन डरों को भी सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता। यह डर रहता है कि हाँ यह डर रहता है कि कहीं हम बदलाव की बात करते हैं, तो चीज़ें कहीं हमसे छूट न जाएँ। यह भी रहता है कि हम अगर बदलाव लाएँ, तो जो परिस्थितियाँ हमें आज बेहतर लगती हैं, तो वे खराब न हो जाएँ। लेकिन, फिर भी इसकी 'क्वांटिटी' क्या है?, इस बात को 'जनरलाइज' नहीं कर सकते। तो, बहुत ज़्यादा है – विविधता। बहुत ज़्यादा है, पर फिर भी दोनों तरह के डर हमारी 'सोसाइटी' में होंगे। 'प्राइवेट' या पब्लिक स्कूल जो हैं, वे इसलिए बदलाव नहीं चाहते कि कहीं उनकी 'इमेज' कम हो जाएगी। वे बदलाव नहीं चाहते कि जितने हमारे संसाधन रहे हैं, ताकि हम माता-पिता को लुभा सकें, तो यह जो लुभाने का बाज़ार है, यह उनका बाज़ार खराब हो जाएगा।

यह भी डर नज़र आता है कि सरकारी स्कूल में माता-पिता अपने बच्चे को भेजना पसंद नहीं करते हैं, लेकिन इस चीज़ को भी हम 'जनरलाइज' नहीं कर सकते। ऐसे बहुत से सरकारी स्कूल भी हैं, जहाँ माता-पिता अपने बच्चे को सरकारी स्कूल में भेजते हैं। हम कहते हैं कि सरकारी स्कूल खराब हैं, 'टीचर' अच्छे नहीं हैं। पर, इन परिस्थितियों में जो बच्चे पढ़ते हैं, वे फिर भी इन परिस्थितियों में बेहतर कर पा रहे होंगे।

अब 'प्राइवेटाइजेशन' हो रहा है। लगता है कि बाहर की संस्थाएँ, विदेशी संस्थाएँ, एनजीओ कह लीजिए, ये बेहतर काम कर सकते हैं। धीरे-धीरे सरकारी 'सिस्टम' को 'कोलेप्स' करने की कोशिश की जा रही है। अगर, यह 'कोलेप्स' होगा, तो हम ज़िम्मेदार होंगे। पर, यकीन मानिए कि देश चलाना इतना आसान नहीं है। देश कोई चलाता नहीं है। हम इस देश को चलाते हैं। अगर, कोई संस्था आकर काम करती है, तो वह अपने बहुत ही 'लिमिटेड सेक्टर' में काम करती है। अगर, उसी संस्था को पूरे देश की शिक्षा

व्यवस्था चलाने को दे दी जाए न, तो वह भी 'कोलेप्स' कर जाएगी। इसलिए, अगर हर व्यक्ति अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करे, तो 'सिस्टम' 'कोलेप्स' नहीं करेगा।

यदि, विद्यालयों के डर की बात करें, तो वे नहीं बदलना चाहते। उन स्कूलों के बाहर जो बोर्ड लगे होते हैं, वह आपको बताते हैं कि वे क्या सोचते हैं। वह बोर्ड लगाते हैं कि दसवीं 'क्लास' में, बारहवीं 'क्लास' में कितने बच्चे इतनी 'परसेंटेज मार्क्स' लेकर आए या हमें कितने 'नेशनल लेवल' पर 'अवार्ड' मिले हैं – राष्ट्रपति जी से या प्रधानमंत्री जी से या राज्यमंत्री जी से। वह यह दिखाते हैं कि देखिए - हमारा स्कूल कितना काबिल है। वह अपनी काबिलियत इस गलत आधार पर तय करते हैं कि बच्चे ने नंबर अच्छे पाए, बच्चे को या स्कूल को राष्ट्रपति जी से, प्रधानमंत्री जी से पुरस्कार मिला। यह 'क्राइटेरिया' है। यह बेहतर 'एजुकेशन' का 'क्राइटेरिया' कैसे हो सकता है? ऐसा करके स्कूल अपनी टीआरपी बढ़ाते हैं। विद्यालय अलग-अलग खेलों में जीत हासिल करते हैं। वह भी इस डर से जीतते हैं कि अगर, हमने 'रिजल्ट' अच्छा नहीं दिया या उनके बच्चों की 'प्लेसमेंट' में अच्छी जगह नहीं हुई, तो उनके स्कूल की साख कम होती जाएगी। इसलिए, वे ज़्यादातर इस कोशिश में लगे रहते हैं कि बच्चों के नंबर बढ़िया आएँ; और 'डिस्टिंक्शन' हासिल हों। वे 'कम्युनिटी' में कुछ बेहतर कर सकें, यह किसी का भी ज़्यादा 'कंसर्न' नहीं रहता। वे सोचते हैं कि जो माता-पिता या 'सोसाइटी' चाहती है - अपने बच्चों के लिए, अगर वह हम दे देंगे, तो 10 से 15 बच्चे ज़्यादा आएँगे - हमारे स्कूल में। तो, उनको भी डर है कि अगर, उन्होंने वैसी शिक्षा दी, जैसी वास्तव में होनी चाहिए, अपने स्कूल में दी, तो उनके स्कूल में कोई नहीं आएगा। इसलिए, सब फिर भौतिक चीज़ों की तरफ भागते हैं। अंक अच्छे आ जाएँ, हम पुरस्कार प्राप्त कर लें। बहुत अजीब सी बात है कि अगर, कोई प्रतियोगिता होती है और हमारे पास 3 पद हैं – 'फर्स्ट', 'सेकंड', 'थर्ड', तो 'फर्स्ट' तो कोई एक व्यक्ति ही आ सकता है। अगर 'टाई' हो गई, तो दो आ गए। 'सेकंड' भी कोई आ सकता है, लेकिन 40 की भीड़ में जो शेष रह गए, वे नाकाबिल हैं; यह साबित नहीं

हो जाता। लेकिन, कोई स्कूल इसे समझने के लिए तैयार नहीं है; और अगर समझता है, तो वह ऐसा कुछ जाहिर नहीं करता।

इसी तरह का डर माता-पिता में भी नज़र आता है। माता-पिता में भी है कि अगर मेरे बच्चे के अच्छे नंबर नहीं आए, तो इसे अच्छी नौकरी नहीं मिलेगी। अच्छी नौकरी का मतलब है - सरकारी नौकरी मिल जाए। सरकारी नौकरियों की संख्या लगातार कम होती जा रही है, लेकिन दुखद यह है कि हमने शिक्षा को नौकरी से जोड़कर देखा है। अगर, हम नौकरी न भी करें, तो हम अपना कोई काम कर सकते हैं; और ऐसा नहीं है कि हमारे पास करने के लिए कोई काम नहीं होगा। इतनी बड़ी जनसंख्या की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए हमें अलग-अलग हुनर वाले लोग चाहिए। हमारा 'फ़ोकस' अच्छे 'मार्क्स' पर रहता है, जबकि हमारा 'फ़ोकस' अच्छे हुनर पर रहना चाहिए। माता-पिता चाहते हैं कि बच्चे सरकारी नौकरी में आएँ, क्योंकि तब उन्हें नौकरी से कोई निकाल नहीं सकता; 'प्राइवेट' नौकरी में तो निकाल सकता है। हमें यह भी देखना होगा कि अगर मन में हमेशा नौकरी से जाने का डर रहेगा, तो व्यक्ति कारगर तरीके से अपना काम नहीं कर पाएगा। अगर, हम यह मानकर चलें कि दुनिया कैसी भी हो, पर हम सही रास्ते पर ही चलेंगे, तो भी 'सपोर्ट' न मिलने पर व्यक्ति अंततः टूट भी जाता है। हम 'एडहॉक', 'कांट्रेक्चुअल' नौकरियों से स्थाई गुणवत्ता ला सकें, यह मुश्किल है।

अगर, इस स्थिति में सुधार की बात करें, तो सबसे ज़रूरी है कि जो भी लोग 'टीचर एजुकेशनल प्रोग्राम' में आ रहे हैं, उनका चयन बहुत सावधानी से होना चाहिए। ऐसा न हो कि जिसे कहीं कोई जगह न मिली, वह 'टीचर' बन जाए। क्योंकि, स्कूल अब किरयाने की दुकान की तरह हैं, जो कभी बंद नहीं हो सकते। व्यक्ति की ज़रूरत है – रोटी, कपड़ा, तो फिर किरयाने की दुकान कभी बंद नहीं होगी। इसी तरह स्कूल हैं; जब तक बच्चे हैं, स्कूल कभी बंद नहीं होंगे। तो, यह दो चीज़ें ऐसी हैं, जो कभी बंद नहीं होंगी। 'जॉब' तो मिल ही जाएगी - इन्हें। पर, जो अच्छे 'टीचर' हैं, जो 'टीचर' बनना चाहते हैं, वे हमारे 'टीचर एजुकेशन प्रोग्राम' में आएँ, क्योंकि 'टीचर एजुकेशन प्रोग्राम' में बहुत सुधार की ज़रूरत है। वहाँ 'एंट्री लेवल' बहुत

'स्ट्रिक्ट' होना चाहिए। दूसरा जो यह बात कि 'टीचर' बनने की 'प्रोसेस' में होते हैं, तो ये क्षमता संवर्धन कार्यक्रमों में बहुत से 'क्रिटिकल चेंज' होने चाहिए। तीसरी बात यह है कि हमारे समय में, तो बहुत से 'प्राइवेट इंस्टिट्यूट' हैं; वह 'टीचर एजुकेशन इंस्टीट्यूट' 'प्राइवेट' हाथों में है। मैं फिर 'जनरलाइज' नहीं करूँगी, लेकिन यह देखने में आता है कि इनकी 'क्वालिटी' बहुत अच्छी नहीं है।

असल में, 'प्रेशर' घूम-फिर के सभी पर है। कुछ चीज़ें यहाँ गड़बड़ हैं, तो कुछ चीज़ें वहाँ गड़बड़ हैं। कुछ नहीं, असल में सबको सुधारने की ज़रूरत है; और तीसरी चीज़ यह कि हमारे जीवन का खुद का लक्ष्य क्या है? कि जैसे आपने कहा कि हम 'डेली वेजेज़' पर हैं, मज़दूरी करते हैं; और 'साइन' करके चले गए, लेकिन अगर आप बाहर की 'कंट्री' में देखेंगे, जो वहाँ 'डेली वेजेज़' पर काम करता है, सफ़ाई करता है, उसे काफ़ी अच्छी तनख्वाह मिलती है। उसने काम की गरिमा को समझा है। उसने काम की गरिमा को बाकी लोगों को समझने का मौका दिया है, तो 'डिपेंड' करता है कि हम किस तरह के 'प्रोफ़ेशन' को ऊँची या नीची निगाह से देखते हैं।

अगर, हमने अपने अपने देश में 'फ़िजिकल लेबर' को अच्छी निगाह से देखा होता, तो आज ऐसी स्थिति नहीं होती। तब, हम हर तरह का काम करने के लिए सहमत हो जाते। इसमें यह बात ठीक है कि कानूनी प्रावधान कुछ सहायता कर सकते हैं, पर मुझे लगता है कि स्व-अनुशासन से बेहतर कोई चीज़ नहीं है। हम कितने स्वयं अनुशासित हैं?; यह मुख्य मुद्दा है। कोई भी कानून बना लीजिए, उसका तोड़ हम निकाल लेते हैं। हमें यह समझने की ज़रूरत है कि मैं कौन हूँ?, मैं क्यों हूँ?, मेरा आने का उद्देश्य क्या है?, मुझे अपनी ज़िंदगी में क्या करना चाहिए? बहुत से लोग ज़्यादा तनख्वाह वाली नौकरी चाहते हैं; यहाँ तनख्वाह होगी, तो ऐसा घर होगा; बड़ी-सी गाड़ी होगी; बच्चे भी अच्छे स्कूल में पढ़ सकेंगे; पब्लिक स्कूल में पढ़ सकेंगे। जहाँ हमारी ज़िंदगी को लेकर यह सोच है, तो वहाँ संतुष्टि का भाव नहीं है।

हमारे ही देश के कुछ समाज ऐसे हैं, कुछ समुदाय ऐसे हैं, जो बेहद संतुष्ट हैं, जो बुनियादी ज़रूरतों के पूरा होने में संतोष अनुभव करते हैं। मान लीजिए

कि चार कमरे का मकान नहीं है, तो दो कमरे का सही, एक कमरे का सही। तो, संतुष्टि का भाव आप में कितना है, संचयन की प्रकृति आप में नहीं है, तो बहुत सारी चीज़ें 'मैटर' करती हैं। आपकी मूल प्रवृत्ति ही आपके व्यवहार, आपकी अपेक्षाओं को प्रभावित करती है। तो, आपका कार्य आपके चिंतन को और आपका चिंतन आपके व्यवहार को प्रभावित करता है। 'बेसिकली' चिंतन को बदलने की ज़रूरत है।

9) प्रश्न: फ़्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: ये सारी बातें 'आलोचनात्मक चेतना जागृति' या 'विवेक जागृति' से जुड़ी हुई हैं कि लोगों में विवेक जागृत होना चाहिए। वहाँ ऐसा नहीं है, जो भी ऐसा सोचते हैं, वे बहुत ही सीमित-सी सोच, संकीर्णतावादी सोच वाले हैं। ऐसा नहीं है। हमारे अपने निजी स्वार्थ रहते हैं। वह निजी स्वार्थ की प्रवृत्ति खराब है।

वे जो ऐसे लोग हैं, वे ऐसा कह सकते हैं कि अगर लोग सोचने लगेंगे, आवाज उठाने लगेंगे, तो उनका नुकसान होगा, लेकिन विध्वंस नहीं होगा। हर तरह के लोग आपको मिलेंगे, जो केवल लाभ उठाने के लिए ही 'आलोचनात्मक चेतना जागृति' की बात करते हैं।

कई बार ऐसा होता है कि हम 'चेतना जागृति' का प्रयास करते हैं, तो जो 'सोकॉल्ड' चेतना वाली जागृति है, वह आपको विध्वंस की तरफ ले जाएगी, लेकिन सृजन करने के लिए कहीं-कहीं विध्वंस होना ज़रूरी है। लेकिन, यह जो विध्वंस है - इसकी प्रवृत्ति सृजनशील है; और एक यह है कि आपने बिल्कुल ही तहस-नहस कर दिया, छोड़ा ही नहीं सृजन के लिए, वह एक अलग तरह की सोच है। दर्द तो जायज़ है। हर तरह की सोच वाले लोग आपको हर जगह मिलेंगे; यह संभव है। संभव है, यह।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: बच्चे साक्षर भी हो रहे हैं; और शिक्षित भी। भारत सरकार के ही दो कार्यक्रम हैं, जिसमें मौलिक अधिकार के रूप में लोगों को शिक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है, जिसमें साक्षरता भी एक है। दूसरा है कि 'राष्ट्रीय साक्षरता मिशन' भी चल रहा है; जो लोग साक्षर नहीं हैं, पर शिक्षित हैं - उनके लिए। यहाँ साक्षरता और शिक्षित होने में भिन्नता यह है कि जब हम साक्षर की बात करते हैं, तो हम अक्षर ज्ञान की बात करते हैं, यानि व्यक्ति पढ़ना-लिखना जानता है; उसका ज़िंदगी में इस्तेमाल करता है। हमारी प्राचीन परंपरा रही है; बातचीत की परंपरा रही है। सुनकर, बोलकर; इस तरह समझ पाई है। शिक्षित होने का मतलब है कि आप कितना बेहतर तरीके से काम करते हैं, बेहतर तरीके से सोचते हैं, जीवन को कितना बेहतर तरीके से जीते हैं, अच्छे निर्णय लेते हैं, आपकी सोच कैसी है?, आप काम कैसे करते हैं?, आपके काम कैसे हैं?, आप जटिल परिस्थितियों का सामना कर पाते हैं या नहीं? ये शिक्षित व्यक्ति की पहचान है – अगर, हम कहीं जा रहे हैं, तो हम सफ़ाई का ध्यान रखें; रास्ते में अगर कुछ कूड़ा मिल जाए, तो वहाँ 'डस्टबिन' में जाकर फेंक दें। वहाँ यह ऐसे लोग हैं – नाना, नानी, मामा, मामी, जो कभी स्कूल नहीं गए, लेकिन शिक्षित हैं। वे जानते हैं कि परिवार को कैसे चलाया जाता है? वे जानते हैं कि बच्चे को किस तरह के संस्कार देने चाहिए?, बच्चे के साथ किस तरह से व्यवहार किया जाना चाहिए?, समाज की चुनौतियों का कैसे सामना करना चाहिए, तो वह हमारा 'एजुकेटेड' होने का मामला है, लेकिन वे अपना नाम लिखना नहीं जानते। वे पढ़ नहीं सकते कि अखबार में क्या लिखा है। वे पढ़ नहीं सकते या कहीं कुछ लिखना होता है, तो वे किसी को लिख नहीं सकते। तो, साक्षरता का मतलब सीधे-सीधे पढ़ने लिखने से है। यह बहुत सतही है। लेकिन, हाँ - शिक्षित होने में वह भी एक अहम भूमिका निभाता है। कोई कंपनी आ आए;

और वह आपको कोई चीज़ बेच रही है; और उस चीज़ पर यह लिखा है – बारीक-सा, सभी सेवा शर्तें लागू, तो इसका मतलब क्या है? एक तो इसको पढ़ पाना ज़रूरी है। फिर, यह समझ पाना भी ज़रूरी है कि यह इतना बारीक-सा, छोटा-सा क्यों लिखा हुआ है? फिर, यह 'बोल्ड' क्यों नहीं लिखा गया? इस बात को समझ पाना शिक्षा का मुद्दा है, लेकिन भाषा का स्वरूप हमारे आसपास किस रूप में व्याप्त है, उसे भी समझना ज़रूरी है। साक्षरता उद्देश्य नहीं है, लेकिन साक्षरता शिक्षित होने में एक अहम भूमिका अदा करती है।

जहाँ तक पैसे की कमी का प्रश्न है, तो मुझे लगता है कि ऐसा नहीं है। जनसंख्या लगातार बढ़ ही रही है। हर साल एक नई पीढ़ी तैयार हो जाती है - स्कूल पहुँचने के लिए। ज़्यादा पैसे होना, इस बात के लिए तो ठीक हो सकता है कि हम ज़्यादा सुविधाएँ दे सकते हैं या फिर हम 'फंक्शनल टॉयलेट' बना सकते हैं; 'लिटरेसी' बढ़ा सकते हैं - बच्चे के लिए। लेकिन, पैसा कम है; ऐसा नहीं है। बल्कि, ऐसा है कि आप संसाधनों को कैसे सोच-समझकर इस्तेमाल करते हैं?; और किस चीज़ में आपको निवेश करने की ज़रूरत नहीं है?, तो वह हो जाएगा। बहुत सारी चीज़ें कभी नहीं होतीं; और ऐसा भी नहीं है कि सरकार ही पहले 'प्रोविज़न' करे, बल्कि कुछ चीज़ें हमारे करने से भी होती हैं। आप मान लीजिए कि पता चले बच्चे स्कूल कब आएँगे?, जब 'टॉयलेट' में पानी की व्यवस्था होगी। पानी कैसे आएगा?, जब 'पाइपलाइन' लगेगी। अगर, समाज में ऐसे लोग हैं, जो इसमें सहायता कर दें, तो यह काम हो जाएगा।

'बेसिकली' आप की प्रकृति, आपका नज़रिया, आपकी मंशा, यह 'इंपॉर्टेंट' है कि आप वास्तव में करना चाहते हैं, तो आपके पास 10 तरह के समाधान हैं; नहीं करना चाहते, तो यह नहीं है, वह नहीं है। लेकिन, ऐसा भी नहीं है कि हमेशा मनचाहा काम हो जाता है। 'टीचर' भी सोचता है कि अगर, यह प्रावधान होता, तो बेहतर तरीके से हो सकता था। उसकी खुद की भी 'लिमिटेशंस' हैं। बहुत तरह की चीज़ें हों, लेकिन प्रवृत्ति मुख्य बात है। 'ओबवियसली' जनसंख्या बढ़ रही है, तो संसाधन, हमारे पास कम होते चले जा रहे हैं।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: यह बड़ी समस्याएँ हैं। अधिकतर मामले ऐसे सामने आते हैं कि बच्चे कुपोषित हैं, जो अपने घर में दो वक्त का भोजन नहीं पाते हैं; और स्कूल में वह 'मिड-डे-मील' का भोजन मिलता है, तो वहीं वे भरपेट भोजन करते हैं। यह भी सच है कि जब, तक आप को पौष्टिक भोजन नहीं मिलेगा, तब तक 'ब्रेन' बहुत अच्छी तरह से 'फंक्शन' नहीं करता। पौष्टिक भोजन न मिले, तो बीमार रहते हैं। बीमार रहने से हमारे सीखने पर फ़र्क पड़ता है। हमारा दिमाग बंद होने लगता है। विटामिन 'डी' की कमी से बच्चों के 'ब्रेन' पर फ़र्क पड़ने लगा है। विटामिन 'डी' की कमी तो बहुत सारे बच्चों में है। तो, पोषण, सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में, सीखने को प्रभावित तो करता ही है।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

व 13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: देखिए - समय परिवर्तनशील है। हाँ, जो चीज़ें बहुतायत में नज़र आती हैं, तो हमें लगता है कि यह संस्कृति स्थापित हो चुकी है। लेकिन, बहुतायत का मतलब यह नहीं है कि हर जगह यह स्थिति है। आज 100 में से 90 लोग काम करने वाले हैं। तो, 10 लोग ऐसे भी होंगे, जो काम करना नहीं चाहते। 100 में से 90 लोग काम न करने वाले हों, तो ऐसा साबित हो जाता है कि वहाँ काम न करने वाली संस्कृति है, जबकि ऐसा नहीं है। व्यक्ति अपने आप में एक बहुत बड़ा कारक है, संस्कृति का हिस्सा है। सारे व्यक्ति एक जैसी सोच वाले हों, यह ज़रूरी नहीं है।

शिक्षा और राजनीति के बीच में हमेशा से एक सम्बन्ध रहा है। दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं या आर्थिक दृष्टि से भी देखा जाए, तो इतिहास में जितनी भी तरह की अर्थव्यवस्था चल रही हैं या आने वाली हैं, उसका प्रभाव संस्कृतियों पर पड़ता है। वह स्थापित संस्कृति नज़र आती है, लेकिन उसमें भी परिवर्तन आ सकता है। लेकिन, परिवर्तन के घटक बहुत सारे हैं। प्रभाव को सामने आने में समय लगता है। प्रभाव जब इकट्ठा हो जाता है, तो एक बड़े बदलाव के रूप में हमारे सामने आता है। पहले से तय स्थापित संस्कृति लगती तो है कि वह स्थापित है, पर ऐसा नहीं है। वह भी परिवर्तनशील है। जहाँ तक भारत की राजनीतिक सोच में परिवर्तन का प्रश्न है, तो भारत की राजनीतिक सोच में मुझे यह बदलाव नज़र आता है कि स्कूल की बुनियादी ज़रूरतों पर ध्यान दिया गया है। बच्चे को 'टॉयलेट' मिल जाएँ या फिर स्कूल 'बिल्डिंग' बेहतर हो सके, यानि कि स्कूल को 'कम्युनिटी' के साथ जोड़ने की एक अच्छी कवायद की गई है। लेकिन, ऐसा नहीं है कि इससे पहले कुछ नहीं था। फ़र्क बस इतना पड़ता है कि अगर, 'पॉलीटिकल विल' है, तो हर काम होगा, नहीं तो - नहीं होगा। आप छोटे से स्तर पर तो कर पाएँगे, पर पूरी 'कंट्री' के परिप्रेक्ष्य में यह छोटा प्रयास नज़र नहीं आएगा।

इसके अलावा, भारत की सामाजिक स्थिति में बदलाव तो काफ़ी आए हैं। किसी को कोई 'कंसर्न' नहीं है कि कौन किस जाति का है। जाति तो हमारे प्राचीन इतिहास में भी नहीं थी। यह तो बाद में धीरे-धीरे काम के आधार पर जाति का भेद 'डेव्लेप' होता चला गया, जबकि पहले कर्म के आधार पर था। पर, आज ऐसा है कि जो, पढ़ने-लिखने का काम करता है, वह ब्राह्मण है। तो, उसकी संतान भी ब्राह्मण होगी। एक ही परिवार में हर तरह के लोग हैं। बाद में, मनुष्य ने इसे विकृत कर दिया; अब विकृत इस तरह से हुआ कि अब एससी, एसटी का भी एक 'कमीशन' बन गया है या अल्पसंख्यक समुदाय का एक 'कमीशन' बन गया है। तो, वह बताता है कि इन्हें अपने अधिकार नहीं मिल रहे। इसलिए, यह 'कमीशन' बनाने की ज़रूरत है। फिर, वह जो बहुसंख्यक हैं, उनका क्या होगा? जो बहुसंख्यक हैं, वह तो अल्पसंख्यक की श्रेणी में आता जा रहा है। जो सारे 'माइनॉरिटी' के

'क्राइटेरिया' थे, वे अब 'माइनॉरिटी' में नहीं हैं। जो, 'मेजॉरिटी' में थे, वे अब 'मेजॉरिटी' में नहीं हैं। इस बात को समझने की ज़रूरत है, लेकिन जातिगत व्यवस्था में बदलाव आ रहा है। लोग चाहते हैं। अगर, बदलाव आ जाएगा, तो फिर हम समाज को तोड़ नहीं पाएँगे - अपने वोट बैंक के लिए। ये लोग मानते हैं कि अगर समाज में सब मिलकर काम करेंगे, तो हमारी कौन सुनेगा? इसलिए, ये समाज को तोड़ते हैं, ताकि वे उस पर शासन कर सकें। यही है - तोड़ो और राज करो। इसी संदर्भ में हम आरक्षण को भी देख सकते हैं। आरक्षण सिर्फ आर्थिक आधार पर ही होना चाहिए। जाति के आधार पर आरक्षण नहीं हो, तो ही अच्छा है। 'डिफरेंटली एबल्ड' के लिए हो, आर्थिक रूप से विपन्न के लिए हो, लेकिन बाकियों के लिए आरक्षण नहीं होना चाहिए। आरक्षण जिस मकसद से शुरू किया गया था, वह था कि बहुत सारे लोगों को अवसर नहीं मिले। इसलिए, वे बाकी लोगों के साथ 'कोंपीट' नहीं कर सकते। उनका पढ़ने-लिखने का काम बहुत कम रहा, लेकिन अब तो बहुत साल हो चुके हैं। कई पीढ़ीयाँ निकल चुकी हैं। असल में, एससी कोटे में जिस व्यक्ति को लाभ चाहिए, वह तो अभी भी लाभ से परे है। जो क्रीमी लेयर में आ गए हैं, उन्हें मिल जाता है, लेकिन जिसे मिलना चाहिए, वह तो अभी भी वंचित है। ओबीसी 'कैटेगरी' में ऐसे बहुत से लोग हैं, जिनके पास करोड़ों के खेत हैं, बंगला है, वह भी आरक्षण में आगे आ जाते हैं; वंचित तो कहीं-न-कहीं रह गया। 'जनरल कैटेगरी' में भी ऐसे बहुत से लोग हैं, जो आर्थिक रूप से विपन्न हैं, पर उनको इसलिए आरक्षण नहीं मिलता रहा कि उनकी जाति आरक्षण में नहीं है। यह तो बहुत ही गलत है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: मुझे तो, दो ही वर्ग नज़र आते हैं - एक है सरकारी और दूसरा है निजी। पूरी शिक्षा इन दो वर्गों में बँटी हुई है। सरकारी शिक्षा और निजी शिक्षा, बस। अब, अगर कोई ऐसा वर्ग है, जो साधन संपन्न नहीं है, 'अफोर्ड' नहीं कर सकता है, जब उसके पास साधन आते हैं, वह अपने बच्चे को सरकारी

स्कूल से निकालकर निजी स्कूल में डाल देता है। जो बच्चे यहाँ से निकलते हैं, वह भी वर्गीकरण की प्रक्रिया में शामिल हो जाते हैं। जो निजी स्कूल की फ़ीस चुका सकते हैं, तो वे उसमें चले गए। लेकिन, जब हम किसी 'क्लास' में पढ़ते हैं, जो निजी स्कूल का माहौल है, हम उस माहौल में 'एडजस्ट' नहीं हो पाते हैं, क्योंकि आपने उस स्कूल में दाखिला तो ले लिया, पर उस स्कूल में बहुत सारी 'प्रोसेस' हैं, जिसमें आप पीछे हैं; आप पिछड़े हुए हैं; आप नहीं कर पा रहे, क्योंकि वह आपकी ज़िंदगी में कभी रहा ही नहीं, तो - माहौल, आपका फ़र्क है; और जो आपके दोस्त हैं, उन दोस्तों और आपके माहौल के बीच बहुत ज़्यादा फ़र्क है; 'कल्चरल डिफरेंसेस' हैं; 'सोशल इकोनामिक डिफरेंस' हैं। फिर, बच्चे में धीरे-धीरे हीन भावना आने लगती है। जब, यह आ जाती है, तो आप एक तरह के तनाव, दबाव से गुजरते हैं; और बेहतर सीख नहीं पाते। आप फिर वापस पीछे आ जाएँगे; और फिर एक वर्ग तैयार हो जाएगा। निजी स्कूल में भी दो-तीन तरह के बच्चे हैं - एक तो, बहुत 'शार्प माइंडेड' है, दूसरे, बहुत 'मीडियम' बच्चे हैं; और तीसरे, पिछड़े हुए बच्चे हैं। इनसे भी वर्ग बन जाते हैं।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: वह कैसे नागरिक तैयार कर रही है? सवाल बहुत ही मुश्किल है। अब मैं पूरे शिक्षा तंत्र को देखूँ, तो उसके उद्देश्यों में कहीं कोई कमी नहीं है, लेकिन उसके उद्देश्य ज़मीन पर आकर व्यवहार में नज़र नहीं आते हैं; वह फ़र्क है। वह ऐसे नागरिक तैयार कर रही है कि अच्छे अंक लाओ; अच्छी नौकरी पाओ; अपनी तनख्वाह पाओ; और बस - काम खत्म, आपका। उसका उद्देश्य तो होगा - सर्वांगीण विकास का। उसकी 'इंटरवेंशन' तो होगी कि हम ऐसे बच्चे, नागरिक तैयार कर सकें, जो लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना कर सकें; लोकतांत्रिक मूल्यों के हिसाब से जीवन जी सकें, लेकिन हमने लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए अपने समाज में कोई जगह छोड़ी नहीं है। तो, उद्देश्य कागज़ पर तो बहुत बढ़िया हैं; और ऐसा भी हो सकता है कि मंशा भी

हमारी वही हो - लगातार। अच्छी बात है। लेकिन, जिस तरह ज़मीन पर चीज़ों को देख रहे हैं, उससे तो यही लगता है की बस अच्छे अंक ले आओ। अच्छे अंक का मतलब है - अच्छी नौकरी। अच्छी नौकरी का मतलब - मोटी तनख्वाह। मोटी तनख्वाह का मतलब है - फिर से आप गाड़ी ले लीजिए; बड़ा बंगला ले लीजिए।

इसलिए, हमें 'आलोचनात्मक चेतना' के बारे में सोचना होगा। इससे सहायता ज़रूर मिलेगी। अगर, इसे सत्यनिष्ठता से लागू किया गया, इसके लिए सत्यनिष्ठता से प्रयास किया गया, और व्यक्ति समझने लगे कि उसका भी फर्ज है, तो हो जाएगा। कोई भी सरकार यदि, बदलाव लाना चाहती है, तो सभी व्यक्तियों को कोशिश करनी पड़ेगी, पर अगर सरकार नियम बना कर रख दे और लोग न करें, तो सरकार का लोगों के न करने पर बस नहीं है। लोगों को विवश करने के लिए वह नियम बनाती है, पर वह केवल एक सीमा तक ही काम करता है। यह कुछ ऐसे ही है; जैसे - आप नियम बनाने पर एक इलाके में कूड़ा नहीं फैला रहे, पर अपने घर के आस-पास कूड़ा फैला रहे हैं। तो, यह स्थिति है - शिक्षा की। व्यक्ति इसके लिए स्वयं ज़िम्मेदार है। कुछ प्रावधान उसमें सहयोग करते हैं, लेकिन काम तो अंततः व्यक्ति को स्वयं ही करना है।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: वह बाँध रही है; विषय के साथ बाँध रही है। मैं तो यह कहूँगी कि बच्चे की जिज्ञासा बनी रहे, इसके लिए भी प्रयास नहीं किए जाते हैं। सवाल भी हमारे, जवाब भी हमारे। यह स्थिति है - आमतौर पर शिक्षा की। यही स्थिति है कि सवाल ऐसे हैं, इसमें जवाब भी हमारे हैं, बस। बच्चे के लिए कोई जगह नज़र नहीं आती है। हम विषय 'ओरिएंटेड टीचिंग' की बात कर रहे हैं। इसमें 'एजुकेशन' तो कहीं है ही नहीं। अब यदि, जिज्ञासा को बढ़ाना हो, तो एक 'टीचर' के लिए सबसे बड़ी चुनौती है कि वह खुद को गलत होने

के लिए भी तैयार कर सके। खुद को अज्ञानी होने के लिए भी तैयार कर सके। यह स्वीकार कर सके कि उसके पास सारा ज्ञान नहीं है; और वह सर्वज्ञ नहीं है। जब, बच्चे सवाल पूछेंगे, तो उसके पास सवालों के जवाब होने चाहिए। लेकिन, बच्चे कहीं से भी कोई सवाल पूछ सकते हैं; और अक्सर उसका तार्किक जवाब 'टीचर' के पास नहीं होता। ऐसे प्रश्नों के जवाब तो हो जाएँगे कि देश कब आजाद हुआ?, गाँधी जी कौन थे?, नेहरू जी कौन थे?, बाबा अंबेडकर साहब कौन थे?, संविधान कब बना? या भारत के कितने राज्य हैं?, कितनी भाषाएँ बोली जाती हैं?; ये जानकारीपरक सवाल हैं। इनके जवाब तो 'टीचर' के पास होंगे, लेकिन किसी बच्चे में यह जिज्ञासा हो कि हमारी पाठ्यपुस्तक में संविधान की प्रवेशिका क्यों दी गई है? उसमें कुछ शब्द हैं – गणराज्य। यह गणराज्य का मतलब क्या है? हम सौहार्द की बात करते हैं, लेकिन हमारे आसपास रोज़ लड़ाई-झगड़े होते रहते हैं; इतनी मारपीट की घटनाएँ होती हैं, तो समाज में यह सौहार्द क्यों नहीं है? 'टीचर' के पास इसका क्या जवाब रहेगा? वह पूछेगा कि यदि, ऐसा नहीं हो पा रहा, तो बड़े क्यों नहीं समझते? इस बात का अब 'टीचर' के पास भी जवाब नहीं है कि बड़े क्यों नहीं समझते? वह कह देगा कि नहीं, लोग ऐसे ही हैं। बच्चे की जिज्ञासा तो यही है कि जो बड़े हमसे करने के लिए कहते हैं, वे खुद क्यों नहीं करते? तो, द्वंद्व का समाधान 'टीचर' के पास नहीं है। फिर, यह भी मुद्दा आता है कि विषय की पढ़ाई कब होगी?, हम विज्ञान कब पढ़ेंगे?, हम सामाजिक विज्ञान कब पढ़ेंगे?

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: क्योंकि, देखिए - शिक्षा का अधिकार आने के बाद काफ़ी सकारात्मक परिवर्तन आया है। अभी भी हमारी कुछ कमियाँ हैं। जो, 'इंटीरियर' के स्कूल हैं, गाँव-देहात के स्कूल हैं, तो कायदे से वहाँ भी तो 'टीचर' चाहिए न?, पर 'टीचर' वहाँ जाना पसंद नहीं करते, क्योंकि 'टीचर' अगर वहाँ चला जाएगा, तो उसका बच्चा भी उस सरकारी स्कूल में पढ़ने

लगेगा। वहाँ पर 'प्राइवेट' स्कूल है ही नहीं। यह वजह है कि हम उस लिहाज़ से सब तक नहीं पहुँच पा रहे हैं; और आर्थिक परिस्थितियाँ भी हैं कि बच्चे स्कूल से बाहर हैं; और कुछ ऐसी स्थितियाँ भी हैं कि स्कूल उन पर पूरा ध्यान नहीं दे पा रहा। स्कूल यह कोशिश नहीं करता है कि वे स्कूल में पढ़े-लिखें, ताकि कुछ पढ़ाई-लिखाई का माहौल बन सके। ऐसा है।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: नहीं, बल्कि यह होना चाहिए। तभी, इस सुधार की बात कर सकते हैं; और तभी हम सब बच्चों को एक स्थान पर ला सकते हैं। शिक्षा में जो भेद हैं - संपन्न और विपन्न का, सरकारी और निजी विद्यालय का; कभी यह समाप्त हो पाएगा? मुझे ऐसा लगता है कि भारत की सामाजिक स्थिति इस मार्ग में बाधा पैदा नहीं करती; नहीं बिल्कुल भी नहीं। समाज तो कैसा भी मान लीजिए। मेरा और आपका समाज एकदम अलग है, लेकिन आपके समाज में भी स्कूल हैं; मेरे समाज में भी स्कूल हैं। एक जैसी 'समान स्कूल प्रणाली' है। जो, आप पढ़ते हो, मैं पढ़ रही हूँ; कम या ज़्यादा, दोनों के लिए नियम भी समान हैं। क्या समान शिक्षा में यह होगा कि हम सबके लिए शिक्षा के उद्देश्य अलग हों? संभव ही नहीं है। हम भले ही अलग-अलग परिवारों से हों; अलग-अलग समाज से हों, लेकिन हमारा देश एक है; हमारा इतिहास एक है। तो, शिक्षा का 'अल्टीमेट' उद्देश्य भी एक ही होगा। मुझे ऐसा लगता है कि 'समान शिक्षा प्रणाली' लागू होना मुश्किल है। अब वापिस आना मुश्किल है, लेकिन कोशिश की जा सकती है। असंभव तो कुछ भी नहीं है। उसका एक तरीका यह है कि जो पहले-पहले कर लिया जाना चाहिए; और वह किया भी गया है, स्कूल 'एजुकेशन एक्ट' के नाम पर कि सभी स्कूलों में क्या-क्या चीज़ें होनी चाहिए?, क्या सुविधाएँ होनी चाहिए?, कक्षा का आकार कैसा हो?, 'फिजिकल ग्राउंड' है या नहीं है?, 'लाइब्रेरी' है कि नहीं

है?, किताबें हैं?, 'टीचर' हैं?; इन चीज़ों को लेकर समानता लाने की कोशिश की गई है। लेकिन, यह भौतिक संरचना है; 'इंफ्रास्ट्रक्चर' समझ लीजिए। दिक्कत वहाँ पर है, जहाँ हमने 'क्लास' तो बना ली, लेकिन अब 'क्लास' के भीतर जो घट रहा है, उस पर हमारा बस नहीं है; और हमने पाठ्यचर्या की रूपरेखा भी बना ली। वह पूरे तंत्र के लिए है। वह हर तरह के स्कूल के लिए है, लेकिन जो पाठ्यचर्या मेरे स्कूल या मेरी 'क्लास' में 'ट्रांज़ेक्ट' हो रही है, उस पर हमारा बस नहीं है। इसलिए, मुश्किल है। यदि, हम 'आलोचनात्मक चेतना', 'विवेकीकरण', इत्यादि को साथ लेकर आएँ, तब संभव है। हर कोई अपना फ़र्ज़ समझ सके; और साँझी समझ बनाना भी ज़रूरी है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: इस प्रश्न पर साक्षाकारदाता द्वारा प्रश्न 8 के उत्तर में ही प्रतिक्रिया अभिव्यक्त कर दी गई है।

प्रो. (डॉ.) सत्येंद्र गुप्ता का साक्षात्कार

5) साक्षात्कारदाता: डॉ. सत्येंद्र गुप्ता
आचार्य व अधिष्ठाता, शिक्षा विद्यापीठ, गलगोटिया विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: निश्चित रूप से फ़्रेरे के विचारों पर उस समय की परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा होगा, क्योंकि व्यक्ति के विचार परिस्थितिजन्य होते हैं। परिस्थितियों का प्रभाव, व्यक्ति के विचारों या उसकी सोच पर ज़रूर पड़ता है। फ़्रेरे की तत्कालीन परिस्थितियाँ बड़ी शोषणकारी थीं। तभी, उन्होंने 'उत्पीड़ितों के शिक्षाशास्त्र' के बारे में कहा था।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: भारत में वैदिक काल में ज्ञान प्राप्त करने के लिए ज्ञान प्रदान किया जाता था, लेकिन आज के समय में पढ़ने का यह अर्थ हो गया है कि हमें इसके बाद नौकरी चाहिए। आज तो, रोजगार प्राप्त करना ही शिक्षा का उद्देश्य हो गया है, लेकिन शिक्षा तो ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही होनी चाहिए; जैसा कि विवेकानंद ने कहा था। गांधीजी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास था। मेरे अनुसार शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त कर अपने विचारों में वृद्धि करना और दुनिया को समझना होना चाहिए, ताकि लोगों का भला किया जा सके। यदि, पद्धति की बात करें तो हमें शिक्षक केंद्रित होने के बजाय विद्यार्थी केंद्रित होना होगा। हमें विद्यार्थियों की सीखने की गति के अनुसार काम करना होगा, ताकि विद्यार्थी वास्तविक रूप से सीख सकें कि लोगों का भला कैसे किया जा सकता है?

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन प्रासंगिक तो है ही, क्योंकि पूँजीवादी व्यवस्था तो भारत में भी है। लोगों को अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं है; हम क्या कर सकते हैं? या हमें क्या मिलना चाहिए?, इसका ज्ञान नहीं है। यदि, आरक्षण की बात करें, तो वास्तव में जो आर्थिक रूप से कमज़ोर हैं, उन्हें आरक्षण का लाभ नहीं मिल पा रहा। समाज का जो वर्ग उसका फ़ायदा ले चुका है, वह ही आगे भी उसका फ़ायदा ले रहा है। इसी तरह सवर्णों में भी है कि जिसके अभिभावक पढ़े-लिखे हैं या जो नौकरी में हैं या जो समाज के प्रबुद्ध वर्ग में हैं, उन्हीं के बच्चे आगे बढ़ रहे हैं।

जिनके घर में भी लोग शिक्षा से नहीं जुड़े हैं, उनके बच्चे शिक्षा में पीछे रह जाते हैं। वे सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते हैं। असल में, उन्हीं के समाज के लोग उनको दबा देते हैं; उन्हें सही जानकारी नहीं देते। लोगों में यह बात भी है कि अगर वे लोग पढ़-लिख जाएँगे, तो हमारे यहाँ नौकरी कौन करेगा; उन्हें नौकर कहाँ से मिलेंगे; यह सब कुछ भी लोगों के अंदर भरा है। इसी प्रकार, माता-पिता यह भी कहते हैं कि बच्चे पढ़ने-लिखने के बाद बिगड़ जाते हैं, यानि वे हमारा पुश्तैनी काम नहीं करेंगे। इसलिए, वे यह सोचते हैं कि पढ़-लिख कर क्या होगा। फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता इन्हीं सब परिस्थितियों को समझने के संदर्भ में देखी जा सकती है।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: जो लोग पैसा कमा लेते हैं, वे चाहते हैं कि उनके बच्चे अच्छी शिक्षा प्राप्त करें। आजकल सभी जगह 'फ़ाइव स्टार स्कूलों' का 'सिस्टम' आ गया है; 'टोटल एसी' वाले स्कूल। आज लोग विदेशों में डिग्री लेने जा रहे हैं; 'फ़ाइव स्टार प्राइवेट स्कूल' से वे बच्चे पढ़ कर जा रहे हैं, जो आगे चलकर कोई छोटा-मोटा व्यवसाय करने के बारे में नहीं सोचते या जो समाज के

आर्थिक रूप से कमज़ोर लोगों के साथ उठेंगे-बैठेंगे नहीं। इस प्रक्रिया की वजह से भेदभाव पैदा हो जाता है। इसलिए, सरकारी स्कूल और 'प्राइवेट' स्कूल के बच्चे कभी आपस में मिल नहीं पाते; और यह इसी तरह चलता रहता है। हमें शिक्षा के ज़रीए इसको बदलने के बारे में सोचना होगा, ताकि शिक्षा सभी को प्राप्त हो सके।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: जिनके पास ज्ञान की समझ नहीं है, वे सभी उत्पीड़ित हैं; और जिन्होंने ज्ञान प्राप्त कर लिया है, वे 'पावर' में आ जाते हैं। वे दूसरों का उत्पीड़न करने लगते हैं। अगर, आपके पास ज्ञान हो; और आप आर्थिक रूप से सक्षम नहीं हैं, तो भी आप अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर सकते हैं।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: पहला कारण तो यही है कि माता-पिता को लगता है कि शिक्षा से कोई फ़ायदा नहीं है। अगर, पढ़ाने के बाद भी बच्चे को मज़दूरी करनी पड़ रही है, तो माता-पिता सोचते हैं कि ऐसी शिक्षा का क्या फ़ायदा? मध्यमवर्ग तो मजबूरी में 'प्राइवेट सेक्टर' में नौकरी कर रहा है, क्योंकि सभी को सरकारी नौकरी नहीं मिल सकती। निम्न वर्ग को लगता है कि पढ़-लिख कर हमें वही काम करना है, तो हम क्यों पढ़ें? पढ़ाई से उनकी दुकान पर तो कोई फ़र्क पड़ेगा नहीं। इस सम्बन्ध में फ़्रेरे के विचारों से लोगों को जागरूक किया जा सकता है, लेकिन लोगों का स्वयं जागरूक होना भी जरूरी है; जिसके लिए यह प्रयास किया जा सकता है कि एनजीओ के ज़रिए उन लोगों तक पहुँचना पड़ेगा, जो शिक्षा प्राप्त नहीं हैं। उन्हें जागरूक करना होगा; जैसे - 'मोदी' जी ने बालिकाओं को पढ़ाने से संबंधित कार्यक्रमों पर ज़ोर दिया है। इससे लोगों में समझ बनती है। इसमें धार्मिक गुरुओं का 'रोल' भी हो सकता है, क्योंकि हम सभी लोग धर्म को बहुत मानते हैं। अगर, धार्मिक गुरु सभी

को कहें कि अपने बच्चों को पढ़ाइए, तो मुझे लगता है कि यह लोगों को जल्दी प्रभावित करेगा। किसी राजनीतिक व्यक्ति के विरोधी के लिए उसकी बात को मानना कठिन हो सकता है, पर धार्मिक गुरुओं की बात तो हर कोई व्यक्ति मानता है या फिर 'अन्ना हजारे' जैसे नेता कहें, तो लोग आसानी से मान लेते हैं।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: देखिए - आप जितने भी वर्गों का नाम ले रहे हैं, यदि उनका विश्लेषण किया जाए, तो यह जानना होगा कि इन वर्गों में वे कौन-से लोग हैं, जो शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहे। वहाँ आप देखेंगे कि जो सरकारी नौकरी में आ चुके हैं या आर्थिक रूप से सक्षम लोग हैं, उनके यहाँ आपको इस प्रकार की परेशानी देखने को नहीं मिलेगी कि उनके लोग नहीं पढ़ रहे। यह समस्या आपको वहाँ मिलेगी, जो लोग आर्थिक रूप से कमज़ोर हैं। जो आर्थिक रूप से शक्तिमान हैं, वे सारे वर्ग शिक्षा पर व्यय कर लेते हैं। ऐसा बहुत कम देखने को मिलेगा कि कोई वर्ग आर्थिक रूप से सक्षम है, लेकिन वह शिक्षा नहीं ले रहा। यह हो सकता है कि कुछ संपन्न वर्ग अपने बच्चों को केवल आठवीं तक या बारहवीं तक पढ़ा रहे हैं, पर यह देखने में नहीं आता कि संपन्न वर्ग अपने बच्चों को बिल्कुल भी नहीं पढ़ा रहे।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: नौकरी मिलेगी या नहीं, यह भय तो देखा जा सकता है या प्राप्त शिक्षा का लाभ उठा पाएँगे या नहीं। शिक्षक इस बात से डरते हैं कि अगर आप उनका 'सिलेबस' बदल दें, तो उन्हें दुबारा पढ़ना पड़ेगा; वे बदलाव को नहीं

चाहते। विषयवस्तु या विधि बदलने से उनमें डर आ जाता है कि कौन दुबारा से मेहनत करे। इसके अलावा, यदि सरकार अपने स्कूल बढ़ा ले; और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने लगे, तो 'प्राइवेट' स्कूलों में यह डर हो सकता है कि तब बच्चे उनके स्कूलों में शिक्षा लेना क्यों चाहेंगे?, पर मुझे लगता है कि निकट भविष्य में ऐसा कुछ नहीं होने वाला। सरकार तो अब खुद ही शिक्षा पर कम-से-कम व्यय कर रही है। अब सरकारी नए स्कूल, नए 'कॉलेज' और नई 'यूनिवर्सिटी' का खुलना ज़्यादा सुनाई नहीं देता। 'वैकेंसी' भरी नहीं जा रही, तो इसका फ़ायदा 'प्राइवेट' स्कूल को ही होगा।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: यह आक्रोश तो बढ़ सकता है कि लोगों को पता चले कि उन्हें लूटा जाता रहा है या ये लोग उन्हें लूटते थे; हमारे अधिकारों का हनन करते थे। कुछ समय के लिए यह हो सकता है कि लोग लूटने वालों का विरोध करने लगें, पर यह संभावना भी रहेगी कि आप जिन परिस्थितियों के विरोध में लड़ के खड़े हुए हैं, तो आप भी बाद में उन परिस्थितियों का निर्माण करने लग जाएँ। हाँ - कुछ संभावना तो है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: देखिए - साक्षरता तो लोगों में अब आ ही गई है। अब तो शिक्षित करने वाली बात है; जैसे - पहले प्रौढ़ शिक्षा अभियान लोगों को साक्षर करने को लेकर था। साक्षरता तो पहला कदम है ही, क्योंकि अक्षर ज्ञान होगा, तभी

आप पढ़ सकते हैं। इसके बाद, शिक्षा पर ज़्यादा 'फ़ोकस' किया जा सकता है। साक्षर और शिक्षित दोनों तरह के वर्ग भारत में बढ़ रहे हैं। यद्यपि, सारे लोग साक्षर नहीं हुए हैं, पर साक्षरता बड़ी है। यदि, भारत में धन की कमी पर बात करें, तो सच यही है कि शिक्षा पर पूरी तरह खर्च किया ही नहीं जाता। राजनेताओं का सारा ध्यान तो चुनाव सम्बन्धी योजनाएँ लाने पर ही रहता है। अगर, शिक्षा की व्यवस्था वह कर दें, तो उन्हें उतना वोट नहीं मिल पाएगा। स्कूलों की संख्या बढ़ाने से सरकार को वोट नहीं मिलेगा।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: यह सत्य है कि गरीबी एक मुख्य कारण है, जिसकी वजह से लोग शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/देखती हैं?

उत्तर: भारत में राजनीतिक सोच में बदलाव तो है, लेकिन कीचड़ वाली राजनीति ज़्यादा हो गई है। लोगों का मुख्य मुद्दों पर ध्यान नहीं रहता है। एक-दूसरे को नीचा दिखाने वाली राजनीति है। यहाँ लोगों को भ्रम में डालने वाली राजनीति है। भारत के समाज में परिवर्तन तो हो रहा है। भारत के समाज में बहुत कुछ बदला है। बहुत सी पुरातन परम्पराएँ लोगों ने छोड़ी हैं। बहुत से विचार छोड़े हैं। धर्म में, यदि तुलना की जाए, तो थोड़ा कम-ज़्यादा देखने को मिल सकता है, लेकिन परिवर्तन तो हुआ है।

आर्थिक परिस्थितियों की जहाँ तक बात है, तो लोगों की आय के स्रोत बढ़े हैं। राष्ट्रीय आय भी लगातार बढ़ रही है। लोगों को काम मिल रहा है। लोग धीरे-धीरे आर्थिक रूप से समृद्ध हो रहे हैं।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: शिक्षा प्राप्ति की तरफ़ लोग बढ़ रहे हैं। गरीब-से-गरीब आदमी चाहता है कि मेरा बच्चा पढ़े; पढ़-लिख कर अच्छी नौकरी पाए; और अपना जीवन संपन्न करे; जिस परिस्थिति में हम रह रहे हैं, उसमें भी उनका जीवन अच्छा हो। शिक्षा प्राप्ति के प्रति लोगों में ललक है। सभी वर्गों के लोगों का शिक्षा प्राप्ति के प्रति रुझान बढ़ रहा है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: निश्चित रूप से जो ज़्यादा पढ़ लेता है, उसे अच्छी नौकरी मिल जाती है, तो वर्ग में विभाजन तो हो ही जाता है। 'प्राइवेट' और सरकारी स्कूल भी वर्गीकरण को बढ़ावा दे रहे हैं। यदि, आप आर्थिक रूप से सशक्त हैं, तो लोग अपने बच्चों को अच्छे 'प्राइवेट' स्कूल में भेजते हैं या 'लो कैटेगरी' के 'प्राइवेट' स्कूल में भेजते हैं या अंत में सरकारी स्कूल में भेजते हैं।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: जो बच्चे विद्यालय आ रहे हैं, उन्हें साक्षर तो कह सकते हैं, लेकिन शिक्षित नहीं; जैसे - भारत सरकार सफ़ाई अभियान के बारे में बात कर रही है, पर अगर आप स्कूल या 'डिग्री कॉलेज' में जाएँ, तो हर जगह गंदगी मिल जाती है। इन जगहों से ज़्यादा शिक्षित लोग आपको और कहाँ मिलेंगे? शिक्षा का अब शिक्षित होने से कोई सम्बन्ध नज़र नहीं आ रहा। लोग गंदगी फैला रहे हैं। कई 'ईव टीज़िंग' कर रहे हैं; भेदभाव कर रहे हैं। हमें लोगों को शिक्षित करने के लिए और अधिक प्रयास करने होंगे। फ्रेरे के विचार इस तरह की परिस्थितियों को बदलने में सहायक हो सकते हैं।

16) प्रश्न: फ़्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: हमारे यहाँ तो मुख्य उद्देश्य यह रह गया है कि परीक्षा को पास करना है; और अच्छे 'नंबर' लाना है। हम अपनी विधियों को ऐसा नहीं बना पाए कि हम बच्चों में जिज्ञासा जगा पाएँ; उनके अंदर और जानने की ललक दे सकें।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: आर्थिक कारण भी इसके लिए ज़िम्मेदार हैं; और गरीबी भी एक कारण है। अभी भी गरीब वर्ग को यह लगता है कि हम शिक्षा पाकर क्या करेंगे? जब, पढ़ने-लिखने के बाद यही काम करना है, तो पढ़ने-लिखने का क्या फ़ायदा? उनकी अज्ञानता व अनदेखी का भाव भी एक कारण है।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: इतने सालों के बाद भी भारत में 'समान शिक्षा प्रणाली' लागू नहीं हो सकी। समाज ने अभी तक इन बातों को स्वीकार नहीं किया है। लोगों को लगता है कि मैं अपने बच्चे की शिक्षा के लिए खर्च कर सकता हूँ, तो मैं अपने बच्चे के लिए क्यों 'कंप्रोमाइज़' करूँ?; जैसे – जाति, धर्म या अर्थ के आधार पर क्यों 'कंप्रोमाइज़' करूँ? अगर, मैं 'पे' कर सकता हूँ, तो मैं अपने बच्चे को अच्छे स्कूल में पढ़ा लूँगा, पर इन लोगों के बच्चों के साथ नहीं, अन्यथा वे उनके बच्चों की आदतें सीख लेंगे या उन्हें लगता है कि उनके

बच्चे बिगड़ जाएँगे। दूसरी तरफ़, गरीब वर्ग के अभिभावकों को भी यह लग सकता है कि यदि, उनके बच्चों के विद्यालय में कोई बड़े परिवार का बच्चा आ गया; और वह बहुत पैसे खर्च कर रहा है, तो उसे देखकर उनके बच्चे भी बिगड़ जाएँगे। अब, यदि दोनों वर्ग के लोगों को लगता है कि दोनों के बच्चे एक-दूसरे को बिगाड़ रहे हैं, तो 'समान शिक्षा व्यवस्था' और 'पड़ोसी विद्यालय व्यवस्था' हमारे समाज में लागू नहीं हो पाएगी। फ़्रेरे के विचारों के ज़रिए इस स्थिति से निपटा जा सकता है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: हमारे यहाँ शिक्षक बनने के लिए आपको लम्बे समय तक पढ़ना पड़ता है। 'क्लर्क' की नौकरी तो आप 'प्लस टू' के बाद भी पा सकते हैं, लेकिन अगर आप को शिक्षक होना है, तो पहले आपको पीजी करना पड़ेगा। उसके बाद, 2 साल और लगाने होंगे; 2 साल का बी.एड., यानि 4 साल 'एक्स्ट्रा' पढ़ना होगा। वर्तमान समय में दो-तीन साल से 'टीईटी एग्ज़ाम' आ गया है। 'टीचर' बनने के लिए आपको 'एंट्रेंस एग्ज़ाम' देना होगा, तो आपको छह-सात साल 'एक्स्ट्रा' खर्च करने हैं। तब, आप शिक्षक बनने की राह पर आ सकते हो, पर अगर आप 6-7 साल पहले ही नौकरी पर लग जाते, तो 6-7 साल की 'अर्निंग' हो जाती; प्रमोशन की भी संभावना है। वहाँ पदोन्नति क्रम लम्बा है, जबकि यहाँ जीवन भर आप शिक्षक ही रहेंगे। परिणाम थोड़ा-बहुत बदल सकता है; जैसे – टीजीटी आगे चलकर पीजीटी हो सकता है; डिग्री कॉलेज 'में असिस्टेंट प्रोफेसर' हो सकते हैं, लेकिन शिक्षक तो शिक्षक ही रहेगा। उसके कामों में कोई खास फ़र्क नहीं पड़ेगा। 'प्राइवेट' संस्थानों में लाभ को ध्यान में रखते हुए 'नॉन अटेंडिंग कल्चर' भी बढ़ा है, क्योंकि बिना लाभ के संस्थान चलाने मुश्किल हैं।

फ़्रेरे की दृष्टि से इसका समाधान यह हो सकता है कि सरकार सारे संस्थान अपने हाथ में ले ले। इसके अलावा, विद्यार्थियों के लिए

'बायोमैट्रिक सिस्टम' भी होना चाहिए। उसी के आधार पर उन्हें 'एडमिट कार्ड' मिलना चाहिए, पर विडंबना यह है कि हम चाहते हैं कि हमें नौकरी तो मिल जाए, लेकिन उसके लिए जो 'स्किल' चाहिए, वह हमें बिना पढ़े ही मिल जाए; और जब हम नौकरी करें, तो हमें पूरी 'सैलरी' मिले। यह सभी बातें एक साथ नहीं चल सकतीं।

सहायक आचार्य डॉ. ऋषभ कुमार मिश्र का साक्षात्कार

6) साक्षात्कारदाता: डॉ. ऋषभ कुमार मिश्र
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: देखिये - मैं इसे ऐसे देखता हूँ, जैसी मेरी फ़्रेरे के बारे में समझ है; वे ईसाई पादरी थे। वे ब्राज़ील में सारा काम कर रहे थे। वहाँ उपनिवेशी परिस्थितियाँ थीं। वे सामाजिक, आर्थिक, व राजनीतिक इन तीनों परिस्थितियों का मिला-जुला रूप देख रहे थे। वे इनमें शोषण का सम्बन्ध देख रहे थे। शिक्षा को वे औपनिवेशिक मानसिकता के संदर्भ में देख रहे थे। इसकी चर्चा उन्होंने 'उत्पीड़ितों के शिक्षाशास्त्र' में भी की है। उन्होंने देखा कि सारे सम्बन्ध उत्पीड़ितों के खिलाफ़ हैं; और उत्पीड़कों के पक्ष में हैं। असल में, उन्होंने शिक्षा को सामाजिक, राजनीतिक, और आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में ही देखा।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन शोषितों की मुक्ति की तरफ़ ध्यान खींचता है। वे चेतना को मुक्त करने की बात करते हैं। उस पर ईसाई-दर्शन की छाप भी दिखती है, जब वे 'उम्मीदों का शिक्षाशास्त्र लिखते हैं। वे समय के साथ-साथ आध्यात्मिक प्रयोग भी कर रहे थे। वे 'चेतना के उन्मुक्तिकरण' को सामाजिक रूपान्तरण से जोड़ते हैं। तो, इन सभी को हम शिक्षा के उद्देश्यों के रूप में देख सकते हैं।

जहाँ तक इन्हें प्राप्त करने की पद्धति का प्रश्न है, तो फ़्रेरे अपनी चर्चाओं में 'संवाद' या समस्या उठाऊ पद्धति की बात करते ही हैं। इसके ज़रिए चीज़ों को उनके संदर्भों में समझा जा सकता है। हमें व्यक्तियों के अंदर एक समझ पैदा करनी होगी; चर्चा-परिचर्चा हो; प्रश्नोत्तर हों। इसमें शिक्षक की बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। कथनी और करनी में फ़र्क नहीं होना चाहिए।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: फ़्रेरे की प्रांसगिकता है। विद्यालयी स्तर पर आलोचनात्मक बनाने में मुझे फ़्रेरे बहुत उपयोगी नज़र आते हैं। आज भी भारत में आज़ादी के इतने सालों के बाद उत्पीड़क-उत्पीड़ित सम्बन्ध नज़र आते हैं। विद्यालयों में शिक्षक 'डोमिनेंट' रूप में नज़र आता है।

इसलिए, मैं अपनी कक्षाओं में बच्चों को न्यौता देता हूँ कि वे अपने अनुभव 'शेयर' करें; प्रश्न पूछें। इन सभी में मुझे फ़्रेरे बड़े प्रासंगिक नज़र आते हैं। शिक्षक फ़्रेरे के विचारों को समझकर कक्षाओं में बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन कर सकते हैं। बच्चों को तनाव से मुक्त करने में, उन्हें चिंतन की ओर प्रवृत्त करने में, मुझे फ़्रेरे बहुत प्रासंगिक नज़र आते हैं।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिये - पूँजीवाद में निजीकरण का पहला उद्देश्य लाभ कमाना है। अब शिक्षा का बाज़ारी 'मॉडल' प्रस्तुत किया जाता है। स्कूल में क्या 'इंडिकेटर' दिखते हैं? - कितने 'मार्क्स' आए?, एसी 'बिल्डिंग' है?, 'हॉर्स राइडिंग' है? ये सारे 'इंडिकेटर' पूँजीवादी है। 'पेरंट्स' सोचते हैं कि उनका बच्चा बड़े स्कूल में जाएगा, पर शिक्षकों का शोषण शुरू हो जाता है। कैसे? - उन पर काम का बोझ बढ़ जाता है। उन्हें पूरी 'सेलरी' नहीं दी जाती। बच्चों

पर लगातार सीखने का दबाब बना रहता है। पूँजीवाद और नव-उदारवाद ने शिक्षा को पूरी तरह जकड़ रखा है।

सभी, किसी तरह अपने बच्चों को 'ब्रांडिड' शिक्षा दिलाना चाहते हैं। उनके बच्चे 'इंग्लिश मीडियम स्कूल' में पढ़ें। वे सामाजिक सम्बन्धों का ध्यान भले न रखें, पर किसी तरह से आईआईटी कर जाएँ। अब हालत यह है कि अगर, आपके बच्चों को यहाँ से सामाजिक रूप से ऊपर उठना है, तो उनको अपनी जड़ों को छोड़ना पड़ेगा। इस जड़ को छोड़कर वे कहाँ जाएँगे, इसका उन्हें कुछ अता-पता नहीं है।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: हमारे यहाँ एक व्यक्ति है, जिनका जीवन भर 'प्राइवेट इन्स्टीट्यूशन' में उत्पीड़न होता रहा। मैंने उनकी पुरानी तस्वीरें देखी हैं, जिसमें वे काफ़ी दबे-कुचले लग रहे हैं। अब उन्हें मौका मिला है, तो उन्होंने 'प्राइवेट माइंड सेटअप' के तहत खुद भी दूसरों को परेशान करना शुरू कर दिया है; जैसे - सभी को कुछ-कुछ लिखकर परेशान करना, बारी-बारी से सभी को तंग करना, सभी को आपस में लड़ाते रहना, अपना स्वार्थ सिद्ध करते रहना, बिना श्रम किए लाभ लेते रहना। अब वे भी उत्पीड़ित से उत्पीड़क बन गए हैं। होना तो यह चाहिए था कि वे ऐसा माहौल बनाते, जिसमें किसी का भी उत्पीड़न न हो।

विद्यालयों में भी उत्पीड़न का मामला बहुत अचेतन स्तर पर काम कर रहा है। शिक्षक कभी-न-कभी उत्पीड़ित है, तो कभी उत्पीड़क। 'प्रिंसिपल' मैनेजमेंट के हाथों उत्पीड़ित है; शिक्षक 'प्रिंसिपल' से; और बच्चे शिक्षकों से। अनुशासन के नाम पर यह उत्पीड़न हो रहा है। बच्चे अपने पिता का नाम लेकर दूसरों पर धौंस जमा रहे हैं। मुझे तो भारत में सभी जगह उत्पीड़क-उत्पीड़ित सम्बन्ध नज़र आता है; इसे सभी स्थानों पर देखा और महसूस किया जा सकता है। यह सम्बन्ध तो सभी जगह है; बस, इसका स्वरूप बदलता रहता है।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: देखिए - हम कैसे पहुँच बनवाना चाहते हैं? उनको बुनयादी लिखना, पड़ना, और गणित आ जाये; और हम उसको 'सर्टिफाइड' कर दें; और वे साक्षरता की प्रक्रिया में आ जाएँ। लेकिन, जिनके जीवन में दो-जून की रोटी कमाने की समस्या है, वे अपने बच्चे को स्कूल क्यों भेजें? प्रवासी मज़दूर पहले अपने बच्चे को बचा ले या पढ़ा ले? फिर, पढ़ने के बाद भी नौकरी नहीं मिल रही है। इसी लिए, बच्चे बीच में ही स्कूल भी छोड़ रहे हैं। इसका उत्तर 'राइट टू एजुकेशन' से नहीं दे सकते। शिक्षा को मुफ़्त करके आपने उनके शिक्षा के बोझ को तो कम कर दिया, पर बाकी के बोझ का क्या? अब इसके समाधान में फ्रेरे का दर्शन सहायता करने के बजाय उल्टा भी कर सकता है। ऐसा न हो कि ऐसे क्रांतिकारी पैदा कर दे, जो हथियार उठा लें। अगर, आप स्कूल की बनी-बनाई 'साइकल' में परिवर्तन करना चाहते हैं, तो मैं उतना आशान्वित नहीं हूँ। आपको उन बच्चो के लिए, जो स्कूली शिक्षा से बाहर हैं, ऐसे शाम के विद्यालय खोलने होंगे, जिन्हें स्कूल के बंधे-बंधाए 'करीकुलम', समय या नियमों की आवश्यकता न हो।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: इसको व्यवस्थित करने का सरकारी तरीका तो काम करने वाला, है नहीं। अगर, शिक्षक यह सोचता है कि मैं सत्यनिष्ठ हूँ; बच्चा ही पढ़ना नहीं चाहता या स्कूल में शिक्षक समय पर नहीं आ रहा, तो इससे बात बनने वाली नहीं है। सारा दोष शिक्षकों का नहीं है; सारी व्यवस्था में ही यह बात फैली हुई है। बच्चों को वजीफ़ा देने के बारे में भी सोचना होगा, ताकि वे लंबे

समय तक शिक्षा में रहें। मेरे पास इसका कोई निर्धारित 'एक्शन प्लान' नहीं है, पर हमें गंभीरता से विचार तो करना ही होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: सच्चाई से प्रयास करके हमें डर से बाहर आना होगा। शिक्षकों को इस डर से बाहर आना होगा कि यदि, मैंने उसे सिखा दिया, तो वह भी ज्ञान में मेरे बराबर हो जाएगा। बच्चों में इस तरह के डर को दूर करना होगा कि उनके साथ जातिगत शोषण नहीं किया जाएगा। शिक्षा व्यवस्थापकों में प्रक्रिया के यांत्रिक बन जाने के कारण किसी तरह का डर नहीं है। नया स्कूल खोलने की प्रक्रिया का यंत्रीकरण हो चुका है। किसी भी व्यक्ति को यह काम दिया जाता है, तो वह बदलाव करने की बजाय अपनी स्थिति सुरक्षित करने में लग जाता है। इसके अलावा, निजी विद्यालय तो बदलाव की बजाय केवल लाभ कमाने के उद्देश्य से काम करते हैं। वे सामाजिक मुद्दों से जुड़े हुए नहीं हैं। इसी तरह, आज का छात्र आलोचनात्मक होने के बजाय सत्ता के साथ, शिक्षक के साथ मधुर सम्बन्ध बनाने में यकीन रखने लगा है। विद्यालय में तो छात्र को पता ही नहीं चलता कि उसके साथ गलत हो रहा है। इसलिए वह व्यवस्था पर सवाल ही नहीं उठाता। उसके माता-पिता भी उसके हित-अहित को समझ नहीं पा रहे हैं।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: यह आपने सबसे महत्त्वपूर्ण बात कही। यही एक डर है, जिसके कारण कुछ हो नहीं पा रहा है। हमारा सबसे पहला ध्येय - अपने आप को सुरक्षित

कर लेना होता है। फिर, हम अपने जानने वालों को सुरक्षित करने लगते हैं। फिर, हम कहीं विध्वंस नहीं चाहते। हम चाहते हैं कि हमें मानने वाले मतान्ध न हो जाएँ। मतान्ध होने पर आपको दुष्परिणाम झेलने पड़ेंगे। सभी सुरक्षित खेल खेलना चाहते हैं। सिद्धांत के स्तर पर हमें सब पता है, पर 'एक्शन' के स्तर पर चाहते हैं कि कहीं कोई अप्रिय स्थिति पैदा न हो। इसलिए, बदलाव नहीं हो पा रहा है। हमें बदलाव के लिए इस पर गहराई से सोच-विचार करना होगा।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: ज़्यादा साक्षर हो रहे हैं, क्योंकि हमारा पूरा 'सिस्टम' साक्षर बनाने का है। आप 'मिनिमम लेवल लर्निंग' की बात करते हैं; सोच के स्तर पर बदलाव की बात ही नहीं करते। शिक्षित व्यक्ति तो वह होगा, जो उचित-अनुचित में भेद कर पाता हो, जो नैतिक स्तर पर निर्णय लेता हो, दूसरों का परिप्रेक्ष्य भी स्वीकार कर पाता हो। जहाँ तक पैसे की कमी की बात है, तो यह कारण हो सकता है, लेकिन बहुत कारणों में से यह आखिरी कारण होगा। स्कूल खुल गए; और फिर शिक्षक को आपने चुनाव ड्यूटी पर भेज दिया। इसमें पैसे की कमी की क्या भूमिका है? आपने बच्चे को 'स्कोलरशिप' दे दी, लेकिन यह सुनिश्चित नहीं कर पा रहे कि स्कूल में पढ़ाई हो। 'मिड-डे-मील' बन रहा है, लेकिन हमारे रिश्तेदारों के लिए ज़्यादा बने। हम यथास्थिति में ही आनंद लेना चाह रहे हैं। ये सब कुछ शोषितों के लिए नहीं है।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: देखिए - कुपोषण और गरीबी तो सबसे बड़ी बाधा है। मैं पिछले साल 'वैकल्पिक विद्यालय' के सम्बन्ध में एक 'टूर' लेकर दक्षिण भारत गया था।

वहाँ एक जगह आदिवासी बच्चों को पढ़ाने के लिए जंगल में बस भेजी जाती थी। बच्चे पहले खूब पेट भरकर खाते थे; खाना भी ऐसा, जिसमें पोषक तत्त्वों का ध्यान रखा जाता था। खाना खाने के आधा घंटे के बाद, आराम करके पढ़ाई शुरू होती थी। इसी से पता चलता है कि शिक्षा का भूख और गरीबी से क्या सम्बन्ध है? सरकारी विद्यालयों में भी बच्चे इन समस्याओं से जूझ रहे हैं। बाकी, जिसके पास थोड़ा भी पैसा है, वह सरकारी स्कूल में नहीं जा रहा है।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

व 13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: भारत में, मैं स्थापित संस्कृति को इस रूप में देखता हूँ कि यह एक चालाकी भरा मामला है। बार-बार यह कहा जाता है कि हमें दबे-कुचलों के लिए काम करना है, लेकिन आप पूरी व्यवस्था में देख लीजिये – हम अपने लाभ के बाद बचे हुए को भले ही दूसरों को दे दें, उसके अलावा और कुछ नहीं दे रहे। यह संस्कृति सुदृढ़ हो चुकी है। हमने आदिवासियों के लिए 'आश्रम शालाएँ' खोलीं, लेकिन वे भी पुरानी विद्यालयी व्यवस्था की तरह उन्हीं समस्याओं से जूझ रही हैं। इसी तरह, यहाँ की राजनीतिक व्यवस्था में भी अस्मिता के नाम पर स्वार्थ की सिद्धि की जा रही है; जैसे - आपने दलितों की पार्टी, पिछड़ों की पार्टी या भ्रष्टाचार से मुक्त होने के लिए पार्टियाँ बनाई हैं; इनका मुख्य मकसद - सत्ता पर कब्जा जमाना है। इसी लिए, कई नेता दल बदलते रहते हैं। दलितों की सरकार असल में, साधन सम्पन्न दलितों की सरकार है। पिछड़ों की सरकार असल में, साधन सम्पन्न पिछड़ों की सरकार है। जो अन्याय के विरुद्ध आगे आता है, बाद में वही अन्याय करने लग जाता है।

इसके अलावा, भारत में सामाजिक सोच में तो थोड़ा बदलाव आया है; यह नहीं कहा जा सकता कि यथास्थिति है। पर, जो लोग बदलाव के लिए काम कर रहे हैं, यदि लोग उनका बदलाव में साथ न दें, तो उनके लिए यह दर्दभरा अनुभव बन जाता है। जहाँ तक भारत में आर्थिकी का प्रश्न है, तो यहाँ ऐसी स्थिति है कि जिसे मौका मिल गया – वह लाभ उठा लेगा, बाकी मौके की तलाश में रहेंगे। सब कुछ बाज़ार नियंत्रित है; और इसमें शिक्षा ही मौका दे रही है। 'डिग्री' प्राप्त करके व्यक्ति मध्यवर्ग तक पहुँच जाता है; मध्य वर्ग वाला वहीं बने रहने के लिए प्रयास करता है; और निम्न वर्ग वाला, मध्य वर्ग में पहुँचने की इच्छा करता है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: शिक्षा ने नए वर्ग पैदा किए हैं। भारत में शिक्षा की वजह से आर्थिक वर्ग पैदा हो रहे हैं। लोग शिक्षा प्राप्त कर वर्गीकृत हो रहे हैं। सरकारी स्कूल, 'लो' फीस वाले 'प्राइवेट' स्कूल, 'हाई' फीस वाले 'प्राइवेट' स्कूल किसके लिए हैं? ये पूरा ढाँचा वर्ग संरचना के समानांतर ही खड़ा हुआ है। शिक्षा इसमें अपनी यह भूमिका निभा रही है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: ऐसा नागरिक तैयार कर रही है, जिसे पता ही नहीं है कि वह नागरिक है या आर्थिक प्राणी? ज़्यादातर स्कूलों में हम बस नागरिक चेतना का नाम भर लेते हैं। हमारा उद्देश्य – बस, रोज़गार के लिए तैयार करना होता है। एक नागरिक के लिए जीविका ज़रूरी है, लेकिन उसके लिए विभिन्न सरोकारों के सम्बन्ध में हस्तक्षेप करना भी ज़रूरी है। हमारी शिक्षा क्या कहती है कि आपकी सामाजिक भागीदारी, आपकी उपलब्धि को प्रभावित करेगी। इसलिए, उसमें मत शामिल होइए। आपकी सांस्कृतिक भागीदारी केवल

सामान्य ज्ञान बढ़ाने के लिए है। फ्रेरे के विचारों से नागरिक चेतना को बढ़ाया जा सकता है। इससे ऐसे नागरिक समाज का निर्माण हो सकता है, जो विभिन्न सामाजिक सरोकारों से जुड़ा होगा।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: हाँ, बिल्कुल बाँध देते हैं। भारत के विद्यालयों की स्थिति को देखें, तो यह होता है कि अगर बच्चा किसी बात को जानने की जिज्ञासा रखे, तो उसे कहा जाता है कि पहले तुम यह परीक्षा पास कर लो, जिज्ञासा तो बाद में देखी जाएगी। हम जिज्ञासा 'ओरिएनटेड' होने की बजाय, बहुत ज़्यादा 'टेक्स्ट बुक ओरिएनटेड' होकर चलते हैं।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: देखिए - इस पर मैं पूर्व में भी कह चुका हूँ। शिक्षा की पहुँच के लिए पूर्व शर्तें पूरी होनी चाहिए - विद्यालय घर के पास हो, आप विद्यालय जाने के लिए मानसिक और शारीरिक रूप से तैयार हों, स्कूल में भी आपको आनंद आए। अगर, स्कूल में उसके लिए आनंद नहीं होगा, तो वह वहाँ रह नहीं पाएगा। बच्चे केवल वजीफ़े और 'मिड-डे-मील' के लिए ही स्कूल आना जारी नहीं रख सकते। शिक्षक को पूरी मेहनत के साथ पढ़ाना होगा; बच्चे को हतोत्साहित नहीं करना है।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: देखिए - हमारा 'माइंड सेटअप' ऐसा है कि हम सोचते हैं कि क्या मज़दूर का बच्चा हमारे बच्चे के साथ पढ़ेगा? 'पेरेंट्स' स्कूल का चुनाव कैसे करते हैं – वहाँ उसकी संगत ठीक नहीं रहेगी। हमारा ही 'माइंड सेटअप' समानतामूलक नहीं है। हमारा बच्चा ऐसा ज्ञान ले ले, जो दूसरे का बच्चा न ले ले। जहाँ तक फ्रेरे के विचारों से सहायता लेकर स्थिति में बदलाव का प्रश्न है, तो सहमत तो सभी हो जाते हैं, लेकिन नीतियों का क्रियान्वयन कहाँ हो पा रहा है? लोग पास की बजाय दूर के स्कूल में अपने बच्चे को इसलिए भेज रहे हैं, ताकि उनका बच्चा किसी भी शर्त पर आसपास के, औरों के बच्चों से अलग रहे।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: जैसी परिस्थितियाँ 'प्राइवेट' संस्थानों की हैं, वैसी ही सरकारी संस्थानों की भी हैं, पर बस एक फ़र्क है – यहाँ नौकरी का स्थायित्व है। अध्यापक को सत्ता के साथ खड़े होने का लोभ उत्पीड़क बना देता है। आप चाहें सरकारी में हों या निजी में, 'आलोचनात्मक शिक्षणशास्त्र' को अपनाने पर आपको संकट का सामना करना ही पड़ेगा। निजी संस्थान में जैसे ही आप अपनी आवाज़ उठाते हैं, वे आपको बाहर कर देते हैं। सरकारी संस्थान में ऐसा करने पर वे आपको हाशिये पर डाल देते हैं। मेरे क्षेत्र में आपके समर्पण का मूल्यांकन इस बात से होगा कि आप उन उत्पीड़कों का लाभ कमाने में कितना सहयोग कर सकते हैं। जहाँ तक संस्थानों में सुधार का सवाल है - यह होना चाहिए कि इनके सामने एक 'रोल मॉडल' हो, जो यह विश्वास पैदा करे कि अच्छे अध्यापक बन सकते हैं। बहुत से शिक्षक अच्छा काम कर रहे हैं, बस उनके काम को प्रदर्शित करने की आवश्यकता है। सरकार से इस बारे में ज़्यादा उम्मीद नहीं कर सकते।

सह-आचार्या डॉ. मनीषा मिनोचा का साक्षात्कार

7) साक्षात्कारदाता: डॉ. मनीषा मिनोचा
सह-आचार्या (सेवानिवृत्त), शिक्षा विभाग, प्रदीप मेमोरियल कोम्प्रिहेंसिव शिक्षा महाविद्यालय, दिल्ली

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: फ़्रेरे की जो उस समय की परिस्थितियाँ थीं; किसानों की ज़िंदगी पर जो असर था, असमानता थी; शहरी मजदूरों पर जो असर था, उन सभी का फ़्रेरे के शैक्षिक विचारों पर असर पड़ा था।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: विद्यार्थियों में ऐसी समझ पनपे कि वे चीज़ों को गहराई से समझें; और अपनी स्थिति को सुधारें। बच्चों में निर्माणात्मक विकास करने की योग्यता शिक्षा का एक बड़ा उद्देश्य होना चाहिए। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने की पद्धति हो सकती है – चर्चा, 'ब्रेन स्टोर्मिंग', गतिविधि आधारित अधिगम, इत्यादि।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: देखिए प्रासंगिक तो है, लेकिन भारत की मुख्य समस्या है – गरीबी, बेरोज़गारी। इसलिए, जब तक शिक्षा उन्हें जीविका कमाने की तरफ़ लेकर नहीं जाएगी, तो बहुत सारे बच्चे हैं, जो शिक्षा व्यवस्था में आना ही नहीं चाहते। 'वोकेशनल एजुकेशन' भी ऐसी हो, जिसका उपयोग करके वे आगे कुछ कमा सकें।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: पूँजीपति वर्ग तो आम लोगों को अपने नियंत्रण में रखना ही चाहता है। इसलिए, वे तो अपने बच्चों के लिए तथाकथित 'पब्लिक' स्कूलों की व्यवस्था करना ही चाहेंगे। उनकी सोच ही ऐसी बन जाती है। इसी लिए, पहले एक 'स्टैंडर्ड' भाषा का चयन किया जाता है। इसमें इंग्लिश भाषा का चयन किया गया है, जो हमारे यहाँ अधिकतर लोगों की मातृभाषा नहीं है। यह समाज में तुरंत एक 'गैप' बना देता है। अब, अगर ईडब्ल्यूएस कोटे में गरीब बच्चों को ले भी लिया जाए, तो यह इन बच्चों के लिए कहाँ सुविधाजनक होगा? क्या वे बाद में अधिक खर्चा कर पाएँगे?

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: आज तो हर क्षेत्र में उत्पीड़क वही हैं, जो उसे चला रहे हैं; और उत्पीड़क, वे हैं – शिक्षक, ऑफिस में क्लर्क। 'प्राइवेट' संस्थानों में शिक्षकों को वेतन के रूप में 9000 रूपए तक भी दिये जा रहे हैं! इन संस्थानों को चलाने वाले उत्पीड़क की भूमिका में हैं; और जो वहाँ काम कर रहे हैं, वे ज़्यादातर शोषित हैं। सरकारी संस्थान भी मुझे कोई बहुत अच्छे नहीं लगे। वहाँ 'जॉब' सुरक्षा है; वहाँ 'सूडो इंट्लेक्चुअलिज़्म' वाला माहौल - मुझे अच्छा नहीं लगा। वहाँ 'टीचर्स' के 'ग्रुप' बन जाते हैं; और बच्चा उसमें फँस जाता है। इस तरह से आप इन संस्थानों में भी उत्पीड़क-उत्पीड़ित वाला सम्बन्ध देख सकते हो।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: हाशिये के समूहों के बच्चे तभी शिक्षा में आ पाएँगे, जब 'करीकुलम' उनके लिए प्रासंगिक होगा। 'करीकुलम' में उनकी 'अरनिंग केपेसिटी' बढ़ाने

वाली बात होनी चाहिए। फ़ेरे के विचार इस दिशा में चिंतन करने के लिए बाध्य कर सकते हैं, पर हमें गाँधी जी के विचारों को भी देखना होगा।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: मुझे लगता है कि भारत की संस्कृति में कोई कमी नहीं है। हम काफ़ी जागरूक लोग थे। हमने संसार के ज्ञान में काफ़ी योगदान दिया है। हमारे 'कल्चर' में 'क्रिटिकल थिंकिंग' है, संवाद है, कर्म है; जैसे – कर्म किए जा और फल की चिंता न कर। हमारा 'कल्चर' सोचने-समझने का है।

अपवंचितों को मुख्य धारा में लाने के लिए सरकार काफ़ी प्रयास कर रही है – 'एजुकेशन फॉर आल', 'नेशनल लिटरेसी मिशन', 'प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण'। एनजीओ भी अपनी भूमिका निभा रहे हैं; जैसे लोक जुंबिश वाले।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: देखिए - वह डरेगा, जो 'कन्फ़्यूज्ड' होगा। 'कन्फ़्यूज्ड' व्यक्ति भेड़चाल में चलता है। माता-पता और विद्यार्थियों में, आजकल डर हटने लगा है। विद्यार्थी आजकल खूब प्रश्न पूछते हैं। वे केवल इस बात से डरते हैं कि कहीं हमारे नंबर न कट जाएँ। 'मेनेजमेंट' परिवर्तन से डरती है, जो लगातार हो रहा है; उसके पास पैसे की 'पावर' होती है। उन्हें पता होता है कि सामने वाला सही होने के बावजूद उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। नीति-निर्माताओं में कोई डर नहीं है; वे नीति निर्माण प्रक्रिया में बिना डर के लगे हुए हैं।

9) प्रश्न: फ़्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: देखो, 'डाइरेक्टली' तो कुछ होने वाला - है नहीं। परिवर्तन तो विद्यार्थियों की तरफ़ से आए, तो अच्छा है। अगर, किसी का शोषण हुआ है, तो वह तो आवाज़ उठाएगा ही; और अगर 'सिस्टम' वाकई ठीक से काम नहीं कर रहा है, तो उसमें धीरे-धीरे परिवर्तन लाएँ; अहिंसात्मक प्रयासों से। हर इंसान के कर्म और उसकी वाणी में काफ़ी ताकत है। हर इंसान बहुत कुछ कर सकता है। बस, पहले यह तय कर ले कि मैं सही रास्ते पर चलूँगा या चलूँगी। इसके लिए कुर्सी और पैसे का लालच छोड़ना पड़ेगा।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: साक्षर होना ज़रूरी है; और साक्षरता से आगे शिक्षा है। आज जैसी एजुकेशन हो रही है, तो उसे हम - शिक्षित करना भी नहीं कह सकते। शिक्षा, यानि व्यक्ति में से उसका सर्वश्रेष्ठ बाहर निकालना। शिक्षित लोगो में नैतिक मूल्यों की समझ न के बराबर है, तो क्या शिक्षित को सच में शिक्षित कहें? हमें इस बारे में सोचना होगा।

इसके अलावा, भारत में पैसे की कमी नहीं है। शिक्षा को प्राथमिकता नहीं दी गई। भारत में शिक्षा के लिए 'डोनेशन' का पैसा भी आया है। लोक जुंबिश से मैं भी जुड़ी हुई थी। स्वीडन ने लगभग 'शिक्षाकर्मी प्रोजेक्ट' का 90% तक पैसा दिया। लेकिन, केवल डोनेशन ही इसका समाधान नहीं है; हमें स्वयं भी पूरे मन से शिक्षा के लिए प्रयास करने होंगे।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: हाँ - यह है। उनका दिमाग उसी में है कि हमें अगले वक्त की रोटी मिलेगी या नहीं। पहनने के लिए कपड़ा नहीं है। इस हद तक गरीबी है कि फिर अपराध की तरफ़ मुड़ जाते हैं। माता-पिता भी अपनी सोच की वजह से स्कूल में अपने बच्चे को नहीं भेजते।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

व 13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: वर्चस्वशाली वर्ग ही इस स्थापित संस्कृति को अपने चमचों की सहायता से चला रहे हैं। ये चमचा वर्ग ही, असल में दोषी है। इस वर्ग के कोई मूल्य नहीं हैं। ये सारी सामाजिक, राजनीतिक, और आर्थिक व्यवस्था में फैला हुआ है। भारत में तो कहीं-कहीं आर्थिक विषमता शर्मिंदा करने तक के स्तर तक है। शिक्षा हमें अपने सहकर्मियों के साथ ठीक से व्यवहार करना तक नहीं सिखा रही है। शिक्षा के ज़रिए लोगों को संवेदनशील, मानववादी बनाना होगा; जैसा कि एनसीएफ़ 2005 मे लिखा है। दूसरों के प्रति असंवेदना भरी सोच अमीरों और गरीबों दोनों में है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: भारत में शिक्षा और राजनीति का सम्बन्ध शुरू से रहा है। 'स्टैंडर्ड' भाषा को आप इसी सम्बन्ध मे समझ सकते हो। साम्यवादी देश अपने

हिसाब से शिक्षा देगा; हम अपनी शिक्षा में लोकतंत्र के बारे में सिखाएँगे, क्योंकि हमारा देश लोकतांत्रिक है। भारत में अमीर और गरीब के बीच का 'गैप' बढ़ता ही चला जा रहा है। शिक्षा में तीन बातें हैं – 'प्राइवेट स्कूल', 'सरकारी स्कूल', और 'नो स्कूल'। भारत में अलग-अलग स्कूलों का खुलना भी बच्चों के बीच वर्गीकरण को बढ़ा रहा है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: शिक्षा व्यवस्था से जो युवा निकलकर आ रहे हैं - वे स्वार्थी हैं, पर जागरुक हैं। उनमें एक सोच है। उन्हें ये भी पता है कि भारत की इतनी जनसंख्या है, तो उनको आसानी से 'जॉब' नहीं मिलेंगी। उनके लिए संघर्ष है; प्रतियोगिताएँ हैं। इस स्थिति से निपटने में फ्रेरे के आलोचनात्मक चेतना सम्बन्धी विचार एक सीमा तक ही सहायता कर सकते हैं। संसाधन सीमित हैं; हमें अपनी जनसंख्या को नियंत्रित करना होगा।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: मैंने तो ऐसा नहीं देखा। शिक्षक-छात्र सम्बन्ध में ऐसा नहीं है; पर मेनेजमेंट-छात्र और मेनेजमेंट-शिक्षक संबंधों में ऐसा है। शिक्षक अपने छात्रों को बोलने और सोचने की स्वतंत्रता देते हैं। 'करीकुलम' में भी जिज्ञासा को बढ़ाने के लिए काफ़ी जगह है।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: इसे मैं, लड़कियो के संदर्भ में समझाती हूँ। स्कूल तो खुल रहे हैं, पर अगर घर में दूसरे छोटे बच्चे हैं, तो लड़की उन्हें संभालती है; घर में खाना बनाती है; और स्कूल नहीं आ पाती। उनकी शादी भी जल्दी कर दी जाती है।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: 'समान शिक्षा प्रणाली' तो अमीर लोग कभी होने ही नहीं देंगे। वे तो अपने बच्चों को, अपने 'अभिजात वर्ग' वाले स्कूलों में ही भेजेंगे। भारत में तो, जो जितना ही शिक्षित होता जाता है, वह अपने घर में काम करने वालों के लिए अलग कप रख देता है। ये मानसिकता पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आई है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: शिक्षक-शिक्षा वाले संस्थानों में विद्यार्थियों को ही सिद्धांत और व्यवहार में 'गैप' दिखता है। इन संस्थाओं में साल में जो ये एक-दो 'सुपरफीशल इंस्पेकशन' होती हैं, इससे कुछ ठीक नहीं होगा। 'टीचर एजुकेशन' की संस्थाएँ ऐसे लोगों को चलाने के लिए क्यों दी जा रही हैं, जो अपने 'टीचर्स' को 'स्टेटस' नहीं देते, 'सेलरी' नहीं देते। अगर, 'टीचर एजुकेशन' में यह हो रहा है, तो बाकी संस्थाओं से क्या उम्मीद रखें? हमें यहाँ पढ़ने आ रहे विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करना होगा। फ्रेरे की सहायता से उत्पीड़नकारी परिस्थितियों को समझकर आगे बढ़ा जा सकता है।

सह-आचार्य डॉ. अखा कैहरी माओ का साक्षात्कार

8) साक्षात्कारदाता: डॉ. अखा कैहरी माओ
सह-आचार्य, व्यवसायिक अध्ययन विद्यापीठ, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली
निदेशक, समान अवसर प्रकोष्ठ, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: यह सही है। कोई भी व्यक्ति जो सोचता है, उस पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता ही है। फ़्रेरे की बचपन की स्थितियाँ काफ़ी अच्छी नहीं थी। उनकी शुरुआती जीवन की परिस्थितियों का प्रभाव उनके सुधार सम्बन्धी विचारों पर पड़ा था; विशेषकर शिक्षा के ज़रिए सुधार पर।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है - लोगों को जागरूक करना; उन्हें जानकारी के प्रति जागरूक करना ही नहीं, बल्कि उनमें यह समझ पैदा करना कि वह अपने आसपास की राजनीतिक, आर्थिक, और सामाजिक परिस्थितियों को आलोचनात्मक रूप से समझ सकें; व उनका आलोचनात्मक विश्लेषण कर सकें। इसमें भी विधियाँ महत्त्व रखती हैं। विधियों के चयन से यह पता चलता है कि हमारी शिक्षा कहाँ तक पहुँचती है। विधियाँ अनुभव से आनी चाहिए। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि उसे वास्तविकता के साथ जोड़ा जाए; रोज़मर्रा की गतिविधियों के साथ जोड़ा जाए, ताकि बच्चे अपने अनुभव से सीख सकें। अनुभवों से सीखने पर, सीखा हुआ - स्थाई हो जाता है।

3) प्रश्न: फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन काफ़ी प्रासंगिक है। ब्राज़ील या चिली जैसे देशों की परिस्थितियाँ और हमारे देश की परिस्थितियों में बहुत भिन्नता नहीं है। हमारे समाज में भी वहाँ की तरह शोषक-शोषित वाली परिस्थितियाँ मौजूद हैं। हम अभी भी अपनी बहुसंख्यक आबादी को कई मायनों में शोषित मान सकते हैं। कुछ ही वर्ग और जातियाँ निर्णय लेने वालों की भूमिकाओं में हैं।

4) प्रश्न: फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: सरकार बहुत सारी ज़िम्मेदारी लेने से बच रही है; जैसे - शिक्षा और स्वास्थ्य, सरकार की सबसे प्रमुख ज़िम्मेदारियाँ होनी चाहिए। जिस तरह से निजीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है, निजीकरण की जो दखलअंदाजी सार्वजनिक क्षेत्र में बढ़ रही है, डीपीईपी के माध्यम से या निजी एनजीओ के ज़रिए दखल देने की अनुमति मिल रही है, यह सभी कुछ सरकार पर दबाव डालने की राजनीति हो रही है। सरकारें अपनी ज़िम्मेदारियों को निजी हाथों में दे रही हैं; और निजीकरण व पूँजीवादी सोच को पनपने का मौका दे रही हैं। शिक्षा में यह सब ठीक नहीं है।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: सरकारी व निजी स्तर पर अलग-अलग लोग उत्पीड़क व उत्पीड़ित हैं। सरकारी स्कूलों में विद्यार्थी सामाजिक व आर्थिक रूप से पिछड़े हुए हैं। उन्हें उत्पीड़ित कहा जा सकता है। उन्हें कहने का और निर्णय लेने का अधिकार नहीं है। सरकारी विद्यालयों में तो बहुत से शिक्षक भी शोषित हैं, कुछ मायनों में। सरकारी विद्यालयों में भी शिक्षकों की आवाज़ स्वतंत्र नहीं है। नीतियों व नियमों में उनकी आवाज़ नहीं सुनी जाती; वे भी शोषित हैं।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: राजनीतिक वर्ग की सत्यनिष्ठता सभी को शिक्षा देने के मामले में संदेह के घेरे में है। राजनीतिक वर्ग के साथ-साथ हमारा समाज भी जाति पदक्रमता में बंटा हुआ है। हमारा समाज जाति को लेकर बंटा हुआ है। यह सभी तक समान प्रकार की शिक्षा पहुँचाने के मार्ग में बाधा पैदा करता है। लाभ की सोच व पूँजीवादी सोच भी इस भेद को और अधिक बढ़ाती है, यानि जो भुगतान कर सकते हैं, केवल वही गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। अभी शिक्षा के सार्वभौमीकरण के अंतर्गत जो कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, उनमें बस खानापूर्ति करने के लिए बच्चे का नाम दर्ज़ कर लिया जाता है। लोग भी इन मामलों के प्रति ज्यादा गंभीर नहीं है। बस, आँकड़ों को संचित किया जा रहा है। समाज में व्याप्त हर स्तर पर फैला हुआ भ्रष्टाचार भी इस स्थिति को विकट बनाता है।

इस सम्बन्ध में फ्रेरे के विचारों का अभी तक हमने बहुत अच्छी तरह से प्रयोग नहीं किया है, जबकि उनके विचार बहुत बढ़िया हैं। हमारे यहाँ शिक्षाविदों ने भी उनके विचार पढ़े-समझे हैं, पर वे भी इनका अनुपालन नहीं कर पा रहे हैं। इन विचारों से हमारी आज की शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं के समाधान में काफ़ी सहायता मिल सकती है। यह इस बात पर भी निर्भर करेगा कि हम कितनी सत्यनिष्ठता से फ्रेरे के विचारों को व्यवहारिक धरातल पर लेकर आते हैं।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: एससी, एसटी, ओबीसी, और महिलाएँ, जो ग्रामीण या दूर-दराज़ के इलाकों में रहते हैं, वहाँ के लिए हमें प्रमापीकृत उपागम की बजाए भिन्न

उपागमों को अपनाने की आवश्यकता है। हमें स्थानीय क्षेत्रों की ज़रूरतों पर ध्यान देना होगा। हमें राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर एक बड़ी रूपरेखा अपनानी होगी, क्योंकि हमारे समाज में विभिन्नता विद्यमान है। शिक्षा के मामले में जो दिल्ली की जरूरतें हैं, आवश्यक नहीं है कि छत्तीसगढ़ या जम्मू और कश्मीर जैसे दूर-दराज़ के इलाकों की ज़रूरतें भी वैसी ही हों।

ऐसी कई जगहें हैं, जहाँ सरकार को ज़्यादा प्रयास करने होंगे। हर क्षेत्र के शिक्षकों और विद्यार्थियों की आवश्यकताएँ अलग-अलग हैं। हमें एससी, एसटी, ओबीसी, महिलाओं, और ग्रामीण लोगों पर विशेष ध्यान देना होगा, ताकि हम उन्हें एक निश्चित स्तर पर ला सकें। केंद्र और राज्य को स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए मिलकर काम करना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: शिक्षा में बहुत से लोग अपनी गर्दन ऊँची करके, परिवर्तन को देखना नहीं चाहते हैं। अब शिक्षा को व्यवस्थित करने के चक्कर में शिक्षक के पास ज्यादा स्वायत्तता नहीं रह गई है। शिक्षकों की स्वायत्तता, बस एक किताबी बात बनकर रह गई है। शिक्षक अपने अधिकारों को प्रयोग नहीं कर पाता है। जहाँ तक बच्चों का प्रश्न है, तो शारीरिक दण्ड को हटाने वाले सुधारों की वजह से बच्चों में अब शिक्षकों का इतना डर नहीं रह गया है; बच्चे भी अब बोलने लगे हैं।

शिक्षकों में सरकारों के बदलने की वजह से अपनी उपलब्धि को लेकर डर आ रहा है। अस्थाई शिक्षकों में तो बहुत अधिक डर है। दिल्ली के कई स्कूलों में तो 'वैकेंसी' भरी ही नहीं गई है। वे 'गेस्ट टीचर' से अपना काम चला रहे हैं। 'गेस्ट टीचर' पर तो काफ़ी दबाव होता है। वे डर के माहौल में काम करते हैं। वे नवाचारों और नवीन शिक्षाशास्त्र पर काम करना भी चाहें, तो उन्हें इतनी आज़ादी नहीं है।

जहाँ तक अभिभावकों के डर की बात है, तो हम एक पूँजीवादी समाज में रह रहे हैं। यहाँ बहुत प्रतिस्पर्धा है। अभिभावकों के दिमाग में 'प्रतिस्पर्धी डर' हमेशा बना रहता है। ज़्यादातर विद्यार्थी इस बात से आशंकित रहते हैं कि क्या वह ऐसे प्रतिस्पर्धी विश्व में सफल हो पाएँगे अथवा नहीं? स्कूल के बाद किसी भी विद्यार्थी को, मिलने वाले अवसरों को लेकर विश्वास नहीं है। बहुत से अभिभावक स्वयं को असहाय महसूस करते हैं।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: यह देखना होगा कि हम में से कितने व्यक्ति "आलोचनात्मक चेतना जागृति" या "विवेकीकरण" को समझते हैं अथवा नहीं। काफ़ी लोग यह सोचते हैं कि हम जो बोल रहे हैं - वही सही है। कई लोग दूसरों को सुनना ही नहीं चाहते। वे उन्हें बिना सुने ही नकार देते हैं। यह बहुत खतरनाक स्थिति है। यह शिक्षा व्यवस्था और लोकतंत्र के लिए एक खतरनाक स्थिति होगी कि हम केवल अपने विचारों को ही सही मानें। यह ज़रूरी नहीं है कि हमने चीजों को समझा है या हमने पढ़ा है, तो केवल हमारे विचार ही सही हैं। बाकी विचारों व आवाज़ों को भी स्वीकार करना ज़रूरी है। विचारों को चर्चा-परिचर्चा के बाद स्वीकारना या नकारना चाहिए।

वर्तमान युग में हम बहुत ही खतरनाक परिस्थितियों में जी रहे हैं। एक शिक्षक के तौर पर हमें आलोचना के लिए तैयार रहना होगा। विद्यार्थियों के जो प्रश्न और समस्याएँ हैं, उन्हें नकारना नहीं चाहिए। यह नहीं समझना चाहिए कि विद्यार्थी कुछ नहीं जानते या उनके प्रश्न अथवा विचार बेकार हैं। वे जो भी समस्याएँ ला रहे हैं, हमें उन्हें पर्याप्त महत्त्व देना चाहिए, क्योंकि वे अपनी समस्याएँ अपनी परिस्थितियों और अनुभवों के साथ लेकर आते हैं, जिन्हें सुना जाना बहुत ज़रूरी है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि सरकारें केवल साक्षरता की तरफ़ बढ़ रही हैं। उनका सरोकार केवल साक्षरता पर है न कि उस शिक्षा पर, जो शिक्षाविद या शिक्षक सोचा करते थे। आज की सरकारों का 'फ़ोकस' पुराने 'थ्री आर्स' पर ही है। हम सच में यह जानना नहीं चाहते कि विद्यार्थियों ने क्या सीख लिया है। हमारे मूल्य-आंकलन के 'पैरामीटर' परीक्षाओं में अलग होते हैं। बच्चों ने क्या सीखा है?, कहाँ तक सीखा है?, हम इस बात का मूल्य-आंकलन नहीं करते। हम केवल पाठ्यक्रम को ही 'टेस्ट' करते हैं।

अभी भी वर्तमान परिस्थितियों की आलोचना हो रही है। कई अध्ययनों के निष्कर्षों से पता चलता है कि पाँचवी कक्षा के बच्चे दूसरी कक्षा की किताब भी ठीक से नहीं पढ़ पाते या दूसरी कक्षा के गणित के सवाल भी हल नहीं कर पाते। यह 'टेस्ट' नहीं किया जाता कि साक्षरता के अलावा जीवन कौशलों को लेकर बच्चों ने क्या-क्या सीखा है? शिक्षा का मतलब केवल साक्षरता नहीं है, बल्कि जीवन कौशल सीखाना भी शिक्षा है। जीवन कौशलों की शिक्षा से बच्चे अपनी ज़िंदगी में समस्याओं का सामना कर सकते हैं।

इस सम्बन्ध में जहाँ तक पैसे की कमी का सवाल है, तो मेरा मानना है कि यह सोच गलत है कि भारत में पैसा नहीं है। यदि, हम सचमुच में शिक्षा देना चाहते हैं, तो हमारी प्रमुख प्राथमिकता शिक्षा होनी चाहिए। बहुत सारी चीजों में पैसा व्यर्थ किया जा रहा है। हम बहुत से क्षेत्रों में पैसों की कटौती कर उसे शिक्षा में ला सकते हैं। शिक्षा में पैसे की कमी है – ऐसा नहीं है। हमें प्रयास करने की इच्छाशक्ति अपने में जगानी होगी। पैसे को लेकर सरकारों को अपनी प्राथमिकताएँ ठीक से तय करनी होंगी।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

व 12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/देखती हैं?

उत्तर: देखिए - यह सच है। हमारे यहाँ बहुत से लोग गरीबी से जूझ रहे हैं। यहाँ भूख है, कुपोषण है, परन्तु ये वास्तविक समस्याओं के रूप में नहीं देखे जा रहे हैं। हम गरीबी व कुपोषण से जूझ रहे हैं। वैसे, दो-तीन दशकों में इस स्थिति में काफ़ी सुधार हुआ है। 'मिड-डे-मील' योजना भी सरकार की ओर से चलाई जा रही है। हम सभी को उसकी सच्चाई या गुणवत्ता का पता है।

मेरा ऐसा विचार है कि हम चाहें, तो गरीब-से-गरीब को भी शिक्षा दे सकते हैं। हमें नीतियाँ ऐसी बनानी होंगी कि वे लोग हम तक पहुँचे, इससे पहले ही हम उन तक पहुँच जाएँ। लेकिन, हमारे लोगों में समाज के दूसरे लोगों के बारे में सोचना, थोड़ा कम हो गया है। वे बहुत स्वार्थी हो गए हैं। व्यक्तिगत और सामूहिक तौर पर हम अभी भी भूख, गरीबी, और कुपोषण के बारे में यह नहीं सोचते कि इसे दूर करना हमारी ज़िम्मेदारी है।

कुछ लोगों को छोड़कर अभी भी अधिकतर लोग यह नहीं सोचते कि हम अमीर हैं, क्योंकि बहुत से लोग गरीब हैं; हमारे पास भोजन की पहुँच है, क्योंकि अभी भी बहुत से लोग भूख व गरीबी में जी रहे हैं। हम में सामूहिक ज़िम्मेदारी की भावना कम हो गई है।

राष्ट्रवाद का मतलब अब बस एक नारा बनकर रह गया है। कर्त्तव्य व ज़िम्मेदारी का भाव युवा पीढ़ी में कम हुआ है। युवा पीढ़ी में ऐसा हो जाना - एक चिंता का विषय है, जिसे दूर करने के लिए शिक्षा की ओर ही देखना होगा।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: मेरा मानना है कि शिक्षा में जो होना चाहिए, वह नहीं हो रहा है। इस पूँजीवादी समाज में लोगों में इस सोच का अभाव है कि प्रगतिशील समाज के तौर पर हमें साथ चलना चाहिए। हम केवल बोलने के लिए ही बोलते हैं। स्कूलों की कक्षाओं में भी ऐसा ही है। शिक्षा में बहुत प्रतिस्पर्धा है। सभी परीक्षाओं में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया जा रहा है। हम यह नहीं देख पा रहे हैं कि वर्तमान की परीक्षाएँ बच्चों की भावी ज़िंदगी में क्या सहायता करेंगी? हम सभी में, सभी को साथ लेकर चलने का भाव प्रचारित नहीं कर पा रहे हैं। स्कूलों में सीसीई का विचार बहुत अच्छा था, परन्तु उसे भी खराब तरीके से क्रियान्वित किया जाता रहा। करना तो यह चाहिए था कि हम हर बच्चे के हुनर की पहचान करते; और उसे आगे बढ़ाते, पर ऐसा हो नहीं रहा। हम केवल विषय सम्बन्धी जानकारियों की प्राप्ति को ही बढ़ावा दे रहे हैं; शिक्षा में सामुदायिक भावना को आगे नहीं बढ़ा रहे। इस सम्बन्ध में एक शिक्षक के रूप में हमें आलोचनात्मक रूप से जागृत होना होगा जैसा कि फ्रेरे कहा करते थे।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: 'प्राइवेट स्कूल' में कौन जाता है?; उसमें भी किस तरह के प्राइवेट स्कूल में। शहरों में तो कई तरह के अंतरराष्ट्रीय स्कूल हैं। हम इस विचार से पीछे हट चुके हैं कि समान 'स्कूलिंग' होनी चाहिए, ताकि सभी को समान प्रकार की शिक्षा मिल सके। प्राचीन समय से ही ऐसा होता रहा है कि शिक्षा में एक विशेष जाति को ही 'प्रमोट' किया जाता रहा है; और अन्य को शिक्षा से वंचित रखा जाता था। इस पूँजीवादी समाज में ऐसा कहा जाता है कि हम सभी को शिक्षा दे रहे हैं, पर हमें यह देखना होगा कि हम उन लोगों को, जो

आर्थिक व सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग से आते हैं, कैसी शिक्षा दे रहे हैं?; और जिन लोगों के पास पैसा है, उनको कैसी शिक्षा मिल रही है? इसमें बहुत बड़ी राजनीति है। सरकारी विद्यालयों में भी तथाकथित 'आदर्श विद्यालय' बनाए जा रहे हैं। यह एक प्रकार का विभेदीकरण है कि आप कुछ बच्चों को सुविधाएं दे रहे हैं; और बाकी बच्चों को वैसे ही छोड़ रहे हैं। इस तरह की राजनीति को शिक्षा में देखा जा सकता है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: हम लोगों को अच्छा नागरिक बनने की शिक्षा नहीं दे रहे। हम केवल प्रतिस्पर्धी शिक्षा दे रहे हैं। हम ज़िम्मेदार नागरिक तैयार नहीं कर रहे। हमें तो केवल प्रतिस्पर्धी बनने के लिए ही 'प्रमोट' किया जा रहा है। सभी के लिए नौकरियां नहीं हैं; और सभी व्यक्ति डॉक्टर, इंजीनियर नहीं बन सकते। इसलिए, हमें सोचना होगा कि उनके लिए क्या विकल्प हैं? हम केवल 'टॉप क्रीमी लेयर' विद्यार्थियों को ही आगे बढ़ा रहे हैं। हम, जब तक सब के बारे में नहीं सोचेंगे, तब तक हम ज़िम्मेदार नागरिक तैयार नहीं कर सकते। इस सम्बन्ध में यदि, फ्रेरे के "आलोचनात्मक चेतना" या "विवेकीकरण" सम्बन्धी विचारों को लिया जाए, तो उससे हमें यह सहायता मिल सकती है कि हम सभी के बारे में सोचने लगेंगे, परन्तु ऐसा नहीं किया जा रहा।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: यहाँ पर भी ऐसी ही स्थिति है। शिक्षक भी कई तरह के दबाव झेल रहे हैं। उन्हें यह स्वायत्तता प्राप्त नहीं है कि वे क्या पढ़ाएँगे?, कैसे पढ़ाएँगे?, और कब पढ़ाएँगे? यहाँ पर उन्हें एक निश्चित समय में, एक निश्चित पाठ्यक्रम पढ़ाने के लिए दे दिया जाता है। मेरा ऐसा मानना है कि शिक्षक पर काफ़ी कुछ निर्भर करता है कि वह सोचे कि वह ऐसा क्या करे कि बच्चे जिज्ञासु

बन सकें? यह एक शिक्षक के लिए चुनौतीपूर्ण है। उसे एक विशेष व्यवस्था का अनुकरण भी करना है; और नवाचारों के बारे में भी सोचना है। बच्चों को जिज्ञासु बनाने के बारे में विद्यालय के प्रधानाचार्य को भी सोचना होगा। ऐसा भी है कि बहुत से शिक्षक बच्चों को जिज्ञासु बनाना भी नहीं चाहते; और पूर्वनिश्चित परिपाटी में ही चलना चाहते हैं। बहुत से शिक्षक प्रयास करना ही नहीं चाहते।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: आज भी बहुत से अभिभावक अपनी आर्थिक परिस्थिति के चलते बच्चों को स्कूल नहीं भेज पा रहे। बहुत से लोग यह भी सोचते हैं कि पढ़-लिख कर बच्चे क्या करेंगे? उनके लिए रोजगार सुविधाएं नहीं हैं; अवसर नहीं है; भ्रष्टाचार भी बहुत है; न्याय-प्रणाली भी साफ-सुथरी नहीं है; पद भी पैसे देकर खरीदे जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में बहुत से अभिभावक सोचते हैं कि हमारे बच्चे पढ़ कर क्या करेंगे? ऐसे में वे अपने बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रोत्साहित नहीं करते। मैं नहीं जानता कि इसका क्या समाधान होगा? इस सम्बन्ध में नीति-निर्माताओं की तरफ़ से भी कमी है। उन्हें इस स्थिति का समाधान निकालना ही होगा। वे इसके लिए ज़िम्मेदार हैं।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: वर्ग और जाति इसके सबसे बड़े कारण हैं। जाति व्यवस्था; खासतौर पर ग्रामीण इलाकों में हमारी सोच में बहुत गहरे तल तक समाई हुई है; और शहरी इलाकों में वर्ग की पदक्रमता आ गई है। इसलिए, विशेष प्रकार की वर्ग व जाति के लोग 'समान विद्यालय व्यवस्था' नहीं चाहते। यह बिल्कुल साफ़

नज़र आता है। अब तो यह भी देखा जा रहा है कि बड़े पद पर बैठे लोग अपने कर्मचारी के बच्चे के साथ अपने बच्चे को समान स्कूल में भेजना ही नहीं चाहते। ये लोग 'एजुकेशन फॉर ऑल' का नारा तो लगाते हैं, पर अपनी निजी जिंदगी में इसे नहीं मानते। 'समान विद्यालय व्यवस्था' को तो हमारे शिक्षक लोग भी नहीं मानना चाहते। इस सम्बन्ध में हमें फ्रेरे के विचारों से सहायता मिल तो सकती है, लेकिन यह इस बात पर निर्भर करेगा कि हम शिक्षित लोगों को इस बारे में कितना जागरूक कर पाएँगे। यह एक बहुत बड़ी चुनौती है। पढ़े-लिखे लोगों या सशक्त लोगों को मनाना - एक बहुत बड़ी चुनौती है। हमें उन्हें संवाद के ज़रिए मनाना होगा; यह उनकी भी ज़िम्मेदारी है कि हमें एक-साथ रहना चाहिए; हमें इस चुनौती को समझना चाहिए। इस सम्बन्ध में तथाकथित शिक्षित वर्ग को समझाना बड़ा कठिन है। मेरा ऐसा मानना है कि जो लोग शिक्षित नहीं है या जो लोग ग्रामीण इलाकों में होते हैं, उन्हें इस सम्बन्ध में समझाना आसान है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: यह बड़ा मुश्किल है। यह बड़ी समस्या है। हर स्तर को देखना होगा। शिक्षा नीति को भी देखना होगा। हमें उन्हें 'प्रमोट' करना होगा, जो सच में शिक्षक बनना चाहते हैं; साथ ही यह भी देखना होगा कि उन्हें पूरा वेतन मिले। हमें उन लोगों को आगे बढ़ाना होगा, जिनकी पहली प्राथमिकता शिक्षक बनना है; और सभी को पर्याप्त सुविधाएँ भी मुहैया करानी होंगी, ताकि वे सभी शिक्षण क्षेत्र में आएँ। हमें उन समाजों से सीखना होगा, जहाँ शिक्षक को बहुत बढ़िया तरीके से 'ट्रीट' किया जाता है; उन्हें बहुत बढ़िया सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं।

सहायक आचार्य डॉ. मोहम्मद तारिक़ का साक्षात्कार

9) साक्षात्कारदाता: डॉ. मोहम्मद तारिक़
सहायक आचार्य, शिक्षा महाविद्यालय, मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय, मेवात, हरियाणा

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: हाँ, मेरा ऐसा मानना है कि उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर उस समय की परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ा होगा।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा के उद्देश्यों के सम्बन्ध में बच्चों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए, जो व्यवहारिक हो; उनकी आम ज़िंदगी में काम आ सके। वे शिक्षा प्राप्त कर स्वयं की भूमिका को समाज के एक उत्पादक नागरिक के रूप में देख सकें। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने की पद्धति यह होगी कि सबसे पहले शिक्षा में बुनियादी सुविधाएँ बढ़ाई जाएँ; और जनसंख्या नियंत्रण के तरीकों पर काम करके शिक्षा 'प्रोजेक्ट्स' की भविष्य में बढ़ने वाली लागत को रोका जाए, ताकि ये 'प्रोजेक्ट्स' 'फ़ेल' न हों; और शिक्षा के लाभ सभी को मिल सकें।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: उनके विचारों की प्रासंगिकता तभी है, जब हम अपनी वर्तमान शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर, उनमें भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप थोड़ा परिवर्तन करें। हम 'नौलेज बैंकिंग' को पूरी तरह से एक

तरफ़ नहीं रख सकते, लेकिन इसका नुकसान भी हो सकता है; जैसे - 'नो डिटेन्शन पॉलिसी' का एक बड़ा नुकसान यह भी हुआ है कि नौवीं-दसवीं में ऐसे बच्चे भी पहुँच गए हैं, जिन्हें ठीक से लिखना-पढ़ना भी नहीं आता।

4) प्रश्न: फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: बिल्कुल जुड़ी हुई हैं। आज की आधुनिक परिस्थितियों में लोगों के पास खाने को नहीं है, तो शिक्षा तो बाद में आएगी। अगर, हम असल में शिक्षा देना चाहते हैं, तो सबसे पहले ज़रूरी है कि लोगों का पेट भरा हुआ हो। फिर, हमें अपनी नीतियों को ठीक करना होगा।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: मेरी नज़र में, तो हर वह इंसान उत्पीड़ित है, जो पढ़ने की ख़्वाहिश रखता है; और इसके बावजूद, उसे उस 'लेवल' की 'एजुकेशन' नहीं मिल पा रही है; और वे लोग जो यह सब मुहैया नहीं करा पा रहे, वे सभी उत्पीड़क हैं। हमारी लोकतांत्रिक सरकार की सबसे पहली ज़िम्मेदारी यह होनी चाहिए कि वह सभी को दो चीज़े ज़रूर मुहैया कराए – शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएँ।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: इसका एक कारण यह है – एक समान विकास न हो पाना। भारत में बहुत सारे इलाके ऐसे हैं, जहाँ अभी तक स्कूल नहीं पहुँचे हैं। यदि, स्कूल हैं, तो 'टीचर' नहीं हैं; स्कूल और 'टीचर' हैं, तो अन्य सुविधाएँ नहीं हैं। सुविधाओं की कमी की वजह से 'टीचर' वहाँ काम नहीं करना चाहते; वे अपनी 'फैमिली' अपने साथ नहीं रख पा रहे। इसके अलावा, एक बच्चे के

लिए 'प्राइमरी', 'सेकेंडरी', और 'हाईयर एजुकेशन' के 'इन्स्टीट्यूशन' दूर-दूर नहीं होने चाहिए।

फ्रेरे के विचारों से इन स्थितियों को बदलने में सहायता मिल सकती है, लेकिन तथाकथित राजनीतिक आकाओं को पूरी प्रतिबद्धता के साथ काम करना होगा। जब तक एक दृढ़ इच्छाशक्ति नहीं होगी, तब तक आप कामयाब नहीं हो सकते।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: देखिये - मैं इसके लिए अपवंचितों के माता-पिता को सबसे बड़ा ज़िम्मेदार मानता हूँ, क्योंकि ये जागरूक नहीं हैं। अगर, आप किसी गरीब आदमी या आम आदमी से बात करके उससे पूछिए कि आप अपने बच्चे को स्कूल क्यों नहीं भेजते हैं?, तो उसका यह कहना होता है कि पढ़-लिखकर नौकरी तो लगती - है नहीं। इस बात में सच्चाई भी है।

हम ऐसा 'सिस्टम' 'डेवेलप' नहीं कर पा रहे हैं कि जो लोग हमारे पास पढ़-लिखकर सामने आ रहे हैं, उनमें उम्मीद की एक किरण जगे। हमें पूरे 'सिस्टम' को दुरुस्त करा होगा। 'इंडस्ट्री' को 'एजुकेशन' के साथ 'लिंक' करना होगा, ताकि जो पढ़े, उसे आगे चलकर काम मिल सके; उसके अंदर कोई 'स्किल डेवेलप' हो सके। सरकार सभी को नौकरी नहीं दे सकती है।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: माता-पिता में अपनी आर्थिक परिस्थितियों को लेकर डर है; यह डर भी है कि पढ़-लिखकर उनके बच्चों का क्या होगा? बाकी और किसी में,

मुझे कोई 'स्वतन्त्रता का डर' नज़र नहीं आता। केवल माता-पिता ही अपने बच्चों की शिक्षा और नौकरी को लेकर डरे हुए हैं।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: मुझे लगता है कि भारत में ऐसा नहीं होगा।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: मुझे लगता है कि शिक्षित कम हो रहे है, साक्षर ज़्यादा हो रहे हैं। कभी-कभी ये शिक्षित लोग ऐसी बातें कह जाते हैं कि एक लोकतांत्रिक देश में उनसे वैसी बात कहने की उम्मीद ही नहीं होती; जैसे - कभी ये, किसी राजनीतिक विचारधारा को बिना सोचे-समझे मानने लगते हैं। इसके अलावा, शिक्षा को लेकर, मुझे लगता है कि पैसे की कमी नहीं है। अगर, ईमानदारी के साथ काम किया जाए, तो संसाधनों की कमी बिल्कुल नहीं है; और इसमें केवल सरकार की ही सारी ज़िम्मेदारी नहीं है। सभी 'स्टेकहोल्डर' को मिलकर काम करना होगा; चाहे फ़िर वे सरकार के कर्मचारी हों; चाहे माता-पिता हों या फ़िर बच्चे। जब, सभी अपनी-अपनी ज़िम्मेदारी समझेंगे, तभी हम कामयाब हो सकते हैं।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: यह बात बिल्कुल सही है। लोग गरीब हैं। अगर, लोगों के पास पहनने के लिए कपड़े नहीं होंगे, रहने के लिए घर नहीं होगा, तो फ़िर वे शिक्षा के

बारे में किस तरह सोच सकते हैं। इसके लिए, रोज़गार, शिक्षा, और स्वास्थ्य को एक-साथ 'डेवेलप' करना होगा। अगर, व्यक्ति के पास रोज़गार है, उसके पास स्वास्थ्य सुविधाएँ हैं, तो वह अपने बच्चे को ज़रूर पढ़ाना चाहेगा।

12) प्रश्न: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: भारत में राजनीति जिस दिशा में जा रही है, मैं उससे बिल्कुल भी 'सेटीस्फ़ाइड' नहीं हूँ। होना क्या चाहिए? हमें लोगों के विकास की बातें करनी चाहिए; लोगों के स्वास्थ्य की बातें करनी चाहिए; शिक्षा की बात करनी चाहिए। राजनीतिक लोगों को केवल अपनी गद्दी की तरफ़ नहीं देखना चाहिए।

भारत में अभी तक सामाजिक स्थितियाँ अच्छी हैं। अगर, हम राजनीतिक द्वेष के बुरे प्रभावों से बच पा रहे हैं, तो यह सामाजिक स्थितियों की वजह से है। भारत में अभी भी जातिगत भेदभाव और सांप्रदायिक तनाव है, लेकिन अधिक लोग समझदार हैं; नहीं तो - स्थिति अधिक खराब होती। भारत के आर्थिक परिदृश्य में महँगाई को लेकर लोग सुरक्षित महसूस नहीं कर रहे हैं। पैसे को, वे सामाजिक कल्याण की बजाय व्यक्तिगत कल्याण में लगाना ज़्यादा पसंद करते हैं।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: भारत में शिक्षा अभी भी पुराने ढर्रे पर चल रही है। इसका भारतीयकरण करके, इसका आधुनीकीकरण किए जाने की आवश्यकता है। बदलाव धीरे-धीरे आएगा; एकदम से नहीं। हमें इसके लिए पहले से तैयार रहना होगा।

14) प्रश्न: फ़्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ, ऐसा है कि शिक्षा में अलग-अलग वर्ग के अलग-अलग स्कूल हैं। यह पहले भी था; और आज भी है। लेकिन, अगर आप देखेंगे, तो पाएँगे कि बड़ी-बड़ी 'पोस्ट'; जैसे – आईएएस, आईपीएस में सरकारी स्कूलों के बच्चे ज़्यादा हैं। 'प्राइवेट' स्कूल के बच्चे या तो अपना 'बिज़िनस' करते हैं या अच्छी अँग्रेजी जानने की वजह से 'प्राइवेट जॉब' या 'कंपनीज़' में लगे हुए हैं। सरकारी स्कूल का बच्चा भी आज किसी से कम नहीं है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ़्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: मेरा यह मानना है कि 'दीज़ आर एजुकेटेड इललिटरेट'; पढ़े-लिखे अनपढ़ ज़्यादा तैयार हो रहे हैं। लोगों के पास 'सर्टिफ़िकेशन' तो है, लेकिन 'स्किल' नहीं है। फ़्रेरे के विचार इस स्थिति को बदलने में सहायता कर सकते हैं, लेकिन इसमें समय बहुत लगेगा; एक-दम से बदलाव नहीं आएगा। मुझे लगता है – कम-से-कम 50 साल लगेंगे; और हमें दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ राजनीतिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत, तीनों स्तरों पर एक-साथ काम करना होगा।

16) प्रश्न: फ़्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: देखिए - मुझे नहीं लगता कि यहाँ ऐसा कुछ है। यह निर्भर करता है – 'टीचर' पर, 'पेरेंट्स' पर, बच्चे पर, स्कूल के परिवेश पर। अगर 'टीचर' बच्चे को जिज्ञासु बनाना चाहे, तो हो सकता है। 'टीचर' के व्यक्तिगत प्रयासों पर बहुत कुछ निर्भर करता है।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: एक तो लोगों में जागरुकता की कमी है। इसके अलावा, एनजीओ अपना काम पूरी ईमानदारी से नहीं कर रहे हैं। 'सिस्टम' ठीक से काम नहीं कर रहा है। 'सिस्टम' 'फ़ेल' हो रहा है। इसके लिए, हमें अपना 'स्क्रीनिंग सिस्टम' सख़्त करना होगा; और शिक्षा को बाज़ारी तौर पर न देखकर, सामाजिक कल्याण की नज़र से देखना होगा। तभी, हम काम कर पाएँगे।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: मुझे नहीं लगता कि सिर्फ़ इसकी वजह से कोई दिक्कत है। अगर, सरकार कोशिश करे, कानूनों को ठीक तरह से 'इम्प्लीमेंट' करे, तो मुझे नहीं लगता कि इसकी वजह से कोई दिक्कत है। अगर, इंसान के ज़हन में कानून का डर है, तो आप एक बच्चे से 'टोफ़ी' भी नहीं छीन सकते। अगर, कानून का डर नहीं होगा, तो ये सारी दिक्कतें आएँगी। 'पॉलिसी' को भविष्य की 'नीड' को ध्यान में रखकर बनाना होगा; और उसके 'ईफ़ेक्टिव इम्प्लीमेंटेशन' में भ्रष्टाचार को दूर करना होगा।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: देखिए - मेरा मानना है कि 'प्राइवेटाइज़ेशन' से 'शिक्षक-शिक्षा' में उतना नुकसान नहीं हुआ है; फ़ायदा ही ज़्यादा हुआ है। मैं इसे इस रूप में देख रहा हूँ कि आज एक 'असिस्टेंट प्रोफ़ेसर' की 'जॉब' इतनी आसानी से नहीं मिलती है। इन 'प्राइवेट इंस्टीट्यूट्स' की वजह से कम-से-कम काम तो मिल पा रहा है।

सहायक आचार्य डॉ. अजय समीर कुजुर का साक्षात्कार

10) साक्षात्कारदाता: डॉ. अजय समीर कुजुर
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: उस समय वहाँ ब्राजील में पूँजीवादी व्यवस्था तेजी से पनप रही थी। वहाँ अमीर-गरीब की खाई भी बढ़ रही थी। पूँजीपति विद्यालय व्यवस्था को अपने अधीन करने की कोशिश कर रहे थे; और विद्यालयों को अपने फ़ायदे के लिए उपयोग करने की कोशिश कर रहे थे। इसी संदर्भ में पाओलो फ़्रेरे के विचार विकसित हुए थे।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का एक उद्देश्य यह हो सकता है कि एक ऐसे समाज का निर्माण किया जाए, जहाँ पर अमीर और गरीब के बीच का 'गैप' कम होना चाहिए, जहाँ पर भेदभाव न हो; सारी विभिन्नताओं और संस्कृतियों को एक-साथ लेकर आगे बढ़ा जा सके। दूसरा उद्देश्य यह हो सकता है कि हर व्यक्ति में आलोचनात्मक सोच विकसित की जा जाए; और सृजनात्मक सोच पर ज़्यादा 'फ़ोकस' किया जाए।

इन उद्देश्यों को लेकर पद्धति ऐसी हो कि आलोचनात्मक सोच को बढ़ाने वाले 'प्रोजेक्ट' दिए जाएँ। इसमें शिक्षक एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करें। 'प्रोजेक्ट' विधि सम्बन्धी कार्य उपयोगी होंगे; और प्रश्नोत्तर विधि या संवाद

विधि को प्रयोग में लाया जाए। इससे ही सृजनात्मक सोच वाले समाज का निर्माण संभव हो सकेगा।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ, फ़्रेरे का दर्शन प्रासंगिक है। ब्राज़ील में उस समय वर्ग व्यवस्था थी; और यहाँ भारत में भी जाति व्यवस्था है। जाति व्यवस्था भी लगभग उसी तरह से काम कर रही है। जाति व्यवस्था यहाँ पर वर्ग की अपेक्षा और भी ज़्यादा रूढ़ है। यहाँ पर इस प्रकार की रूढ़ता को तोड़ने के लिए फ़्रेरे की सोच की ज़रूरत है।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: समाज में हर तरह की व्यवस्था एक-दूसरे से जुड़ी हुई है। आर्थिक व्यवस्था शिक्षा से अलग नहीं है। शिक्षा राजनीति से अलग नहीं है। राजनीति की तरह अर्थशास्त्र शिक्षा का उपयोग करता है। पूँजीवाद एक आर्थिक व्यवस्था है, जिसमें शिक्षा व्यवस्था के ज़रिए मज़दूर तैयार किए जाते हैं। शिक्षा की अगर बात की जाए, तो यह दो तरह की होती है। एक, कि हम वास्तव में शिक्षा देना चाहते हैं। दूसरा, कि हम विद्यालय व्यवस्था के ज़रिए लोगों को बस केवल साक्षर बना रहे हैं। हम लिखना-पढ़ना जान रहे हैं, पर सही मायने में हम शिक्षित नहीं हो रहे; हम ज्ञान का सृजन नहीं कर पा रहे। यदि, हम ज्ञान का सृजन नहीं कर पाएँगे, तो हम मज़दूर ही बनेंगे। आज, अगर कोई उद्योगपति स्कूल खोलता है, तो वह उस स्कूल में उन्हीं बातों को सिखाने पर ज़ोर देता है, जिनसे उसकी उद्योग की ज़रूरत पूरी हो सके।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: यहाँ पर हर कोई उत्पीड़क है; और हर कोई उत्पीड़ित है। यहाँ पर जो भी बहुसंख्यक बन जाते हैं, वे उत्पीड़क बन जाते हैं; और जो अल्पसंख्यक

हो जाते हैं, वे उत्पीड़ित बन जाते हैं। सरकारों की बात करें, तो सरकार भी उत्पीड़क बन जाती है; और जनता उत्पीड़ित हो जाती है। धार्मिक रूप से जो वर्ग बहुसंख्यक हो जाता है, वह शिक्षा में उत्पीड़क बन जाता है। जहाँ ईसाई बहुसंख्यक हैं, वहाँ वे उत्पीड़क बन जाते हैं; और जहाँ पर हिंदू ज़्यादा हैं, वहाँ वे उत्पीड़क बन जाते हैं; और बाकी उत्पीड़ित बन जाते हैं। ज़्यादातर उत्पीड़ित - एससी और एसटी हैं। उत्पीड़क को पूरी तरह पहचाना नहीं जा सकता, पर जहाँ पर भी जो बहुसंख्यक है, वह उत्पीड़क बन जाते हैं। अगर, शिक्षा की बात करें, तो जहाँ पर हम शिक्षा नहीं दे पा रहे, वहाँ पर शिक्षा प्राप्त न करने वाले उत्पीड़ित हो जाएँगे, क्योंकि उन्हें हम वहाँ शिक्षा की ताकत नहीं दे रहे; उन पर हम ध्यान नहीं दे रहे; उन्हें हम शिक्षा नहीं दे रहे, तो उनका उत्पीड़न हो सकता है; उन पर अधिकार जमाया जा सकता है।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: हमारे पास जाति व्यवस्था है, गंदी राजनीति है, जिसके कारण हम सभी को शिक्षा नहीं दे पा रहे। मैं केवल शिक्षा की बात कर रहा हूँ; समाज की बात मैं नहीं कर रहा। स्कूल तो लगभग सभी जगह हैं, लेकिन स्कूल होने के बावजूद भी हम यह नहीं चाहते हैं कि लोग वहाँ पर शिक्षित हों; उनमें सही-गलत को पहचानने की शक्ति हो। फ़्रेरे ने समानता की बात कही है; वह वर्ग विहीन समाज की बात भी करते हैं। अगर, हम समाजवादी प्रणाली की तरफ़ जाते हैं, तो मुझे लगता है कि फ़्रेरे के विचार उपरोक्त परिस्थिति से निपटने में सहायक होंगे।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: देखिए – 'समान शिक्षा प्रणाली' बहुत ज़रूरी है। 'कोठारी आयोग' ने भी इसके बारे में कहा है। अगर, हम चाहते हैं कि हर वर्ग व जाति के विद्यार्थी

पढ़ सकें, तो इसके लिए हमें अपनी शिक्षा व्यवस्था को बदलना पड़ेगा, पाठ्यचर्या को बदलना पड़ेगा, सारी संस्कृतियों को ध्यान में रखकर पाठ्यचर्या का निर्माण करना पड़ेगा। हमें शिक्षित और अशिक्षित को ध्यान में रखकर पाठ्यचर्या का निर्माण करना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: मुझे नहीं लगता कि उन्हें डरना चाहिए। जो नीति-निर्माता हैं, शिक्षाविद हैं, वे बहुत सारी परिस्थितियों को जानते भी नहीं होंगे। जिन्होंने भी नियोजन का काम किया है, उन्हें इसी बात का डर है कि कहीं शक्ति खो न जाए या बाद में उन्हें और शक्ति न मिले। इसी डर से वे प्रबंधकों की बातों को मान रहे हैं।

इसके अतिरिक्त, मुझे विद्यार्थियों और अभिभावकों में कोई डर नजर नहीं आता। जो गरीब हैं; जो अशिक्षित हैं, वे अपनी परिस्थितियों से नफ़रत करते हैं; वर्तमान परिस्थितियों से डरते हैं। इसलिए, वे अपने बच्चों की स्थिति को सुधारना चाहते हैं। विद्यार्थियों में भी कोई डर नहीं है। गरीब और अशिक्षित अपने बच्चों की शिक्षा के लिए अपना सब कुछ लगाने को तैयार हैं, क्योंकि वे शिक्षा के महत्त्व को जान गए हैं।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: लोग हिंसक हो भी सकते हैं, और नहीं भी। दोनों चीज़ों की 'गारंटी' हम नहीं दे सकते कि यह होगा ही। संभावना दोनों चीज़ों की ही है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हमारे यहाँ लोग ज़्यादा साक्षर हो रहे हैं; शिक्षा तो - है ही नहीं। शिक्षा तभी होगी, जब हम सही-गलत को जान सकेंगे; और ज्ञान का निर्माण कर सकेंगे। इसके अलावा, शिक्षा के सम्बन्ध में पैसे की कमी नहीं है। बस, राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी है।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: गरीबी तो हम नहीं कहेंगे; हमारे पास काफ़ी धन है, जिसके ज़रिए हम सभी को शिक्षित कर सकते हैं। यह सही है कि भारत में बहुत से लोग गरीब हैं, पर अगर हम चाहें, तो सबको शिक्षा दे सकते हैं। अगर, हम सभी को शिक्षा देने की कोशिश करेंगे, तो हम गरीबी को भी मिटा सकते हैं। कुपोषण, गरीबी - यह सभी 'सेकेंडरी' हैं। मुख्य बात है - राजनीतिक इच्छाशक्ति और सामाजिक व्यवस्था।

12) प्रश्न: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: जहाँ तक मुझे लगता है - हमारे राजनेता बदलाव नहीं चाहते। सामाजिक व्यवस्था में भी बदलाव को बहुत अधिक महत्त्व नहीं दिया जा रहा। परंपराओं को कठोरता से मानने की कोशिश हो रही है। जाति व्यवस्था में जैसे बदलाव आ सकते हैं, उस तरह के बदलावों का रास्ता ही बंद है।

भारत की आर्थिक व्यवस्था अच्छी तरह चल रही है। भारत में लोग पैसे की तरफ ज़्यादा भाग रहे हैं, न कि सामाजिक कल्याण की तरफ।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: शिक्षा में दोनों प्रकार के लोग हैं। कुछ लोग बदलाव चाहते हैं; आलोचनात्मक सोच प्रदान करते हैं, जबकि कुछ लोग ऐसे हैं, जो ऐसा नहीं करते या वे अपनी पहले से बनी संस्कृति या परंपरा पर ही ज़्यादा 'फ़ोकस' करते हैं।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: वर्ग के साथ-साथ यहाँ शिक्षा जाति में भी बाँट रही है; इसमें दोनों चीज़ हैं। यहाँ बहुत बड़े-बड़े स्कूल हैं, जहाँ धनी वर्ग के लोग जाते हैं। वहीं पर दूसरे स्कूल भी हैं, जहाँ पर बहुत ही गरीब, जिनके पास खाने को कुछ नहीं है, दो वक्त की रोटी भी नहीं है, वे लोग जाते हैं।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: हमारी शिक्षा व्यवस्था सांप्रदायिक नागरिक तैयार कर रही है न कि धर्मनिरपेक्ष नागरिक। इससे निपटने में फ्रेरे के आलोचनात्मक सोच सम्बन्धी विचार सहायता कर सकते हैं। उनके विचारों से हम समानता भरे समाज का निर्माण कर सकते हैं। समानता सम्बन्धी सोच होगी, तभी व्यक्ति यह सोचेगा कि क्या सही है और क्या गलत? इससे ही वह सांप्रदायिक विचारों के प्रति आलोचनात्मक हो सकेगा।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: जहाँ पर परीक्षा केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था हो, वहाँ पर तो यह होगा ही। जहाँ पर भी पाठ्यपुस्तक और परीक्षाओं पर 'फ़ोकस' करते हैं, वहाँ पर जिज्ञासा तो लगभग खत्म ही हो जाती है; और जहाँ पर शिक्षक, विद्यार्थियों की जिज्ञासा को बढ़ाना भी चाहते हैं, तो वे चाहकर भी ऐसा नहीं कर पाते, क्योंकि अंत में उनका, स्वयं का मूल्य-आंकलन इस बात पर ही निर्भर करेगा कि उनके विद्यार्थी परीक्षा में कितने अंक लेकर आए हैं।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी ही इसका कारण है। 'कोठारी आयोग' ने कहा था कि हमें शिक्षा में जीडीपी का कम-से-कम 6% उपयोग करना होगा, लेकिन हम उसका आधा भी उपयोग नहीं कर पा रहे। अगर, शिक्षा में जीडीपी का 4% थी उपयोग हो जाए, तो शिक्षा बेहतर हो सकती है। इसके लिए प्रयास किए जाने चाहिए।

हम तरह-तरह के विद्यालय खोल रहे हैं। हम नवोदय विद्यालय, केंद्रीय विद्यालय, आदर्श विद्यालय, और प्रतिभा विद्यालय खोल रहे हैं। इससे हम क्या कर रहे हैं?; इससे हम समाज को बाँट रहे हैं; लोगों को हाशिए पर डाल रहे हैं; कुछ लोगों को आगे ला रहे हैं; और हाशियाकरण की गति को तेज कर रहे हैं। हमें इस प्रकार वर्गीकरण होते जाने को लेकर चिंतित होना होगा।

इसी प्रकार, जहाँ केंद्रीय विद्यालयों में हम करोड़ों रुपए दे रहे हैं, वहीं राज्यों के सरकारी विद्यालयों में हम नहीं के बराबर पैसा दे रहे हैं। हमारे देश में पैसा है, लेकिन हम शिक्षा की बजाए दूसरे क्षेत्रों में इसका उपयोग कर रहे हैं। इससे शैक्षणिक कार्यक्रमों के समुचित क्रियान्वयन में अड़चने पैदा हो रही हैं; और शिक्षा तक सभी की पहुँच नहीं बन पा रही।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: भारत में सामाजिक व्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था को कारक माना जा सकता है। सामाजिक व्यवस्था इस प्रकार से कि समाज की जाति व्यवस्था 'समान विद्यालय व्यवस्था' को लागू करने में बाधा उत्पन्न कर रही है। इसी प्रकार, उच्च वर्ग के लोग यह मानते हैं कि उनके बच्चे बाकी लोगों के बच्चों के साथ नहीं पढ़ सकते।

राजनीतिक व्यवस्था भी कहीं-न-कहीं इसके लिए ज़िम्मेदार है। राजनीतिक व्यवस्था भी यह मानती है कि यदि, 'समान विद्यालय व्यवस्था' लागू हो गई, तो उन्हें अपनी शक्ति से हाथ धोना पड़ेगा, क्योंकि तब लोगों में विभेद की बजाय एक-दूसरे के प्रति समानता का भाव और अपने पर विश्वास करके, खराब स्थितियों को बदलने का भाव विकसित होने लगेगा।

फ़्रेरे के विचार इस स्थिति से निपटने में हमारी सहायता कर सकते हैं, क्योंकि फ़्रेरे कहते थे कि हमें आलोचनात्मक सोच का विकास करना है। अगर, हर किसी में आलोचनात्मक सोच विकसित हो जाएगी, तो लोग यह जान जाएँगे कि जाति व्यवस्था की सच्चाई क्या है?; और राजनीतिक इच्छाशक्ति का क्या रूप है? इसके बाद, वे स्वयं ही प्रयास करके समाज में जागरुकता लाएँगे।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: एनसीटीई को समय-समय पर शिक्षक-शिक्षा संस्थानों की औचक जाँच-परख करने की आवश्यकता है। शिक्षक-शिक्षा संस्थानों में यह देखना होगा कि कक्षाएँ नियमों के मुताबिक हों; शिक्षक पारंगत हों; संस्थाओं में

अच्छी सुविधा हो। यदि, सुविधा पर्याप्त न हो, तो कम-से-कम प्रशिक्षण ठीक तरह से हो। इसके अलावा, यह भी किया जा सकता है कि जो शिक्षक-शिक्षा संस्थान अपने शिक्षकों को पूरा पैसा नहीं देते, उन्हें बंद कर दिया जाए या ज़्यादा-से-ज़्यादा सरकारी संस्थान खोले जाएँ। यह तभी होगा, जब शिक्षा में बजट दिया जाएगा। बजट नहीं दिया जा रहा, तभी यह सारी चीजें हो रही हैं; 'प्राइवेट कॉलेज' आ रहे हैं; उनका मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना होता है; वह तो कमाएँगे ही। इस पैसा कमाने में, गुणवत्ता से समझौता कर लेना – एक आम बात बन गई है।

प्राचार्य डॉ. हरिओम भारद्वाज का साक्षात्कार

11) साक्षात्कारदाता: डॉ. हरिओम भारद्वाज
प्राचार्य, शिक्षा महाविद्यालय, स्यादवाद उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान, बागपत, उत्तर प्रदेश

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: देखिए - फ़्रेरे की जो उस समय की आर्थिक विषमताएँ थीं, सामाजिक परिस्थितियाँ थीं, तानाशाही परिस्थितियाँ थीं; लोगों में जागरुकता का अभाव था, आत्मनिर्भरता का अभाव था, और उनके परिवार के गरीबी भरे हालात, इन सभी ने उनके शैक्षिक विचारों को प्रभावित किया।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: फ़्रेरे के दर्शन में यथार्थवाद और प्रयोजनवाद का मिला-जुला रूप देखने को मिलेगा। शिक्षा के उद्देश्य ऐसे हों, जो वर्तमान की प्रासंगिकता को अवगत कराए; शिक्षा के ज़रिए समाज में गतिशीलता आए। जहाँ तक इन उद्देश्यों को प्राप्त करने की बात है, तो पद्धति ऐसी होनी चाहिए कि हम शिक्षा के ज़रिए जानने की प्रक्रिया, विश्लेषण, और आत्मसात करना सीखें। यानि, जानना, समझना, और विकास करना ज़रूरी है।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ – बिल्कुल; भारत में फ़्रेरे के विचारों की ज़रूरत है। लोगों के अंधविश्वासों को यथार्थवादी दृष्टि देना ज़रूरी है। अगर, फ़्रेरे के विचारों को

शिक्षा में लागू करें, तो निश्चित रूप से लोगों में ठीक से जीवनयापन करने की समझ बढ़ेगी। हमारी शिक्षा संरचना ज्ञान तो देती रहती है, लेकिन फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन से उसे व्यवहारिक बनाया जा सकता है।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिए - भारत में शिक्षा में निवेश ठीक प्रकार से होना चाहिए, ताकि ठीक परिणाम प्राप्त हो सकें। निवेश की समझ के लिए भी अच्छी शिक्षा प्राप्ति का होना आवश्यक है।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: कहीं शिक्षक उत्पीड़ित हैं, तो कहीं शिक्षार्थी। शिक्षकों को समय पर पगार नहीं मिलती है; समान काम, समान वेतन नहीं मिलता है। इसी कारण से वे सही दिशा में जाने से कतराते हैं। इसमें निजीकरण ने बड़ी भूमिका अदा करी है। शिक्षा के क्षेत्र में व्यापारी घुस गए हैं। अब तो स्कूल, 'कालेज' भी 'फैक्टरी' लगने लगे हैं। ऐसी स्थिति में तो शोषण और शोषित साफ़ दिखाई दे रहा है। पूँजीपति वर्ग उत्पीड़क बन चुका है; इसे सरकार और शासन की शय है। इस वर्ग की तमाम कमियों के बावजूद इसे टोकने वाला कोई नहीं है। शैक्षिक 'बोडी' ठीक तरह से काम नहीं कर रही है। शिक्षक व छात्र वर्ग उत्पीड़ित हैं। यही वजह है कि तमाम 'डिग्रियाँ' होने के बावजूद भी, व्यक्ति को अपनी मंज़िल नहीं मिल पाती। वह बीच में छोड़ देता है; आत्महत्या कर लेता है; 'लाइन' बदल लेता है।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: वैसे, तो बदलाव हुआ है। शिक्षा का दीपक जल रहा है, पर अभी भी जागृति का अभाव है। कम पढ़े-लिखे लोगों को शिक्षा के महत्त्व का पता

नहीं है। इसके अलावा, शिक्षा की उपयोगिता भी कम हुई है। शिक्षा का व्यवसायीकरण सुनिश्चित नहीं है। हमारे यहाँ शिक्षा में नवीनीकरण का भी अभाव है। कहीं-न-कहीं हम आज भी पुराने ढर्रे पर चल रहे हैं, चाहे फिर वह शोध हो, संकल्पनाएँ हों। हमारे यहाँ विद्वानों, ऋषि-मुनियों की कमी नहीं है, लेकिन फिर भी हम केवल बाहर के लेखकों को ही पढ़ते रहते हैं। बाहर से राम, जब रामा होकर आ जाता है, तो उसी को ही स्वीकारते रहते हैं; सृजनशीलता का अभाव है। फ्रेरे के शैक्षिक विचारों से इन मुद्दों के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है। आलोचनात्मक दृष्टिकोण से विवेक बढ़ता है; और इससे सभी तक शिक्षा की पहुँच के सवाल का समाधान तलाशा जा सकता है, परन्तु हमें व्यवहारिक होना होगा।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: सबसे पहले तो, उन चीज़ों को हटाना होगा, जिनकी वजह से वे वंचित हैं; रोटी-कपड़े सम्बन्धी वंचना पहले दूर करनी होगी। इसके अलावा, दिव्यांगजनों पर अतिरिक्त ध्यान देना होगा; लोगों को आलोचनात्मक दृष्टिकोण की ओर मोड़कर जातिगत बंटवारा और अहम को दूर करना होगा; राजनीति द्वारा लोगों को बांटने के प्रयोग पर रोक लगानी पड़ेगी; और लोगों में एक-दूसरे को स्वीकार करने के भाव को बढ़ाना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: आज के माहौल में छात्र और माता-पिता मुझे डरे हुए नहीं लगते। वे जागरुक हो रहे हैं, शिक्षा प्राप्त कर रहें हैं। गरीबों के बच्चे भी ऊँचे पदों पर

पहुँच रहे हैं। बदलाव हो रहा है। शिक्षा-निवेशकों और अध्यापकों की सोच भी डर से मुक्त हो रही है।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: नहीं - ऐसा होने की संभावना कम है। अच्छे काम की अच्छाई और बुराई दोनों होंगी। अगर, बुराई करने को ही अंतिम सच्चाई मान लिया जाए, तो ऐसे में लोग साकारात्मक होना ही बंद कर देंगे। अगर, कोई व्यक्ति पढ़-लिखकर गलत दिशा की ओर मुड़ जाए, तो क्या सभी पढ़ना-लिखना छोड़ दें? तो, मुझे लगता है कि विध्वंस और मतांधता की कोई बात नहीं है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: दोनों में बहुत भिन्नता है। भारत में साक्षरता का ज़्यादा प्रसार हो रहा है; क्योकि आज भी लोगों में विवेक की कमी है। यदि, एमएससी करने के बाद भी कई लोगों की सोच रूढ़ीग्रस्त है, तो वे साक्षर ही हुए, शिक्षित नहीं। भारत में अभी लोगों में आलोचनात्मक चेतना जागृति पर काफ़ी काम करना पड़ेगा। इस सम्बन्ध में, भारत में पैसे की कमी नहीं है; संसाधन की कमी नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में सभी को मिलकर काम करना होगा। व्यक्ति को अपने स्तर पर भी निष्ठा के साथ काम करना होगा। सरकार को निजी और सरकारी दोनों क्षेत्रों में काम करने वालों के लिए समान काम, समान वेतन की व्यवस्था को लागू करना होगा; और लोगों को यह करना होगा कि उन्हें जो काम मिला है, वे उसे अपना कर्त्तव्य मानकर समय पर पूरा करें।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: हाँ, भारत में अभी भी बहुत से ऐसे स्थान हैं, जहाँ पर भूख है, गरीबी है, कुपोषण है। वहाँ पर संसाधन विकसित करने की आवश्यकता है। ये स्थिति शिक्षा प्राप्ति के मार्ग में बाधा तो है।

12) प्रश्न: फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: भारत की सामाजिक परिस्थितियों में रूढ़ियाँ तो, पहले के मुक़ाबले कम हुई हैं। नई सोच, नया परिवर्तन सुधार तो कर रहा है। राजनीतिक इच्छाशक्ति में भी बदलाव देखा जा रहा है, पर उन्हें अभी बदलाव की संस्कृति को और अपनाना होगा। भारत में आर्थिक रूप से अभी भी चुनौतीपूर्ण स्थिति है। हमारी प्रतिभाएँ पलायन कर रही हैं; उन्हें कोई सुदृढ़ धरातल नहीं मिल पा रहा है। व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत ज़िम्मेदारियों में ही उलझा हुआ है; और अपने सामाजिक सरोकारों से दूर है।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: वर्तमान समय में मुझे लगता है कि भारत में शिक्षा के ज़रिए लोगों में पुराने दुराग्रहों को छोड़ा जा रहा है। उनमें धीरे-धीरे नवोन्मेषी सोच विकसित हो रही है। 'कोर्सों' में विविधता आई है। बच्चों के पास चयन की सुविधा है। वे पढ़ाई-लिखाई के ज़रिए आगे बढ़ने के बारे में सोच रहे हैं। अब, वे बिना तर्क के बातों को मानने से इंकार करने लगे हैं। तकनीक ने भी इस सोच को आगे बढ़ाने का काम किया है।

14) प्रश्न: फ़्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: भारत में राजनीतिक क्षेत्र में शिक्षा को एक व्यवसाय के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। उसका निजीकरण कर लिया गया है। इससे समाज में वर्ग बन गए हैं। सरकारी और निजी स्कूल अपने आप में वर्ग बन चुके हैं।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ़्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: ऐसे पढ़े-लिखे नागरिक तैयार कर रही है, जो बस केवल साक्षर हैं; शिक्षित कम तैयार कर रही है। नागरिक - संकीर्ण तैयार हो रहे हैं, स्वार्थी तैयार हो रहे हैं, केवल खुद का ही देख रहे हैं। फ़्रेरे का दर्शन इस तरह की परिस्थितियों को बदलने में सार्थक भूमिका निभा सकता है, लेकिन उसे ठीक प्रकार से 'डिज़ाइन' किए जाने की ज़रूरत है, 'लेवल वाइज़'।

16) प्रश्न: फ़्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: भारत में विद्यालय जिज्ञासा बढ़ाने के बजाय केवल सूचनाएँ देने वाले हो गए हैं। चाहे, फिर आप सरकारी विद्यालयों में चले जाओ या निजी में। कक्षाओं में भी बच्चे 'व्हाट्सेप' से पढ़ रहे हैं, 'फ़ेसबुक' से पढ़ रहे हैं, 'सोशल मीडिया' से पढ़ रहे हैं। यह किस प्रकार की जिज्ञासा है? जिस जिज्ञासा में व्यक्ति की इंद्रियों का पूर्ण इस्तेमाल न हो, उसकी संवेदनाओं का इस्तेमाल न हो, उसमें सृजनात्मकता न हो, गहराई न हो, वह जिज्ञासा नहीं है, केवल सूचनाओं को जानना भर है या चीज़ों को पैदा करना। ऐसी जिज्ञासा किसी काम की नहीं है।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: देखिए - वही बात है कि लोगों में जागृति की कमी है; और कई शैक्षिक कार्यक्रम अपने उद्देश्यों को पूरा नहीं कर पाते। कई एनजीओ हैं, जिनके कार्यक्रम बस 'सर्वे टाइप' ही हैं। वे शिक्षा में कोई बड़ा बदलाव नहीं ला पाते।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: देखिए, असली वजह है - लोगों में जागरुकता की कमी और प्रशासन का अपना 'रोल' ठीक से अदा न करना। लोगों के अपने व्यक्तिगत उद्देश्य हैं। वे दूसरों के बारे में सोचने की बजाय अपने स्वार्थों को लेकर ज़्यादा सोच रहे हैं। फ्रेरे के विचारों के प्रचार-प्रसार से लोगों में आलोचनात्मक समझ बढ़ सकती है; और वे सोचेंगे कि मैं दूसरों के लिए भी कुछ करूँ।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: इस प्रश्न का उत्तर उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तरों में ही साक्षात्कारदाता द्वारा 'प्राइवेट' संस्थानों के संदर्भ में दे दिया गया है।

सहायक आचार्य डॉ. मुकेश कुमार परिहार का साक्षात्कार

12) साक्षात्कारदाता: श्री मुकेश कुमार परिहार
सहायक आचार्य, एम.एड. विभाग, सेंट्रल अकेडेमी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, अजमेर, राजस्थान

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: देखिए - विचारों पर युग विशेष का प्रभाव तो, पड़ता ही है। मुझे ऐसा लगता है कि फ़्रेरे की तात्कालीन परिस्थितियों का उनके चिंतन पर, शिक्षा-दर्शन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा था।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए – सक्षम समाज का निर्माण करना। शिक्षा सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण होनी चाहिए। मेरे विद्यार्थी 'इंटर्नशिप' के अपने अनुभव बताते हुए मुझसे कहते हैं कि सर, उस स्कूल विशेष का सातवीं-आठवीं कक्षा का विद्यार्थी अपना नाम भी नहीं बता पा रहा है। समाज में जो शिक्षा मिल रही है, वह नाम मात्र की ही है। सक्षम समाज के निर्माण के लिए मूल्य और कौशलों पर हमें बड़ी गंभीरता के साथ काम करना होगा। जिन विद्यार्थियों को लगता है कि दसवीं या बारहवीं के बाद पढ़कर क्या होगा?, उनको भी शिक्षा के महत्त्व से परिचित कराना होगा।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ, भारत के संदर्भ में फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता है। आज भी हमारा समाज शोषक और शोषितों में बंटा हुआ है। इसलिए, फ़्रेरे के शोषक

व शोषितों की स्थिति के विवेचन से संबंधित विचार भारत की परिस्थितियों को समझने में भी मददगार हो सकते हैं।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: शिक्षा तो बस अब दो वर्गों की ही चलती है। अभी हाल में ही इस विषय पर काफ़ी चर्चा होती रही है कि भारत में क्या उनको सीधे ही सहायक आचार्य के पद पर नियुक्त किया जा सकता है, जो बाहर के विश्वविद्यालय से पढ़कर आएँगे? भारत में साधन सम्पन्न वर्ग अच्छी शिक्षा प्राप्त कर लेगा, और साधन विहीन वर्ग नहीं कर पाएगा।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: विद्यालयों में तो विद्यार्थी उत्पीड़ित है, क्योंकि उसे वहाँ उसके मनोविज्ञान को समझे बिना ही शिक्षा दी जा रही है। इसके अलावा, वह 'होमवर्क' से भी पीड़ित है। 'प्राइवेट स्कूल' में तो पूरा 'सिस्टम' ही उत्पीड़क हो रहा है।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति ज़िम्मेदार है। हम 1947 में आज़ाद हुए; और हमें लगभग 40 साल लग गए – नई शिक्षा नीति लाने में; और लगभग 45 से 50 साल लग गए, हमें - 'राइट टू एजुकेशन' लाने में; और 60 साल लग गए – पाठ्यचर्या की रूपरेखा बनाने में। तो, जो काम हमें आज़ादी के 10 सालों में करना था, उसे हम 40 साल लगाकर कर रहे हैं; और उसका 'फोर्मूलेशन' भी अभी तक ठीक तरह नहीं हो पाया है। एनसीएफ़ 2005 को आए काफ़ी समय गुज़र चुका है, पर आज भी कई 'टीचर' इसके बारे में नहीं जानते। फ़्रेरे के विचार इन परिस्थितियों को बदलने

में भूमिका निभा सकते हैं। मुझे फ्रेरे के विचारों में भी 'एजुकेशन फॉर आल' वाला नज़रिया दिखाई देता है, यद्यपि उन्होंने इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया है।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: हमें अपवंचितों के 'स्किल' और मूल्य विकास के बारे में भी सोचना होगा। हमारी शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों में मूल्य संवर्धन से हटती जा रही है। चरित्र विकास पर फ़ोकस - कम कर दिया गया है। अपवंचितों के समाज में भी चेतना का अभाव है। विद्यालय को उनके समाज से भी जुड़ना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: हमें कुछ नया करने का भय बहुत ज़्यादा है। हम कुछ भी नया नहीं करना चाहते। 'टीचर' अपने को 'रूटीन वर्क' तक ही सीमित रखता है, क्योंकि उसे पता है कि अगर वह कुछ नया करेगा, तो उसे 'क्रीटिसाइज़' किया जाएगा। यही बात छात्रों पर भी लागू होती है। समाज में भी शोषकों में इस बात का भय देखा जा सकता है कि वे इस डर से 'स्किल डेवलेपमेंट' नहीं करना चाहते कि कहीं शोषित वर्ग उन पर ही हावी न हो जाए।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: देखिए - मुझे नहीं लगता कि ऐसा बड़े पैमाने पर हो सकता है। कुछ मामलों मे संभव है, लेकिन लोगो में शिक्षा के ज़रिए आलोचनात्मक चेतना जागृति तो होनी ही चाहिए।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: देखिए - हम तो यहाँ शिक्षा का मतलब साक्षर करने से ही ले रहे हैं, जबकि शिक्षा का अर्थ तो यह है कि व्यक्ति की अंतर्निहित क्षमताएँ पूर्ण रूप से बाहर आ जाएँ। लेकिन, हम उसे पढ़ने-लिखने की 'नौलेज' तक ही जोड़ पाते हैं। शिक्षा को तो व्यक्ति के विकास से जोड़ना चाहिए। यह भी देखना चाहिए कि व्यक्ति समाज में अपनी सहभागिता भी निभा पाए। इस सम्बन्ध में भारत में पैसे की कमी नहीं है। बस, इच्छाशक्ति की कमी है। शिक्षकों को भी पैसा मिल रहा है, लेकिन उन्हें अपनी ज़िम्मेदारियाँ सत्यनिष्ठता से पूरी करनी होंगी।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: यह कोई बड़े पैमाने पर फैले कारण नहीं हैं। कुछ विद्यार्थी गरीब हो सकते हैं; विद्यालयों में 'मिड-डे-मील' चलाया जा ही रहा है।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: वैसे तो, भारत में तीनों क्षेत्रों – सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक, में ही सुधार चलते रहने चाहिए, लेकिन; विशेषकर सामाजिक क्षेत्र में ही सुधार

कर लें, तो बहुत अच्छा होगा। हम लोग किसी भी नई चीज़ को सामाजिक तौर पर स्वीकार करने से पहले बहुत सोचते हैं; और बहुत जल्दी विरोधाभासों को अपने 'कल्चर' का विरोधी मान लेते हैं। भारत में अभी भी परंपरागत परिवारों में जातिवाद का अनुसरण किया जा रहा है।

राजनीतिक परिदृश्य को यदि, देखा जाए तो यहाँ लोगों को इस बात से कोई लेना-देना ही नहीं है कि राजनीतिक दल क्या कर रहे हैं; राजनीतिक चेतना की बहुत कमी है।

भारत के आर्थिक परिदृश्य में, यह जो है – बिचौलिया 'सिस्टम', यह बहुत खराब है। किसानों को उनकी फ़सल का सही मूल्य नहीं मिल पाता है।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: शिक्षा में यह देखा ही नहीं जा रहा कि वह व्यक्ति में कितनी 'वेल्यू इनकलकेट' कर रही है, 'स्किल डेवलेप' कर रही है। इसका बस, एक ही परिणाम निकलता है कि व्यक्ति सारी सामाजिक समस्याओं की अनदेखी करने लग जाता है, जबकि 'फ़ोकस' होना चाहिए था – अच्छा नागरिक बनाने पर, जिससे हमारी आधी समस्याएँ, तो वैसे ही हल हो जातीं। शिक्षा व्यक्ति को परिपक्व नहीं बना पा रही।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: दो तरह के स्कूल खुल गए हैं। एक – जहाँ, अमीर वर्ग के बच्चे के लिए सुविधाएँ हैं; दूसरा – जहाँ बच्चे को स्कूल पहुँचने के लिए कई किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है। भारत में शिक्षा का वर्गीकरण तो - है ही। इस तरह का वर्गीकरण इस बात का परिचायक है कि भारत में अभी भी, सभी के लिए एक-समान शिक्षा का लक्ष्य, प्राप्ति से बहुत दूर है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: भारत में शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए था – अच्छा इंसान बनाना, जो समाज के लिए भी कुछ सोचे, पर अब शिक्षा केवल नौकरी पाने के लिए कोई 'कोर्स' करने पर केन्द्रित होकर रह गई है। बस, इसी तरह की सोच वाले नागरिक तैयार हो रहे हैं। इस स्थिति में बदलाव के संदर्भ में फ्रेरे के विचार उपयोगी हो सकते हैं, यदि वर्ग विशेष के स्थान पर पूरी जनसंख्या के लिए सोचा जाए।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: यहाँ, या तो 'टीचर' रखे ही नहीं जा रहे या 'टीचर' अगर है, तो वह परंपरागत विधियों से पढ़ाकर चला जाता है, जिससे छात्रों की जिज्ञासा बंध ही जाती है। जिज्ञासा बढ़ाने के लिए अन्य विधियों; जैसे – 'रोल प्ले मेथड', भ्रमण विधि, सहभागी अधिगम विधि, इत्यादि का प्रयोग करना पड़ेगा। यद्यपि, कंटैंट में ये विधियाँ दे रखी हैं, लेकिन इनको प्रयोग में नहीं लाया जा रहा।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: समाज में यह भावना व्याप्त है कि पढ़-लिख कर तू आगे करेगा क्या? इसके अलावा 'डिग्री' प्राप्त करने के बाद भी कई लोग नौकरी प्राप्त नहीं कर पाते; और वे वही काम करते रहते हैं, जो वह पहले से ही कर रहे थे। सरकार की तरफ़ से भी योजनाओं के क्रियान्वयन की 'मॉनिटरिंग' ठीक से नहीं की जा पा रही। इससे योजनाएँ मात्र दिखावा बनकर रह जाती हैं।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: मुझे लगता है कि भारतीय समाज में 100 में से 8% से 10% लोग ही ऐसी सोच रखते हैं कि वे 'समान शिक्षा प्रणाली' को स्वीकार नहीं कर पाते। इस सम्बन्ध में कई घटनाएँ देखने को मिल जाएँगी, जहाँ किसी विद्यार्थी को पढ़ने नहीं दिया जा रहा या पानी नहीं पीने दिया जा रहा। कई बार तो, 'टीचर भी ऐसे बुरे व्यवहार करते देखे गए हैं। राजस्थान में तो, इस तरह की खबरें आती रहती हैं। 'शाला दर्पण वेबसाइट' के आँकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाले जा रहे हैं कि आस-पास के सरकारी विद्यालयों में अधिकतर शोषित या गरीब वर्ग के बच्चे ही पढ़ने जा रहे हैं। वहाँ एससी, एसटी, ओबीसी वर्ग के बच्चे ही ज़्यादा हैं। ज़्यादातर जनरल वर्ग के बच्चे दूर के स्कूलों में पढ़ने के लिए जा रहे हैं, वजह चाहे - गुणवत्ता हो या कुछ और। फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इन स्थितियों में परिवर्तन करने में सहायता कर सकता है, लेकिन समाज को किसी भी मुद्दे को दरकिनार नहीं करना चाहिए। उसे उस पर चिंतन-मनन करना चाहिए; जैसे - आरक्षण को लेकर विरोध का भाव अपनाने से पहले उसको लेकर चिंतन किया जाना चाहिए।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: देखिए - शिक्षक-शिक्षा के सरकारी संस्थान तो, अपना काम कर रहे हैं, लेकिन 'प्राइवेट' संस्थान तो 'प्रोपर फ़ैकल्टी' ही नहीं रखते। यदि, 40 चाहिए हो, तो 10 के आसपास रखते हैं; पाठ्यसहगामी क्रियाएँ भी कागज़ पर हो जाती हैं। यह बात पूरे भारत पर लागू हो रही है। तो, 'क्वालिटी टीचर तो हम पैदा कर ही नहीं पा रहे।

सहायक आचार्य श्री अभिनव त्यागी का साक्षात्कार

13) साक्षात्कारदाता: श्री अभिनव त्यागी
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, बाबू कामता प्रसाद जैन महाविद्यालय, बड़ौत, उत्तर प्रदेश

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: हाँ - फ़्रेरे के विचारों पर उस समय की सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक परिस्थितियों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने खुद अपने आसपास की परिस्थितियों को महसूस किया था। तभी, उनके विचार बड़े क्रांतिकारी थे।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: फ़्रेरे सार्वभौमिक शिक्षा के पक्षधर थे। उन्होंने सभी के लिए शिक्षा की बात की है; विशेषकर समाज का दबा-कुचला वर्ग। इनकी परिस्थितियों में सुधार के लिए शोषकों-शोषितों मे संवाद होना चाहिए।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हाँ - फ़्रेरे के विचार भारत में प्रासंगिक हैं, क्योंकि ब्राज़ील और भारत की परिस्थितियाँ काफ़ी हद तक एक-जैसी हैं। दोनों ही विकासशील देश हैं। यहाँ भी वहाँ की तरह दबा-कुचला वर्ग है, जिसे काफ़ी लम्बे समय से कई तरह के अधिकारों से वंचित रखा गया है।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: पूँजीपति वर्ग सदैव यही चाहता है कि समाज के शोषित पढ़-लिखकर जागरूक न हो पाएँ, नहीं तो वे उनके खिलाफ़ विद्रोह कर देंगे। इसके लिए वे शोषितों में शिक्षा प्रसार का कोई प्रयास नहीं करते।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: 'प्राइवेट' स्कूल में बच्चे शोषित हैं, अगर टीचर उपीड़क बन जाए तो। प्रबन्धक, शिक्षकों के लिए उपीड़क है; वह उन्हें कम 'सेलरी' देकर, उनसे ज़्यादा काम लेता है। जहाँ बच्चे स्कूल के लिए 'कस्टमर' हैं, वहाँ वे शिक्षकों का उत्पीड़न कर रहे हैं।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: सबसे प्रमुख कारण - सरकारों में दृढ़ इच्छाशक्ति का अभाव रहा है। नीतियाँ तो, बहुत बनाई गई हैं, लेकिन उनके ठीक प्रकार से क्रियान्वयन का अभाव रहा है। फ़्रेरे की नज़र में इसके लिए समाज के सबसे दबे-कुचले लोगों को शिक्षित करके उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल करना होगा। इससे समाज, देश का विकास होगा।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: अपवंचितों की शिक्षा को व्यवस्थित करने के लिए नीतियों के क्रियान्वयन को ठीक करा पड़ेगा। इनके विकास के लिए अनेक प्रयास किए

गए; बढ़िया नीतियाँ भी बनाई गईं, लेकिन इनका क्रियान्वयन ठीक करना होगा। ज़मीन पर इन्हें ठीक करना होगा। लोगों को अपनी सांस्कृतिक धरोहरों के प्रति भी जागरूक करना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ़्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: बच्चों में यह डर है कि कहीं उन्हें ज़्यादा काम न करना पड़ जाए या उनकी फ़ीस न बढ़ जाए। 'पेरेंट्स', फ़ीस बढ़ने और अपने बच्चे के 'कैरियर' को लेकर भयभीत हैं। शिक्षकों में नौकरी छूट जाने और अधिक काम करने का डर है। 'मेनेजमेंट', सरकार द्वारा उसे मिले अधिकारों में कटौती से डरती है। नीति बनाने वाले नीतियों में परिवर्तन करने से डरते हैं कि कहीं नीतियों को बदलने से खराब परिणाम न मिलने लग जाएँ।

9) प्रश्न: फ़्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: नहीं – ऐसा नहीं है। फ़्रेरे तो, पिछड़े समाज को जागरूक ही इसलिए कर रहे हैं, ताकि सभी की नाकात्मक सोच को बदला जा सके।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ़्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: भारत में लोग साक्षर अधिक हो रहे हैं, शिक्षित कम हो रहे हैं। साक्षरता बढ़ने के बाद भी समाज में अपराध बढ़ रहे हैं। तो, शिक्षा के माध्यम

से लोगों को मूल्यों के प्रति जागरुक बनाना होगा। इस सम्बन्ध में पैसे की कमी ही एक मात्र कारण नहीं हो सकती। बिना पैसे के या कम पैसे से भी कई लोगों ने समाज सुधार कार्यक्रम चलाए हैं।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: वैसे, पहले की तुलना में कुपोषित बच्चों की संख्या में कमी आई है, लेकिन अभी भी कुपोषण है। सरकार ने इसको लेकर 'मिड-डे-मील कार्यक्रम चलाया है, पर अभी भी और काम करना होगा।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: पूँजीपति वर्ग और अलाभ की स्थिति वाला वर्ग, दोनों ही एक-दूसरे के विरुद्ध संघर्ष करते रहते हैं। होना यह चाहिए कि सभी को साथ लेकर चलने वाली सोच का विकास किया जाए। दोनों के ही डर को दूर किया जाना चाहिए।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: शिक्षा में भी उपर्युक्त दोनों वर्गों को संवाद के ज़रिए समाधान तलाशना पड़ेगा। परिवर्तन से डरना नहीं चाहिए।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: हमारा समाज शिक्षा के कारण बंटा हुआ तो, है। निजी और सरकारी स्कूल के शिक्षकों की प्रस्थिति में अंतर है। इसी तरह 'डिग्री' स्तर और

'प्राइमरी' स्तर पर पढ़ाने वालों की स्थिति भी ऐसी ही है। निजी विद्यालय में पढ़ने वाले के पास सारी सुविधाएँ हैं, जबकि सरकारी स्कूल में पढ़ने वाले के पास बुनियादी सुविधाओं का अभाव है। इससे सरकारी स्कूल के बच्चे के मन में हीन भावना पैदा होती है; और वह खुद को समाज से अलग समझने लगता है। यह नहीं होना चाहिए, परन्तु हम देख सकते हैं कि राजनेताओं में इस तरह का वर्गीकरण समाप्त करने को लेकर चिंतन का अभाव है। वे इसे समस्या के रूप में नहीं देख रहे।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: वह 'वर्कर' या 'सरवेंट' तैयार कर रही है। यह शिक्षा व्यवस्था क्रिएटर, वैज्ञानिक तैयार नहीं कर रही। फ्रेरे के शिक्षा-दर्शन की सहायता से हम आलोचनात्मक चिंतन करने वाले व्यक्ति तैयार कर सकते हैं, जो सोच-समझकर काम करेंगे।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: पहले ऐसा था, पर अब बच्चे को ऐसा परिवेश दिया जा रहा है कि वह ज़्यादा-से-ज़्यादा प्रश्न करे। अब स्थितियाँ बदल रही हैं। इस सम्बन्ध में अनेक शैक्षिक प्रयोग किए जा रहे हैं।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: हर स्तर पर सत्यनिष्ठता का अभाव ही इसका कारण है। शिक्षक अपना काम, प्रबंधक अपना काम, और नीति-निर्माता अपना काम, पूरी सत्यनिष्ठता से नहीं कर रहे हैं।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: लोगों के मन में जातिवाद, धार्मिक विद्वेष, और आर्थिक स्थिति का पूर्वाग्रह अभी भी भरा पड़ा है। इससे 'समान शिक्षा प्रणाली' और 'पड़ोसी विद्यालय' को आत्मसात करने में चुनौती मिल रही है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: शिक्षक-शिक्षा में व्यापक सुधार करना होगा; 'करीकुलम' में सुधार करना होगा; और उसे ठीक तरह से क्रियान्वित करना होगा। आज तो लोग इन संस्थाओं को पैसा देकर 'डिग्रियाँ' खरीद रहे हैं। यदि, फ्रेरे के विचारों की बात की जाए, तो उनकी 'विवेकीकरण' की अवधारणा को शिक्षा के सभी स्तरों पर अपनाना होगा। तभी, सुधार में सहायता मिल सकेगी।

सहायक आचार्या सुश्री कंचन खटरेजा का साक्षात्कार

14) साक्षात्कारदाता: सुश्री कंचन खटरेजा
सहायक आचार्या, शिक्षा विद्यापीठ, के. आर. मंगलम विश्वविद्यालय, गुरुग्राम, हरियाणा

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: मुझे लगता है कि हाँ - फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर फ़्रेरे की उस समय की परिस्थितियों का असर ज़रूर पड़ा होगा। वे शिक्षा के ज़रिए समाज में परिवर्तन लाना चाहते थे। उनकी मानसिक स्थिति गरीबी के हालात, भेदभाव भरी परिस्थितियों, उन्हें देश निकाला दिए जाने से उपजे हालातों से अवश्य प्रभावित हुई होगी।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का उद्देश्य होगा कि वह लोगों को व्यवसाय के लिए तैयार करे, जागरुक करे, सही-गलत की पहचान कराए, लोगो में आलोचनात्मक चिंतन का विकास करे; उन्हें जीवनयापन करने के लिए रोज़गार उपलब्ध कराए। इसके लिए हम 'निर्मितिवादी उपागम' के ज़रिए आगे बढ़ सकते हैं; प्रयोगात्मक उपागम, खोज अधिगम से आगे बढ़ सकते हैं, पर पहले संसाधनों का प्रबंध करना पड़ेगा।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: फ़्रेरे के विचार कुछ हद तक प्रासंगिक हैं। हमें आज के संदर्भ में विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा की बात करनी होगी। फ़्रेरे के विचारों को अपनाकर

हम भारत में बेरोज़गारी की परिस्थितियों में बदलाव ला सकते हैं; लोगों को कम-से-कम शिक्षा की ओर मोड़ सकते हैं।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिए - आप पूँजीवादी सोच को शिक्षा संरचना में देख सकते हैं। फ़्रेरे उसका विरोध करते थे। भारत की शिक्षा संरचना में आप शिक्षकों को कम 'सेलरी' देने को, इसी रूप में समझ सकते हैं। वहाँ 'इंग्लिश मीडियम' और हिन्दी मीडियम' का फ़र्क है; वे कुछ विषयों की ही शिक्षा पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं; स्कूल चलाने वाले ऐसी सोच से ग्रस्त हैं। वे ऐसी शिक्षा देते हैं, जिससे उनके पास पैसा आए।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: उत्पीड़ित तो विद्यार्थी और 'पेरेंट्स' हैं। उत्पीड़क है – उनको उत्पीड़ित करने वाला प्रबन्धक, संस्थाएँ, सत्ताधारी। इसी प्रकार, शिक्षक भी उत्पीड़ित है, क्योंकि उस पर भी ये सब थोपा गया है। उसे एक पूर्वनिश्चित 'करीकुलम' दिया गया है; वह उसे बदल नहीं सकता।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: इसका कारण यही है कि बच्चों को 'पेरेंट्स' स्कूल नहीं भेजते, अपनी अशिक्षा के कारण। वे शिक्षा का महत्त्व नहीं समझते; या उनकी पारिवारिक स्थिति ऐसी है कि वे सोचते हैं कि अगर, ये स्कूल चले गए, तो उनका घर कौन चलाएगा। तो, वे उनको काम में लगाते हैं कि वे कमाएँ; और उनका घर चले या अपने छोटे भाई-बहन की देखभाल करें। उनकी सोच यह है कि अगर, ये पढ़-लिख भी जाएँगे, तो इनकी नौकरी नहीं लगेगी। फ़्रेरे के विचार इसमें हमारी सहायता कर सकते हैं। वे बच्चों की शिक्षा के हक में थे।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: शिक्षा थोड़ी अंतर्राष्ट्रीय स्तर की हो। बच्चों को व्यवसाय की ओर उन्नमुख करें। बच्चा 'ग्रैजुएशन' भी कर जाता है, पर उसको 'जॉब' नहीं मिलती, क्योंकि उसको 'स्किलफुल एजुकेशन' नहीं मिलती। उन्हें शिक्षा के ज़रिए कुछ काम करना सीखाना होगा; 'स्किल' के 'कोर्स' करवाएँ जाएँ, ताकि वे काम पा सकें, पर हमारी शिक्षा ऐसी नहीं है।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: देखिए - युवाजन बदलाव के लिए तैयार तो, होते हैं, लेकिन अपने 'पेरंट्स' के प्रेशर' को लेकर, जहाँ वे पढ़ रहे हैं, काम कर रहे हैं, उनमें यह डर तो, रहता है कि अगर, वे कुछ बोलेंगे, तो उन्हें काम से निकाला जा सकता है; उनके साथ कुछ गलत हो जाएगा; उन्हें स्कूल से निकाला जा सकता है। तो, उनके मन में कहीं-न-कहीं डर तो, है। 'पेरेंट्स' अगर, पैसे को लेकर बोलते हैं, तो उनके खिलाफ़ और संस्थाएँ खड़ी हो जाती हैं। हमारे 'सिस्टम' में उनकी आवाज़ दबा दी जाती है।

स्कूल प्रबंधन तो, सत्तावादी है, उनके पास पैसा व ताकत है; वे खुद ही 'रूल्स' बनाते हैं। वे अपने फ़ायदे के लिए बदलाव नहीं होने देना चाहते। पॉलिसी के मामले में सच यह है कि 'पॉलिसी मेकर' पर दबाब तो, होता है।

इसके अलावा, नीति के क्रियान्वयन में कमी रह जाती है; जैसे – 'सर्वशिक्षा अभियान' तो बना दिया, लेकिन उससे शिक्षा का सार्वभौमीकरण तो, हुआ नहीं। इसलिए, 'स्वतन्त्रता के भय' को अन्य समस्याओं के साथ जोड़कर देखना होगा।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: हो सकता है कि वे आलोचनात्मक रूप से चेतन होने बाद कुछ ऐसे 'स्टेप' उठा लें कि वे आपस में ही झगड़ने लगें। इससे देश का ही नुकसान है; मानववाद का नुकसान हो सकता है। तो, कहीं-न-कहीं डर तो, है कि यह विध्वंस का रूप ले सकता है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: साक्षर हो रहे हैं; शिक्षित नहीं हो रहे हैं। मुझे लगता है कि शिक्षा के ज़रिए उनका सर्वांगीण विकास नहीं होता। वे केवल ज्ञान प्राप्त कर एक-दूसरे को हस्तांतरित करते रहते हैं। इससे उनका व्यवहार परिमार्जित नहीं होता है। पैसे की कमी भी है; और लोग जागरुक भी नहीं हैं। उन्हें नहीं पता कि उनके क्या-क्या अधिकार व कर्त्तव्य हैं। उन्हें यह भी नहीं पता कि गाँव के स्कूल में उनके बच्चों के लिए 'मिड-डे-मील' की व्यवस्था है।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: कुपोषण होना पैसा न होने से जुड़ा है; और पैसा क्यों नहीं है? क्योंकि, उनके पास शिक्षा नहीं है। इसी लिए, भारत में शिक्षा और गरीबी का बड़ा ही गहरा सम्बन्ध है। फिर, गरीबी भी गुणात्मक शिक्षा को पाने में एक बाधा है।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: भारत में आज भी वही विचार हैं, वही राजनीति है। राजनीतिक पार्टियाँ खुद को बदलना नहीं चाहतीं। वही घिसा-पिटा 'सिस्टम' चलता आ रहा है। भारत की सामाजिक व्यवस्था में थोड़ा बदलाव आया है। लोगों की सोच बदली है; पश्चिमीकरण का प्रभाव बढ़ा है। 'ग्लोबलाइज़ेशन' है, तो सामाजिक रूप से तो बदलाव आया है। भारत की आर्थिक स्थिति में अभी भी अमीर-गरीब का भेदभाव बहुत है। 'रिच और पूअर' समाज हैं।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: अब, अगर देखें तो, 33-34 सालों के बाद एक नई शिक्षा नीति आ रही है, यानि तीन पीढ़ीयाँ तो वैसा ही पढ़ गईं; और अब जो नीति आई है, उसे 'इम्प्लीमेंट' करने में फिर 'टाइम' लगेगा। शिक्षा में बदलाव के विचार तो खूब कहे जाते हैं, लेकिन आज भी लोग पढ़-लिख कर बाहर जाना चाहते हैं। हम चाहें, जैसी मर्ज़ी 'टेक्नोलोजी' की बात कर लें, हमारा 'सिस्टम' वहीं है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: बिल्कुल – भारत में शिक्षा भी वर्गीकरण कर रही है। सबसे पहले शिक्षा में 'रुरल-अर्बन' क्षेत्र आ जाता है, फिर सरकारी-निजी आ जाता है; 'मीडीयम' का है, बोर्ड का है – वर्गीकरण। 'जॉब' के लिए जाते हैं, तो वहाँ भी 'बोर्ड' के अनुसार वर्गीकरण किया जाता है। इस तरह, आप भारत में सभी जगह वर्गीकरण को देख सकते हैं, जो शिक्षा के कारण से है।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ़्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: ये बेरोज़गार तैयार कर रही है। केवल, 'क्रीमी लेयर टाइप' बच्चों को ही 'जॉब' दी जाती है। सभी को नौकरी नहीं मिल पाती। जिसे नहीं मिल पाती, फिर वह कोई छोटा-मोटा काम करता है, यानि शिक्षा इस तरह से निचले क्रम के काम करने के लिए तैयार करती है।

फ़्रेरे के विचारों से सहायता लेकर हम ऐसी शिक्षा की व्यवस्था कर सकते हैं, जो बच्चों को रोज़गार प्राप्ति या जीवकोपार्जन की ओर उन्नमुख कर सके; उन्हें अच्छे-बुरे की समझ प्रदान कर सके, ताकि वे विश्वास के साथ अपने निर्णय ले सकें।

16) प्रश्न: फ़्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: कुछ स्कूल ऐसे हैं – जहाँ, बच्चों को अपने विचार रखने का मौका दिया जाता है; और कुछ ऐसे हैं – जहाँ, शिक्षक अपने विचार थोपते हैं; और बच्चे उन्हें निष्क्रिय 'लर्नर' की तरह ग्रहण करते हैं। कुल मिलाकर, आज की शिक्षा बच्चों की जिज्ञासा को बाँध ही रही है। उन्हें पहले से ही कह दिया जाता है कि उन्हें क्या-क्या करना है।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: अनेक कारण हैं; जैसे – गरीबी, बच्चों का पारिवारिक माहौल, 'पेरेंट्स' का पढ़ा-लिखा न होना, बच्चों का जीविका कमाने के लिए काम पर जाना। विभिन्न कार्यक्रमों में भी कमियाँ हैं; जैसे – 'मिड-डे-मील' में पोषण की कमी है; इसमें 'टीचर' का समय भी खराब होता है। इस सम्बन्ध में

गावों में लोग कहते हैं कि हमें इससे बढ़िया दूध अपने यहाँ मिलता है; खाने की 'क्वालिटी' अच्छी नहीं है। यही सब कारण हैं।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: यह प्रणाली अपनाना अच्छा रहेगा, पर इसका कहीं-न-कहीं विरोध भी किया जाता है। समान करने से सभी तरह का भेदभाव ख़त्म हो जाएगा, लेकिन फिर कई लोगों की लाभ की स्थिति उनसे दूर हो जाएगी। इसलिए, जानबूझकर शिक्षा का वर्गीकरण किया जाता है। इस बारे में फ्रेरे के विचारों से सहायता लेकर आगे बढ़ा जा सकता है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: शिक्षक-शिक्षा के 'करीकुलम' में परिवर्तन करना होगा। हमें पढ़ाने की नई विधियों का समावेश करना होगा। व्यवहारिक तरीकों पर ज़्यादा ध्यान दिया जाए। मूल्यांकन ठीक हो। बच्चे 'रेगुलर' रहें। 'मॉनिटरिंग' ठीक प्रकार से हो। 'बायो-मेट्रिक सिस्टम' सभी जगह हो। इस सम्बन्ध में फ्रेरे के विचारों से सहायता ली जा सकती है।

सहायक आचार्य श्री सुशील कुमार का साक्षात्कार

15) साक्षात्कारदाता: श्री सुशील कुमार
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग (एम.एड.), बाबू कामता प्रसाद जैन महाविद्यालय, बड़ौत, उत्तर प्रदेश

---

1) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन-सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

उत्तर: यकीनन - उन पर उस समय की शोषणकारी परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव रहा। इसी संदर्भ में जो, उन्होंने 'बैंकिंग शिक्षा' को लेकर अपने विचार रखे, उस तरह की परिस्थितियाँ नहीं होनी चाहिए।

2) प्रश्न: यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

उत्तर: शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए – बच्चे को आत्मनिर्भर बनाना। यही शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य है, बाकी उद्देश्य गौण हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने की पद्धति यह होगी की बच्चे को, जो 'कोर्स' वह कर रहा है, उसमें प्रशिक्षण अवश्य दिया जाए; जैसे - बी.एड. में 'इंटर्नशिप' के माध्यम से 'ट्रेनिंग' होती है।

3) प्रश्न: फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

उत्तर: देखिए - ब्राज़ील की तरह भारत भी एक विकासशील देश है। दोनों की आर्थिक परिस्थितियाँ भी काफ़ी हद तक मिलती-जुलती हैं। इसलिए, यदि फ़्रेरे के विचारों को भारत में लागू किया जाए, तो वह निश्चित तौर पर प्रासंगिक होंगे।

4) प्रश्न: फ़्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

उत्तर: देखिए - शिक्षा एक ऐसा माध्यम है, जिससे वर्ग असमानता को दूर किया जा सकता है, लेकिन पूँजीपति वर्ग ने शिक्षा पर असर डाला है। उन्होंने एक ऐसी शिक्षा नीति लागू की हुई है, जो उनके लाभ के लिए काम करती है, न कि अन्यों के।

5) प्रश्न: भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

उत्तर: शोषण करने वाला वर्ग है – पूँजीपति वर्ग; और जिनका शोषण हो रहा है, वह है – निम्न वर्ग। निम्न वर्ग के लोग अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी सफ़ल नहीं हो पाते। पूँजीपति वर्ग द्वारा खोले गए स्कूलों में सेवा भाव देखने में नहीं आता; उनका प्रमुख उद्देश्य केवल पैसा कमाना है, लाभ कमाना है। स्कूलों में जो भी बच्चे निम्न वर्ग से आ रहे हैं, उनका किसी-न-किसी रूप में शोषण हो रहा है। इनमें से, जो शोषण सहन नहीं कर पाते, वे स्कूल छोड़ देते हैं।

6) प्रश्न: भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

उत्तर: देखिए - इसमें जो अभाव है, वह है कि लोगों में अपने अधिकारों के प्रति सजगता नहीं है; जैसे-जैसे यह बढ़ेगी, तो साक्षरता बढ़ेगी।

फ़्रेरे के विचार इसमें हमारी सहायता कर सकते हैं; आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं। शिक्षा को ऐसा करना होगा, जिससे बच्चे की शिक्षा भी पूरी हो जाए, और उसकी शिक्षा का खर्चा भी निकल आए। लोगों को आलोचनात्मक रूप से चेतन बनाना होगा। उनमें आलोचना के ज़रिए चेतना जागृत होगी, तभी बात बन सकेगी। ऐसा इसलिए, क्योंकि आलोचनात्मक चेतना व्यक्ति को बदलाव के लिए तैयार करती है।

7) प्रश्न: शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

उत्तर: इनके ही वर्ग पर आधारित संस्थाएँ खोलनी होंगी; जैसे - अल्पसंख्यकों को अपनी संस्थाएँ खोलने के अधिकार दिए गए हैं। उसके माध्यम से ये वर्ग अपने अधिकारों को जानेंगे; शिक्षा से परिचित होंगे; और आगे बढ़ेंगे। इसके अलावा, उनकी संस्कृति को भी शामिल करना होगा।

8) प्रश्न: पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

उत्तर: भारत एक ऐसा देश है, जो परंपरागत तरीके से काम करता है। यहाँ के लोग आज भी, जो बदलाव होता है, उसे स्वीकार करने में काफ़ी समय लेते हैं। शुरू में तो बदलाव की काफ़ी आलोचना भी होती है। जब भी ऐसा बदलाव होता है, जिससे छात्रों या शिक्षकों का कार्यभार बढ़ता है, तो उनमें डर नज़र आता है। माता-पिता में अपने बच्चे के आगे बढ़ने को लेकर भय व्याप्त है। इसके अलावा, यहाँ दो तरह की शिक्षा है – सरकारी और निजी। सरकारी संस्थाओं को लेकर नीति-नियंताओं, जो कि सरकार या सरकारी कर्मचारी हैं, में किसी तरह का कोई भय नहीं है। नीति ऊपर से आती है, वे लागू कर देते हैं। 'प्राइवेट' वाले अपनी 'एसोसिएशन' के ज़रिए ऐसी नीति बना लेते हैं, जिससे उन्हें लाभ हो। दोनों ही तरह की संस्थाओं में किसी तरह का कोई डर नहीं है।

9) प्रश्न: फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

उत्तर: देखिए – अगर, हम विद्यार्थियों को जागरुक करें, तो डर नहीं होगा, बल्कि उसका उल्टा हो जाएगा। वे नए समाज का निर्माण करेंगे। परन्तु, अगर अनपढ़ लोगों को जागरुक करें, तो वहाँ हिंसा हो सकती है; वहाँ इसकी संभावना है।

10) प्रश्न: शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: अगर, आज की बात की जाए, तो मेरे हिसाब से केवल साक्षरता बढ़ रही है। क्योंकि, जैसे यहाँ हो रहा है - लोग 'डिग्रियाँ' लिए जा रहे हैं; और उनको काम तो मिल नहीं रहा है, तो मैं इसको साक्षरता ही कहूँगा। वे व्यवाहरिक रूप से शिक्षित नहीं हो पाते।

इस सम्बन्ध में भारत में पैसे की कोई कमी नहीं है। ऊपर से, जो बजट चलता है और नीचे पहुँचता है, उसमें भ्रष्टाचार की वजह से पैसे की कमी दिखाई जाती है। असल में, पैसे की कमी नहीं है।

11) प्रश्न: कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

उत्तर: देखिये - ऐसा है। लेकिन, हमें यह भी देखना होगा कि लोग अपनी पुरानी सोच की वजह से भी अपने बच्चों को शिक्षा से दूर रख रहे हैं। वे अपने बच्चों से अपने परंपरागत काम या वे काम, जो वे खुद करते रहे हैं, ही कराना चाहते हैं।

12) प्रश्न: फ्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

उत्तर: देखिए - राजनीतिक दृष्टि से भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के तहत अनेक दल बने। ऐसे दल भी बने, जिन्होंने लोगों को अपने स्वार्थ के लिए भड़काया है। दल बदलना भी आम बात हो गई है। दलों के आपसी गठजोड़ ने भ्रष्टाचार को बढ़ाया है; जनता वहीं-की-वहीं रह गई।

भारत की सामाजिक परिस्थितियों में बहुत सारी भिन्नताएँ हैं। समाज वर्गों और जातियों में विभाजित है, पर धीरे-धीरे बदलाव भी हो रहा है। बहुत सारे लोग परंपरागत सोच से ऊपर उठकर सामने आए हैं। पहले जाति एक बंद वर्ग रहा है, लेकिन कई लोगों ने इसे इस रूप में मानना छोड़ दिया है।

भारत के आर्थिक दृश्य में अभी भी उच्च, मध्य, निम्न वर्ग को देखा जा सकता है। भारत की स्थिति वैश्विक जगत में आँकड़ों के हिसाब से अच्छी नहीं है।

13) प्रश्न: यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

उत्तर: भारत में विभिन्न राज्यों के 'बोर्ड' हैं। इनमें भिन्नता है। इन भिन्नताओं को खत्म करना होगा। तभी, समानता लाई जा सकती है। एक ही 'बोर्ड' होगा, एक ही शिक्षा होगी, तो इसके माध्यम से समानता लाई जा सकती है। आज भी अँग्रेज़ो के द्वारा स्थापित शिक्षा प्रणाली चली आ रही है।

14) प्रश्न: फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

उत्तर: देखिए - यहाँ अमीर वर्ग के अलग स्कूल हैं; गरीब वर्ग के अलग स्कूल हैं। शिक्षा प्रणाली तो बंटी हुई है; इसमें कोई दो राय नहीं है। शिक्षा का यह बंटवारा ज्ञानवान समाज के निर्माण के लिए घातक है। अगर, हमें भारत को उन्नत बनाना है, तो सबसे पहले शिक्षा के ज़रिए होने वाले वर्गीकरण को रोकना होगा।

15) प्रश्न: आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उत्तर: भारत की शिक्षा प्रणाली 'क्लर्क' या मध्यम वर्ग तैयार कर रही है; मध्यम वर्ग के नौकरीपेशा लोग, जो केवल मशीनीकृत रूप से काम करते रहते हैं; केवल 'ऑर्डर फॉलो' करते रहते हैं। फ्रेरे के आलोचनात्मक दृष्टिकोण से संबंधित विचार इन स्थितियों को सुधारने में सहायता कर सकते हैं। फ्रेरे के विचारों पर नीतियाँ बनाकर, अगर कार्य किया जाए, तो यह संभव है।

16) प्रश्न: फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

उत्तर: मेरी नज़र में भारत में भी लगभग 75% विद्यालय, बच्चों की जिज्ञासा को बाँध ही रहे हैं। वे बच्चों को आलोचनात्मक नहीं बना पा रहे हैं।

17) प्रश्न: ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

उत्तर: इसका कारण है - भ्रष्टाचार। अनेक ज़रियों से 90% के लगभग पैसा खाया जाता है; उसका सही उपयोग नहीं हो पाता।

18) प्रश्न: भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: हाँ - बिल्कुल बाधा पैदा करती है। सारे देश में एक ही शिक्षा होनी चाहिए। अमीर लोग अपने बच्चों को गरीबों के बच्चों के साथ पढ़ने देना

नहीं चाहते। अगर, फ्रेरे के विचारों को योजनाबद्ध तरीके से लागू किया जाए, तो इस स्थिति को बदला जा सकता है।

19) प्रश्न: यदि, भारत में शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखा जाए, तो उसमें सुधार के लिए क्या किया जा सकता है; और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार क्या इसमें कोई सहायता कर सकते हैं?

उत्तर: 'प्राइवेट' शिक्षक-शिक्षा संस्थानों की 'ओनरशिप' खत्म होनी चाहिए। यहाँ काम करने वाले शिक्षकों का वेतन, विश्वविद्यालय से सीधे ही उनके 'अकाउंट' में 'ट्रांसफर' किया जाना चाहिए। एक नियम बनाना चाहिए कि कल संस्थान का मालिक उनसे यह न कह दे कि आपको अब नहीं आना है। 'नॉन अटेंडिंग कल्चर' को खत्म करने के लिए 'प्रोपर इंस्पेकशन' होना चाहिए; साल में एक बार नहीं, बल्कि 'सरप्राइज़ इंस्पेकशन' होना चाहिए; और सभी को 'ऑनलाइन' कर देना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

संदर्भ ग्रंथ-सूची

- Government of India (2013). *Statement Indicating Public Expenditure on Education.* MHRD, New Delhi, India: Planning, Monitoring and Statistics Bureau. Retrieved from http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics/PubExpdt-.2013pdf
- Government of India (2016a). *Analysis of Budgeted Expenditure on Education 2013-14 to 2015-16*. MHRD, New Delhi, India: Planning, Monitoring and Statistics Bureau. Retrieved from https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics-new/ABE2013-16.pdf
- Government of India (2016b). *Educational Statistics at a Glance 2016*. MHRD, New Delhi, India: Statistics Division, MHRD. Retrieved from https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics-new/ESG2016.pdf
- Government of India (2018). *Educational Statistics at a Glance 2018*. MHRD, New Delhi, India: Statistics Division, MHRD. Retrieved from https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics-new/ESAG-2018.pdf
- National Council for Teacher Education (2009). *National Curriculum Framework for Teacher Education*. MHRD, New Delhi, India: Member-Secretary, NCTE Retrieved from https://ncte.gov.in/Website/PDF/NCFTE_2009.pdf
- National Council of Educational Research and Training (2006). *Seventh All India School Education Survey (National Tables on*

Schools, Physical and Ancillary Facilities). MHRD, Government of India, New Delhi, India: NCERT. Retrieved from http://www.ncert.nic.in/programmes/education_survey/pdfs/Schools_Physical_Ancillary_Facilities.pdf

- National Council of Educational Research and Training (2016). *Eighth All India School Education Survey 2009***.** MHRD, Government of India, New Delhi, India: NCERT. Retrieved from http://ncert.nic.in/pdf_files/8th_AISES_Concise_Report.pdf

- UNICEF (1990). *World Conference on Education for All: Meeting Basic Learning Needs*. New York, USA: Inter-Agency Commission. Retrieved from https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000097551

- आचार्य, परमेश (2001). *देशज शिक्षा, औपनिवेशिक विरासत और जातीय विकल्प* (अनिल राजिमवाले, अनु.). दिल्ली, भारत: ग्रन्थ शिल्पी.

- उदित, राज (2005, दिसम्बर 5), शिक्षा में अधूरा सामाजिक न्याय. *हिन्दुस्तान दैनिक*, पृ. 8.

- एवॉलास, ब्रीट्रीस (सं.) (1999). *गरीब बच्चों की शिक्षा* (नरेश 'नदीम', अनु.). नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी.

- ऑटवे, ऐ.के.सी. (1972). *शिक्षा और समाज* (ब्रजभूषण शर्मा, अनु.). लखनऊ, भारत: उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी. (मूल कार्य प्रकाशित 1953).

- ओम्नी (1994). जनशिक्षा आंदोलन और पाओलो फ्रेरा (पाओलो फ्रेरे से ओम्नी पत्रिका की बातचीत). *परिप्रेक्ष्य*, *1*(1), 173-184.

- कपूर, बद्रीनाथ (सं.). (2007). *बृहत् अंग्रेज़ी-हिंदी कोश*. दिल्ली, भारत: प्रभात प्रकाशन.

- किरण, चाँद (1995). *शिक्षा के आधारभूत सिद्धांत*. दिल्ली, भारत: विवेक प्रकाशन.

- किरण, चाँद (2006). *शिक्षा – दार्शनिक परिप्रेक्ष्य*. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत: हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय.

- कुमार, अरविंद और कुमार, कुसुम (2005क). *समांतर कोश (हिंदी थिसारस) – अनुक्रम खंड*. नई दिल्ली, भारत: नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया.
- कुमार, अरविंद और कुमार, कुसुम (2005ख). *समांतर कोश (हिंदी थिसारस) – संदर्भ खंड*. नई दिल्ली, भारत: नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया.
- कुमार, कृष्ण (1990). *राज, समाज और शिक्षा*., दिल्ली, भारत: राजकमल प्रकाशन.
- कुमार, भूपिन्द्र (1998). *स्वतंत्रता पश्चात् भारतीय राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में समकालीन भारतीय शिक्षा के स्वरूप का अध्ययन* (अप्रकाशित एम.फिल. शोध-प्रबंध). दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.
- कुमार, सुरेश (2006). *86वें संविधान संशोधन का राजनीतिक विश्लेषण: शिक्षा के मौलिक अधिकार के संदर्भ में* (अप्रकाशित एम.एड. शोध-प्रबंध). दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.
- कुमारी, संतोष (2003). *भारतीय संविधान के परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक समानता की संकल्पना का आलोचनात्मक विवेचन* (अप्रकाशित एम.एड. शोध-प्रबंध). दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.
- कृष्णमूर्ति, जे. (1998). *शिक्षा संवादः छात्रों और शिक्षकों से* (डॉ. डी. एस. वर्मा, अनु.). वाराणसी, भारत: कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन इंडिया. (मूल कार्य प्रकाशित 1974).
- कौल, लोकेश (1998). *शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली*. नई दिल्ली, भारत: विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि.
- गांधी, मो. क. (2002). *सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा* (काशीनाथ त्रिवेदी, अनु.)., अहमदाबाद, भारत: नवजीवन प्रकाशन मंदिर. (मूल कार्य प्रकाशित 1927 और 1928).
- जोशी, रामशरण (1996). *आदिवासी समाज और शिक्षा* (अरुण प्रकाश, अनु.). नई दिल्ली: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1984).
- झा, मदन मोहन (2003). *समावेशी शिक्षा: दृष्टिकोण और प्रक्रियाएँ* (नरेश 'नदीम', अनु.). नई दिल्ली, भारत: प्रकाशन संस्थान. (मूल कार्य प्रकाशित 2002).

- डीवी, जॉन (1998). *शिक्षा और लोकतंत्र* (लाडलीमोहन माथुर, अनु.). नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1916).
- त्रिवेदी, आर. एन. और शुक्ला, डी. पी. (2002). *रिसर्च मैथ्डोलोजी*. जयपुर, भारत: कॉलेज बुक डिपो.
- दूबे, श्यामाचरण (2000). *शिक्षा, समाज और भविष्य*. नई दिल्ली, भारत: राधाकृष्ण प्रकाशन.
- नाईक, जे. पी. (1998क). *भारत में प्राथमिक शिक्षाः शेष संकल्प* (सरला मोहनलाल, अनु.). बीकानेर, भारत: वाग्देवी प्रकाशन. (मूल कार्य प्रकाशित 1966).
- नाईक, जे. पी. (1998ख). *समानता, गुणवत्ता और संख्यात्मक विस्तारः भारतीय शिक्षा का दुर्ग्राह्य त्रिकोण* (सरला मोहनलाल, अनु.). बीकानेर, भारत: वाग्देवी प्रकाशन. (मूल कार्य प्रकाशित 1975).
- पपनै, कैलाश चन्द्र व पाराशर, अमिताभ (2005, जुलाई 10). शिक्षा को महंगा बनाने के पक्ष में है मोंटेक. *हिंदुस्तान दैनिक*, पृ. 8.
- पाण्डेय, रामशक्ल (2000). *विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री*., आगरा, भारत: विनोद पुस्तक मंदिर.
- फ्रेरे, एना मारिया अराउज़ो और मसीडो, डोनेल्डो (सं.). (1998). दी पाओलो फ्रेरे रीडर. न्यू यार्क, यू.एस.ए.: दी कोंटिनम पब्लिशिंग कंपनी.
- फ्रेरे, पाओलो (1997क). *उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र* (रमेश उपाध्याय, अनु.). नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1968).
- फ्रेरे, पाओलो (1997ख). *प्रौढ़साक्षरताः मुक्ति की सांस्कृतिक कार्रवाई* (जवरीमल्ल पारख, अनु.). नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1970).
- फ्रेरे, पाओलो (1998). *पेडागोजी ऑफ फ्रीडम : एथिक्स, डेमोक्रेसी, एंड करेज* (पेट्रिक क्लार्क, अनु.). मेरीलैंड, यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका: रोमैन एंड लिटलफील्ड पब्लिशर्स. (मूल कार्य प्रकाशित 1996).
- फ्रेरे, पाओलो (2010). *उम्मीदों का शिक्षाशास्त्र* (विपिन, अनु.). दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1992).

- फ्रेरे, पाओलो और मसीडो, डोनेल्डो (2001). ए डायलोग विद पाओलो फ्रेरे. पीटर मेक्लर्न और पीटर लियोनार्द (सं.) में, *पाओलो फ्रेरे: ए क्रिटिकल एंकाउंटर* (पृ. 169-176). लंदन, यू. के.: रूटलेज.

- बेल, ब्रेंडा, गैवेंटा, जॉन एवं पीटर्स, जॉन (सं.). (2003). *चलकर राह बनाते हम* (शैवाल गुप्ता व अन्य, अनु.). नई दिल्ली, भारत: प्रकाशन संस्थान. (मूल कार्य प्रकाशित 1987).

- बेस्ट, जॉन डब्ल्यू. एंड काहन, जेम्स वी. (2003). *रिसर्च इन एजुकेशन* (सातवाँ संस्करण). नई दिल्ली, भारत: प्रेंटिस हाल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटिड.

- भारत सरकार (1968). *शिक्षा और राष्ट्रीय विकास (शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन, 1964-66)*. नई दिल्ली, भारत: शिक्षा मंत्रालय.

- भारत सरकार (1990). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की समीक्षा समिति का प्रतिवेदन (आचार्य राममूर्ती समिति)*. नई दिल्ली, भारत: भारत सरकार.

- भारत सरकार (1993). *शिक्षा बिना बोझ के (यशपाल समिति), राष्ट्रीय सलाहकार समिति का प्रतिवेदन* (राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, अनु.). शिक्षा विभाग, नई दिल्ली, भारत: मानव संसाधन विकास मंत्रालय. (मूल कार्य प्रकाशित 1993).

- भारत सरकार (2009, अगस्त 27). दी राइट ऑफ चिलड्रन टू फ्री एण्ड कंपलसरी एजुकेशन एक्ट, 2009. *दी गैजेट ऑफ इंडिया, एक्स्ट्राओर्डिनेरी*, भारत: भारत सरकार.
  https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/upload_document/rte.pdf से लिया गया

- भारत सरकार (2019). *प्रारूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2019*. नई दिल्ली, भारत: मानव संसाधन विकास मंत्रालय. https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/Draft_NEP_2019_HI.pdf से लिया गया

- भारती, कँवल (2004). *दलित विमर्श की भूमिका*. इलाहाबाद, भारत: इतिहासबोध प्रकाशन.

- मुकर्जी, रवीन्द्र नाथ (2007). *समकालीन उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धान्त*. नई दिल्ली, भारत: विवेक प्रकाशन.

- मुकर्जी, रवीन्द्र नाथ और दुबे, देवाशीष (1993). *शोध का पद्धतिशास्त्र*. बरेली, भारत: सरल प्रकाशन.
- यादव, सुषमा व शर्मा, राम अवतार (1997). *भारतीय राजनीतिः ज्वलंत प्रश्न*. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत: हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय.
- रज़ा, मूनिस (1996). *शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम* (सुजाता राय, अनु.). नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी. (मूल कार्य प्रकाशित 1990).
- रस्तोगी, निधि (2000). *आचार्य रजनीश की मानव-संकल्पना एवं शिक्षा-दर्शन - एक सत्त्वविद्यात्मक अध्ययन* (अप्रकाशित पी.एच.डी. शोध-प्रबंध). दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.
- राममूर्ती, आचार्य (1990). *शिक्षा, संस्कृति और समाज*. मुंगेर, बिहार, भारत: श्रम भारती
- रायजादा, बी. एस. (1997). *शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्त्व*. जयपुर, भारत: राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी.
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (2000). *विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा*. मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, भारत: रा.शै.अ.प्र.प.
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (2006). *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, भारत: रा.शै.अ.प्र.प.
- रुहेला, सत्यपाल (1999). *भारतीय शिक्षा का समाजशास्त्र*. जयपुर, भारत: राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी.
- रॉबर्ट्स, पीटर (2000). *एजुकेशन, लिटरेसी एण्ड ह्यूमनाइज़ेशन*. यू.एस.ए.: बरजिन एण्ड गारवे
- विश्वंभर (2006, जून). शिक्षा में निजीकरण का सवाल. *शिक्षा विमर्श*, *7*(3), 3.
- श्रीवास्तव, डी. एन. (2000). *अनुसन्धान विधियाँ*. आगरा, भारत: साहित्य प्रकाशन.
- सक्सेना, साधना (2000). *शिक्षा और जन आंदोलन*. दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी.

- सद्गोपाल, अनिल (2000). *शिक्षा में बदलाव का सवालः सामाजिक अनुभव से नीति तक*. नई दिल्ली, भारत: ग्रंथ शिल्पी.
- सद्गोपाल, अनिल (2003, मार्च 15). यहाँ से आना चाहिए शिक्षा के लिए पैसा – प्रतिसंवाद. *राष्ट्रीय सहारा दैनिक*, पृ. 9.
- सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ. पी. (2004). *शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी*. आगरा, भारत: विनोद पुस्तक मंदिर.
- होल्ट, जॉन (2000). *कैसे असफल होते हैं बच्चे?* (निर्मला जोशी, अनु.). दिल्ली, भारत: प्रेमनाथ एण्ड सन्स. (मूल कार्य प्रकाशित 1964).

परिशिष्ट

परिशिष्ट 1

जाँच हेतु शिक्षाविदों को भेजी गई अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची का प्रारूप

'अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची'

शोध के उद्देश्य

1. पाओलो फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों के प्रभाव का विश्लेषण करना।
2. पाओलो फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों के अंतर्गत शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण व विश्लेषण करना।
3. पाओलो फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों में निहित शैक्षिक पद्धति अथवा पद्धतियों की पहचान व विश्लेषण करना।
4. भारत में समकालीन सामाजिक परिस्थितियों और शिक्षा की अंतर्क्रियात्मकता का विश्लेषण करना।
5. भारत में समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों और शिक्षा के सम्बन्ध का विश्लेषण करना।
6. भारत में समकालीन आर्थिक परिस्थितियों और शिक्षा की आबन्धकता का विश्लेषण करना।
7. समकालीन भारतीय सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियों के बरक्स पाओलो फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों का विश्लेषण करना।

प्रश्नावली

अधोरचित प्रश्नावली का निर्माण स्नातक व परास्नातक शिक्षक-शिक्षा से जुड़े विभिन्न शिक्षाविदों से बातचीत के ज़रिए समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य में पाओलो फ्रेरे के शैक्षिक विचारों पर सम्यक दृष्टि प्राप्त करने हेतु किया गया है।

निर्देश

1. अधोरचित प्रश्नावली के प्रत्येक प्रश्न का सम्बन्ध शोध के जिस उद्देश्य व विषयवस्तु से है, उसे प्रत्येक प्रश्न के समक्ष लिख दिया गया है; और उसके सम्बन्ध में 5 बिन्दुओं वाली दर मापनी भी दी गई है।
2. यदि, आप प्रश्नावली के प्रश्न विशेष और शोध के संबंधित उद्देश्य से पूर्णत: सहमत हैं, तो दर मापनी पर बिन्दु 5 का चयन कर सकते हैं अथवा बिन्दु 4 (सहमत), बिन्दु 3 (अनिश्चित), बिन्दु 2 (असहमत) या बिन्दु 1 (पूर्णत: असहमत) का चुनाव कर सकते हैं। प्रश्नावली के प्रत्येक प्रश्न विशेष व शोध की संबंधित विषयवस्तु के संदर्भ में भी इसी प्रक्रिया का अनुपालन किया जा सकता है।
3. यदि, शोध के उद्देश्य व विषयवस्तु विशेष के संदर्भ में दर मापनी पर आपके द्वारा बिन्दु 5 (पूर्णत: सहमत) के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया अपने चयन के पक्ष में कारण भी दीजिए, ताकि प्रश्न की संरचना को ठीक या और बेहतर किया जा सके।

प्रश्न

1. फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर तत्कालीन परिस्थितियों का काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी दृष्टि में वे कौन सी सामाजिक, राजनीतिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ थीं, जिनके इर्द-गिर्द फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने आकार लिया?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 1	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : फ्रेरे की तत्कालीन परिस्थितियाँ और फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

2. यदि, फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन को ध्यान में रखा जाए, तो आपकी दृष्टि में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं; और इन उद्देश्यों की प्राप्ति की क्या पद्धति या पद्धतियाँ होंगी?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 2 व 3	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन और शिक्षा के उद्देश्य व पद्धति/ पद्धतियाँ	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

3. फ़्रेरे के शिक्षा-दर्शन अथवा शैक्षिक विचारों की भारतीय शिक्षा व्यवस्था अथवा भारतीय शैक्षिक संदर्भ में प्रासंगिकता पर आपका क्या मत है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 1, 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार और भारत की समकालीन परिस्थितियाँ	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

4. फ्रेरे ने जिन आधुनिक उत्पादन की स्थितियों की चर्चा की है, वे शिक्षा से किस प्रकार जुड़ी हुई हैं?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : आधुनिक परिस्थितियाँ और शिक्षा का सम्बन्ध	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

5. भारत में शिक्षा के संदर्भ में 'उत्पीड़ित और उत्पीड़क' किसको माना जाना चाहिए?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और शैक्षिक वर्चस्व व अपवंचन	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

6. भारत में शिक्षा का सभी तक पहुँच न बना पाने के पीछे आप की नज़र में क्या प्रमुख कारण रहे हैं? क्या फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन इनके निदान में हमारी सहायता कर सकता है? यदि हाँ, तो किस प्रकार?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 1, 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : फ़्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार, समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और शिक्षा की पहुँच	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

7. शिक्षा को व्यवस्थित करने की बात की जाती है। यदि, भारत के लम्बे औपनिवेशिक इतिहास को ध्यान में रखा जाए, तो ऐसे में अपवंचितों की शिक्षा को किस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, व 6	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और अपवंचितों की शैक्षिक स्थिति	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

8. पाओलो फ्रेरे 'स्वतंत्रता के भय' की बात उठाते रहे हैं। भारतीय समाज; विशेषकर शिक्षा के संदर्भ में आप छात्रों, माता-पिता और शिक्षा नियोजकों, शिक्षा व्यवस्थापकों या अध्यापकों में 'स्वतंत्रता के भय' को किस रूप में देखते हैं?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय शैक्षिक परिस्थितियों में 'स्वतन्त्रता का भय'	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

9. फ्रेरे को कई दफ़ा शैक्षणिक कार्यक्रमों में विवेकीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों में 'विध्वंसक मतांधता' के डर का सामना भी करना पड़ा। क्या शिक्षा के संदर्भ में 'विवेकीकरण' अथवा आलोचनात्मक चेतना-जागृति का प्रयास विध्वंस अथवा मतांधता की ओर भी ले जा सकता है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 1, 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : फ्रेरे के शैक्षिक विचार और समकालीन परिस्थितियों में शिक्षा में विवेकीकरण प्रक्रिया की दिशा	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

10. शिक्षा और साक्षरता दो अलग-अलग मामले हैं, जैसा कि फ्रेरे के दर्शन में भी स्पष्ट होता है और भारत की शैक्षणिक स्थिति में भी। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के मामले में आप क्या भिन्नता पाते/ पाती हैं; और भारत में इसे प्राय: जो पैसे की कमी से जोड़ा जाता है, इस पर आपका क्या मत है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक परिस्थितियाँ और शिक्षा	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

11. कुपोषण, भूख, व गरीबी को शिक्षा पाने के मार्ग में बड़ी बाधाओं के रूप में गिनाया जाता है। भारतीय स्थिति के संदर्भ में यह बात किस स्तर तक सत्य मानी जा सकती है? कृपया, बताइए।

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और शैक्षिक बाधाएँ	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

12. फ़्रेरे का शिक्षा-दर्शन 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' से सम्बद्ध माना जाता है। भारत में आप 'स्थापित संस्कृति' के बरक्स 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को किस रूप में देखते/ देखती हैं?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक सुधार	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

13. यदि, 'स्थापित संस्कृति' और 'प्रति संस्कृति के निर्माण' को भारतीय शिक्षा से जोड़कर देखें, तो आप भारत की वर्तमान परिस्थितियों में इसे किस अवस्था या स्तर पर पाते/ पाती हैं?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय शैक्षिक स्थिति	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

14. फ्रेरे का मानना था कि "शिक्षा राजनीति है; व जिस प्रकार राजनीति वर्गीय है, शिक्षा भी है"। भारत के सम्बन्ध में इस पर आपका क्या मत है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 5 व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : भारतीय राजनीतिक स्थिति और शिक्षा का सम्बन्ध	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

15. आप की दृष्टि में भारत की शैक्षिक प्रणाली किस प्रकार के नागरिक तैयार कर रही है? क्या फ्रेरे का दर्शन इस संदर्भ में अपनी सार्थक भूमिका निभा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और शिक्षा	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

16. फ्रेरे विद्यालयों को 'जिज्ञासा के बंध्यकरण' के सम्बन्ध में भी देखते हैं। इस संदर्भ में भारत के विद्यालयों की स्थिति पर आपका क्या विचार है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय शैक्षिक स्थिति	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

17. ऐसा क्यों है कि भारत में विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों को चलाए जाने के पश्चात् भी शिक्षा सभी तक पहुँच बनाने के आसपास ही रही है?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय शैक्षिक स्थिति	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

18. भारत की सामाजिक स्थिति को यदि ध्यान में रखा जाए, तो यह 'कोठारी आयोग' की 'समान शिक्षा-प्रणाली' अथवा 'पड़ोसी विद्यालय' की अवधारणा के मार्ग में क्या चुनौती पेश करती है? फ्रेरे के शिक्षा सम्बन्धी विचार इस चुनौती से निपटने में किस तरह सहायता कर सकते हैं?

शोध के उद्देश्य : उद्देश्य संख्या 4, 5, 6, व 7	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	
शोध की विषयवस्तु : समकालीन भारतीय परिस्थितियाँ और शैक्षिक चुनौतियाँ व सुधार	
दर मापनी (1) पूर्णत: असहमत (2) असहमत (3) अनिश्चित (4) सहमत (5) पूर्णत: सहमत	
कारण (यदि, दर मापनी पर बिन्दु 5 – पूर्णत: सहमत के अतिरिक्त किसी और बिन्दु का चुनाव किया जाता है, तो कृपया कारण भी बताइए)	

हस्ताक्षर :

नाम :